वार्षिकांक 9

वर्ष 2016–17

कृषि किरण

भाकृअनुप–केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान
करनाल–132 001 (हरियाणा)

हिन्दी पखवाड़ा
हिन्दी
पखवाड़ा

हिन्दी पखवाड़ा
हिन्दी
पखवाड़ा

हिन्दी पखवाड़ा
हिन्दी
पखवाड़ा

हिन्दी पखवाड़ा
हिन्दी
पखवाड़ा

हिन्दी पखवाड़ा
हिन्दी
पखवाड़ा

हिन्दी पखवाड़ा
हिन्दी
पखवाड़ा

वार्षिकांक 9

वर्ष 2016-17

कृषि किरण

भाकृअनुप-केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान
करनाल-132 001 (हरियाणा)

संपादक मंडल

संरक्षक एवं अध्यक्ष

प्रबोध चन्द्र शर्मा (निदेशक)

संपादक

राजेन्द्र कुमार यादव (प्रधान वैज्ञानिक)
रामेश्वर लाल मीणा (प्रधान वैज्ञानिक)
गजेन्द्र (वैज्ञानिक)

सदस्य

मदन सिंह
सुनील कुमार त्यागी
अंशुमान सिंह

आवश्यक नोट

इस अंक में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों/आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी है।

प्रकाशक :

निदेशक, भाकृअनुप–केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान करनाल–132 001
दूरभाषः 91–184229501, ई–मेलः director.cssri@icar.gov.in, वेबसाईट : www.cssri.org

मुद्रक :

एरोन मीडिया
यू.जी. 17, सुपर मॉल, सैक्टर–12, करनाल, हरियाणा, भारत
मो. 0184–4043026, 98964–33225
ईमेल : aaronmedia1@gmail.com

प्राक्कथन

कृषि जोत के कुल 142 मिलियन हैक्टर क्षेत्रफल से देश की लगातार बढती जनसंख्या को आवश्यक भोजन उपलब्ध करवाना अत्यन्त चुनौतीपूर्ण कार्य है। जलवायु परिवर्तन की स्थिति में सीमित प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के साथ उत्तरोतर फसल उत्पादन बढाना देश के कृषि वैज्ञानिकों, नीति निर्धारकों व किसानों के लिए अति गंभीर विषय है। जलवायु परिवर्तन की स्थिति में उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों का कुशल उपयोग करके हम खाद्यान्न उत्पादन को बढा सकते हैं तथा खाद्यान्न की कमी से निजात पा सकते हैं। देश का लगभग 6.74 मिलियन हैक्टर क्षेत्रफल मृदा लवणता व क्षारीयता से प्रभावित है इसके साथ ही विभिन्न प्रान्तों में 32–84 प्रतिशत भूजल भी निम्न गुणवत्ता का है। इन लवण प्रभावित संसाधनों के सुधार एवं समुचित उपयोग हेतु विकसित तकनीकियों द्वारा लगभग 2.14 मिलियन हैक्टर लवणग्रस्त मृदा का सुधार कर लगभग 16–17 मिलियन टन अतिरिक्त खाद्यान्न उत्पन्न करने में सफलता प्राप्त की है। लवणग्रस्त मृदाओं एवं निम्न गुणवत्ता जल के सुधार एवं प्रबंधन के साथ–साथ किसानों की उत्पादन लागत कम करने व लाभ बढ़ाने संबंधी विभिन्न आयामों, बदलते पर्यावरण के अंतर्गत संसाधनों के संरक्षण व उनके दैनिक जीवन में सुधार आदि की जानकारी उपलब्ध करवाने में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के संस्थान व कृषि विश्वविद्यालयों के कृषि वैज्ञानिक व विषय विशेषज्ञ विभिन्न परिस्थितियों में कुशल मार्गदर्शन प्रदान कर रहे हैं।

इसी दिशा में कृषि व्यवसाय को लाभप्रद बनाने व किसानों का जीवन स्तर बढाने संबंधी जानकारी को विभिन्न आलेखों के रूप में किसानों की अपनी व सरल भाषा में संकलन कर कृषि किरण के वार्षिकांक 9 में प्रकाशित किया जा रहा है।

पिछले पाँच दशकों में संस्थान द्वारा विकसित तकनीकियाँ किसानों में काफी लोकप्रिय हुई है। इसका एक मुख्य कारण संस्थान द्वारा अपनी तकनीकियों का सरल भाषा में प्रचार प्रसार करना है। कृषि किरण पत्रिका इसी दिशा में संस्थान का एक महत्वपूर्ण कदम है। इसी श्रृंखला में केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, कृषि किरण पत्रिका का वार्षिकांक 9 वर्ष 2016–17 प्रकाशित कर रहा है।

मैं उन सभी वैज्ञानिकों, विशेषज्ञों तथा संस्थानों का हार्दिक आभार व्यक्त करता हूँ जिनके अनुसंधान कार्यों एवं अनुभवों को इस पत्रिका में प्रकाशित किया गया है। मैं आशा करता हूँ कि इस पत्रिका में प्रकाशित सूचना के माध्यम से पाठकों को कृषि संबंधी अनुसंधान कार्यों तथा अन्य ज्ञानवर्धक जानकारी प्राप्त होगी। मैं संपादक मण्डल के सभी सदस्यों को राष्ट्रभाषा में उनके इस सराहनीय प्रयास के लिए हार्दिक बधाई देता हूँ और पत्रिका में वांछित सुधारों हेतु पाठकों की ओर से तार्किक सुझावों/टिप्पणियों का स्वागत करते हुये कृषि किरण के इस अंक की सफलता की कामना करता हूँ।

(प्रबोध चन्द्र शर्मा)

निदेशक

भाकृअनुप–केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान

करनाल

संपादकीय

भाकृअनुप–केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान करनाल पिछले पाँच दशकों से लवणग्रस्त मृदा एवं निम्न गुणवत्ता जल के सुधार एवं कृषि में समुचित उपयोग कर पूरी प्रतिबद्धता के साथ शोध कार्य कर रहा है। बदलते पर्यावरण की स्थिति में सीमित प्राकृतिक संसाधनों के समुचित उपयोग को ज्यादा चुनौतीपूर्ण बना दिया है। संस्थान ने इस दिशा में अपने अनुसंधान कार्यों को आगे बढाया है तथा इन लवणग्रस्त संसाधनों के कुशलतम उपयोग संबंधी तकनीकियाँ विकसित की है जिन्हें अपनाकर किसान अधिक लाभ कमा सकते हैं। संस्थान के वैज्ञानिकों ने विभिन्न विषयों के विशेषज्ञों तथा किसानों के साथ कार्य करके खेती को अधिक लाभदायक बनाने की दिशा में भी कार्य आरम्भ किया हुआ है। कृषि संबंधी सभी जानकारियों व क्रियाओं को कृषि किरण के वार्षिकांक 9 में सरल हिन्दी भाषा में संकलित कर प्रकाशित करना इसी दिशा में संपादक मंडल का एक प्रयास है। पत्रिका की विषय वस्तु एवं भाषा किसानों, कृषि प्रसार अधिकारियों तथा कृषि विकास से संबंधित कर्मचारियों की आवश्यकताओं के अनुरूप है।

भाकृअनुप–केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान तथा अन्य संस्थाओं के कृषि वैज्ञानिकों, विषय विशेषज्ञों और लेखकों के अपेक्षित सहयोग से वैज्ञानिक एवं तकनीकी लेख और ज्ञानवर्धक साम्रगी इस अंक में प्रकाशित की गई है। हम सभी लेखकों का आभार व्यक्त करते हैं तथा उनके निरन्तर सहयोग की अपेक्षा भी करते हैं। हम संस्थान के निदेशक डा॰ प्रबोध चन्द्र शर्मा के आभारी हैं जिनके कुशल मार्गदर्शन व प्रोत्साहन से कृषि किरण के 9वें अंक का सफल प्रकाशन किया जा रहा है।

हम आशा करते हैं कि कृषि किरण के वार्षिकांक 9 के प्रकाशन का हमारा प्रयास किसानों, कृषि प्रसार कार्यकर्ताओं व संबंधित पाठकों के लिए उपयोगी होगा।

संपादक मंडल

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	आलेख	पृष्ठ संख्या
1	**फसलों के कीट प्रबंधन में फेरोमोन ट्रैप का महत्त्व** प्रदीप कुमार, एस॰के॰ तोमर एवं स्वरूप कुमार	1
2	**कृषि जल की समस्या के उचित समाधान के लिए जल संरक्षण अपनाएं** संजय कुमार एवं नरेन्द्र कुमार	4
3	**दुधारू पशुओं का आहार प्रबंधन** रामावतार शर्मा एवं कैलाश चन्द्र शर्मा	9
4	**फसलों में यांत्रिक विधियों द्वारा खरपतवार नियंत्रण के आधुनिक यंत्र** नरेन्द्र सिंह चंदेल, अभिजीत खड़तकर एवं हिमांशु त्रिपाठी	12
5	**कृषि में महिलाओं द्वारा भूमि की तैयारी और बुवाई के लिए हस्त संचालित यंत्र** अभिजीत खड़तकर, राहुल पोद्यार एवं ए॰पी॰ मगर	15
6	**फसलोत्पादन में उचित जिंक प्रबंधन का महत्त्व** बी॰एल॰ मीणा, आर॰के॰ फगोडिया, आर॰एल॰ मीणा, प्रवीण कुमार, अश्वनी कुमार, एम॰जे॰ कलेढोणकर एवं कैलाश प्रजापत	18
7	**मृदाओं में सुक्ष्म पोषक तत्वों की कमी एवं सुधार के उपाय** कैलाश प्रजापत, गोपाल लाल चौधरी, राजपाल मीना, राम किशोर फगोडिया, बाबू लाल मीना, अरविन्द कुमार, राजेश कुमार मीना एवं अश्वनी कुमार	24
8	**महानगरीय ठोस अपशिष्ट पदार्थों से कम्पोस्ट बनाने की सस्ती एवं टिकाऊ पद्धति** यशपाल सिंह, संजय अरोड़ा, विनय कुमार मिश्र, हिमांशु दीक्षित एवं रविन्द्र कुमार गुप्ता	30
9	**टिकाऊ कृषि उत्पादन के लिए उचित नाइट्रोजन प्रबंधन** राम किशोर फगोडिया, बाबू लाल मीना, कैलाश प्रजापत, राजेश कुमार मीना, अरिजित बर्मन एवं मनीष कुमार	33
10	**धान की सीधी बिजाई : बदलते पर्यावरण परिवेश में उत्तम प्रौधोगिकी** राजेश कुमार मीना, राम किशोर फगोडिया, बाबू लाल मीना एवं कैलाश प्रजापत	39
11	**किसानों की आस–देसी कपास** इन्दीवर प्रसाद, अनिल आर॰ चिंचमलातपुरे, श्रवण कुमार, डेविड कैमस एवं सागर विभुते	43
12	**उपसतही जलनिकास – लवणीय काली मृदा में सुधार हेतु कारगर तकनीक** अनिल आर॰ चिंचमलातपुरे, सागर विभुते, संजय कड एवं एस॰के॰ कामरा	48
13	**यू टी एफ आई तकनीक द्वारा भूजल पुनर्भरण एवं इसका प्रभाव** विनय कुमार मिश्र, छेदी लाल वर्मा, सुनील कुमार झा, मनीष पाण्डेय, नवनीत शर्मा एवं पाल पेल्बिक	55

14 **हरियाणा में उपसतही जलनिकास प्रणाली के माध्यम से लवणीय मृदा के सुधार का आर्थिक विश्लेषण** 58

राजू आर॰, थिम्माप्पा के॰, प्रवीन कुमार, सत्येन्द्र कुमार, ए॰एल॰ पठान एवं कैलाश प्रजापत

15 **मीठी मक्का की खेती की उत्पादन तकनीक** 61

दिव्या चौहान, दिलीप सिंह एवं एस॰एस॰ शर्मा

16 **गन्ने की फसल और सूखा तनाव – प्रभाव तथा बचाव हेतु तकनीकियाँ** 65

पूजा, रविंदर कुमार, मेहर चंद, अश्वनी कुमार एवं नीरज कुलश्रेष्ठ

17 **लवण सहिष्णुता में द्वितीयक चयापचयों (सेकण्डरी मेटाबोलाइट्स) की भूमिका** 70

चारुलता, गुरप्रीत कौर, अनीता मान, अश्वनी कुमार, जोगेंद्र सिंह, अरविंद कुमार एवं सतीश कुमार सनवाल

18 **सुधरी हुई ऊसर भूमि में धान–गेहूँ फसल प्रणाली में फव्वारा सिंचाई द्वारा पानी एवं नाइट्रोजन की बचत** 75

रणबीर सिंह एवं राजेन्द्र कुमार यादव

19 **जलवायु परिवर्तन के परिदृश्य में "जीवाणु खाद" की भूमिका** 80

प्रियंका चन्द्रा, रिंकी, वनिता पांडे, कैलाश प्रजापत, पारुल सुन्धा एवं आर॰के॰ यादव

20 **नगरपालिका ठोस अपशिष्ट प्रबंधन : चुनौतियां एवं उपाय** 86

पारुल सुन्धा, निर्मलेन्दू बसाक, प्रियंका चन्द्रा, गजेन्द्र, रमा पाल एवं अरविन्द कुमार राय

21 **जल संकट समस्या का समाधान** 90

कवि अवध बिहारी अवध

22 **किसानों के विकास हेतु एक अनूठी पहल : मेरा गाँव मेरा गौरव** 92

चन्द्रशेखर सिंह, विनय कुमार मिश्र, छेदी लाल वर्मा, सुनील कुमार झा एवं टी दामोदरन

23 **राजभाषा हिन्दी–व्यापक प्रयोग, प्रोत्साहन व प्रसार के मूल मुद्दे** 95

मीना लूथरा

24 **योग एवं स्वास्थ्य** 98

अक्षय कुमार

25 **कविताएँ**

संकल्प हठ : यशपाल सिंह 105

स्वच्छता स्वार्थ सिद्धि योग : छेदी लाल वर्मा 106

26 **संस्थान के कृषि अनुसंधान एवं अन्य क्रियाकलापों में राजभाषा हिन्दी** 109

अनिता मान, प्रवेन्द्र श्योरान, राकेश बनियाल एवं अश्वनी कुमार

फसलों के कीट प्रबंधन में फेरोमोन ट्रैप का महत्त्व

प्रदीप कुमार, एस॰के॰ तोमर एवं स्वरूप कुमार[1]
कृषि विज्ञान केन्द्र, सोहना, सिद्धार्थनगर, नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रोद्यौगिकी विश्वविद्यालय, फैजाबाद (उत्तर प्रदेश)
[1]पौध संरक्षण संगरोध एवं भंडारण निदेशालय, फरीदाबाद (हरियाणा)
E-mail : drpardeepviro@gmail.com

'फेरोमोन' शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम कार्लसन तथा वुवेनेन्ट द्वारा किसी जीव से बाह्य रूप में स्रावित ऐसे रासायनिक पदार्थ के लिए किया गया था जो अपनी ही जाति की कार्यिकी या व्यवहार को प्रभावित करता है। जैव मण्डल में उपस्थित सभी जीव जन्तुओं और कीटों की बहुत सी व्यवहारिक क्रियाएं जैसे गति, समागम तथा एकत्रीकरण आदि होती है और ये क्रियाएं मुख्यतः एक प्रकार के रसायनों द्वारा प्रभावित होती है। ये वाष्पशील रसायन जीवों द्वारा वातावरण में छोड़े जाते हैं, जिससे उसी अथवा संबंधित जाति के दूसरे जीवों पर रसायन का प्रभाव परिलक्षित होता है। इन रसायनों को फेरोमोन कहते हैं, जिन्हें अन्तरजातिय संचार माध्यम के लिए प्रयुक्त किया जाता है। संचार के लिए संकेत भेजने और उसे प्राप्त करने वाले माध्यम की आवश्यकता होती है, जिससे जीव इच्छित अनुक्रिया प्रदर्शित कर सके। अतः आजकल इसका प्रयोग मुख्यतः कीट नियंत्रण में होता है।

मादक (सेक्स) फेरोमोनः कीटों में फेरोमोन विशेष रूप से लेपिडोप्टेरा गण के कीट प्रजाति के एक लिंग द्वारा छोड़ा जाता है तथा इनके प्रभाव से उसी प्रजाति के दूसरे लिंग में व्यवहारिक परिवर्तन होता है, जो समागम को सुगम बनाते हैं। कीट प्रबंधन के लिए प्रौढ़ मादा कीट द्वारा मोचित फेरोमोन को कृत्रिम रूप से तैयार कर चारा (ल्यूर) के रूप में ट्रैप पर लगाया जाता है। इस ल्यूर से धीरे–धीरे एक विशेष सुगंध वातावरण में फैलती है जिस पर मादा जाति के प्रौढ़ नर कीट आकर्षित होते है और अंततः ट्रैप (पाश) में फंस जाते हैं। शोध द्वारा अब तक 150 कीट प्रजातियों में मादा फेरोमोन तथा 50 कीट प्रजातियों में नर फेरोमोन की पहचान कर ली गई है। इन फेरोमोन का प्रयोग विभिन्न प्रजातियों के कीटों के प्रबंधन में सफलतापूर्वक किया जा रहा है।

फेरोमोन ट्रैप एक बहुत साधारण उपकरण होता है जिसके ऊपरी भाग में एक प्लास्टिक की गोल प्लेट तथा निचली सतह पर

खूटियां बनी होती है, बीच की खूंटी में मादा कीट की कृत्रिम रूप से तैयार गंध फेरोमोन में डूबा हुआ रबर का टुकड़ा फंसा दिया जाता है, जिसे फेरोमोन ल्यूर कहते है। कीट की जाति विशेष के लिए निर्मित इस ल्यूर की कीमत 10–15 रुपये प्रति ल्यूर होती है। उपकरण के नीचे के भाग में प्लास्टिक की एक कीप पर तीन खुंटियां ऊपर की ओर लगी होती है जो प्लास्टिक की गोल प्लेट में बनी खूंटियों में फिट की जाती है तथा नीचे की ओर डेढ फीट लम्बी प्लास्टिक की थैली लगी होती है जो नीचे से बन्द होती है, इसे गोल प्लेट पर बने हैन्डिल के डण्डे पर बांध दिया जाता है। ल्यूर एल्यूमिनियम की बनी पाउच में बंद होती है।

फेरोमोन ट्रैप का समेकित कीट प्रबंधन (आई॰पी॰एम॰) में उपयोगः आई॰पी॰एम॰ पद्धति में फेरोमोन का उपयोग बड़े पैमाने पर किया जा रहा है जिसके अन्तर्गत कीट सर्वेक्षण एवं नियंत्रण से उनकी संख्या में कमी लाई जाती है।

कीट सर्वेक्षणः फसल में कीट की प्रारंभिक उपस्थिति की निगरानी के लिए फेरोमोन ट्रैप का प्रयोग किया जाता है और इससे भविष्य में कीट सघनता का अनुमान भी लगाया जा सकता है। सर्वेक्षण के लिए लगाये गये ट्रेप से निम्न सूचनाएं प्राप्त की जाती है :

- प्रारम्भिक स्तर पर कीटग्रसित क्षेत्रों का ज्ञान।
- कीट का विशेष घनत्व।
- कीटों की संख्या में वृद्धि अथवा कमी का ज्ञान।
- निकट भविष्य में कीट की सघनता का अनुमान।
- कीट के प्रबंधन हेतु उपयुक्त समय एवं साधन का चयन।

कीट सर्वेक्षण हेतु एक एकड़ के लिए 2 ट्रैप पर्याप्त होते हैं जिन्हें 30X30 मीटर की दूरी पर लगाया जाता है।

कीट प्रबंधनः कीट प्रबंधन हेतु समय एवं साधन के चयन में इन सूचनाओं का बहुत महत्त्व है। जैसे उपरोक्त सूचनाओं के आधार पर परजीवियों को खेतों में छोड़ने के लिए उपयुक्त समय का निर्धारण किया जाता है तथा साथ ही कीट की संवेदी अवस्था पर जैविक/रासायनिक कीटनाशक छिड़काव के समय को नियोजित किया जाता है तथा कीटनाशकों की मात्रा में कमी की जा सकती है।

शल्क पंखीय (लेपिडोप्टेरा) जाति के कीटों के नियंत्रण के लिए फेरोमोन ट्रैप में प्रौढ़ नर कीट फंसते हैं जबकि पौधों की क्षति लारवा (सूंड़ी) के द्वारा होती है इन दोनों अवस्थाओं में एक सप्ताह का अन्तर हो सकता है। शल्क पंखीय जाति के प्रौढ कीट प्रायः पौधें को नुकसान नहीं पहुँचाते हैं, नर–मादा प्रौढ कीटों का कार्य संगम करके अपनी जाति की वंशवृद्धि करना होता है। व्यापक पैमाने पर फेरोमोन ट्रैप उपयोग करने का उद्देश्य है, प्रौढ़ नर कीटों को अधिक संख्या में ट्रैप करके मारना, जिससे नर–मादा में संगम की प्रक्रिया न हो तथा इनकी वंशवृद्धि को रोककर भविष्य में इनके लारवा/सूंड़ियों द्वारा फसल को क्षति से बचाया जा सके।

फसल की ऊँचाई अनुसार ट्रैप को समय–समय पर खिसका कर ऊपर बांध देना चाहिए जिससे चारा (ल्यूर) से सुगंध हवा में अच्छी तरह फैल सके। एक हैक्टर खेत के लिए 20 फेरोमोन ट्रैप मेड़ से 10 मीटर अन्दर से शुरू करके 20X25 मीटर की दूरी पर लगाये जाते है। कीटों के जीवन चक्र को ध्यान में रखते हुए फसल में ट्रैप लगाने चाहिए।

फेरोमोन ल्यूर अलग–अलग मात्रा में उपलब्ध है। 3 मि.ग्रा. वाले फेरोमोन ल्यूर को 15 दिन के अंतराल पर एवं 5 मि.ग्रा. फेरोमोन ल्यूर को एक महीने के अंतराल पर बदलना चाहिए। यह ध्यान रहे कि कीट की प्रजाति के अनुसार ही ल्यूर का चयन किया जाए। फेरोमोन ल्यूर की गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए पहली बार दो या तीन निर्माता फर्मों के ल्यूर एक साथ निश्चित क्रम में लगाने चाहिए। एक सप्ताह बाद ट्रैप का निरीक्षण करके देख लें कि निर्माता फर्म के ट्रैप में अधिक कीट फंसे हैं, इसकी जाँच के पश्चात उसी फर्म के ल्यूर का प्रयोग करें जिसमें कीट अधिक संख्या में फंसे हो।

यदि फेरोमोन ट्रैप के माध्यम से नाशीजीवों का प्रबंधन किया जाय तो इससे प्रति हैक्टर लगभग 600–800 रुपये खर्च आता है। फसल कटने पर ट्रैप को खेत से उतारकर अगली फसल में भी प्रयोग किया जा सकता है। जिससे नया ल्यूर ही खरीदने के लिए व्यय करना हो और आगामी फसल में खर्च कम होगा। फेरोमोन ल्यूर प्रजाति विशेष होता है तथा विषाक्त नहीं होता एवं लक्षित कीटों के अतिरिक्त शेष जीवधारियों एवं वातावरण के लिए सुरक्षित होता है।

इस तरह प्रारंभिक स्तर पर ही कीट की उपस्थिति का ज्ञान होने से रासायनिक उपचार कर कम लागत में कीट प्रबंधन किया जा सकता है जिससे खेत के लाभकारी कीटों का भी संरक्षण होगा और वातावरण एवं खाद्यान्न में विषाक्तता को रोका जा सकेगा।

फेरोमोन ल्यूर की उपलब्धता: वर्तमान में फेरोमोन ट्रैप देश में निर्मित किये जा रहे हैं जबकि पहले ल्यूर जापान, अमेरिका एवं इंग्लैंड से आयात किये जाते थे, जिनकी कीमत 8–10 रुपये प्रति ल्यूर है। एन.सी. लैबोरेटरी, पूणे एवं वी.आर.सी, लैबोरेटरी, मुंबई द्वारा ल्यूर निर्मित करने की स्वदेशी तकनीक विकसित कर ली गई है। परिणामस्वरूप भविष्य में ल्यूर के दामों में पर्याप्त कमी आयेगी और आई.पी.एम. के अन्तर्गत कीट प्रबंधन में फेरोमोन ट्रैप महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकेंगे। वर्तमान में निम्न प्रमुख कीटों के ल्यूर विक्रय हेतु बाजार में उपलब्ध है। कीट की प्रजाति को ध्यान में रखते हुए ल्यूर का चयन करना चाहिए। प्रौढ़ कीटों की उपस्थिति का आंकलन करते हुए फेरोमोन ट्रैप के उपयोग से इनका प्रबंधन सफलतापूर्वक किया जा सकता है।

चिपचिपाहटयुक्त पाश (स्टिकी ट्रैप): डेल्टा स्टिकी ट्रैप परतदार (लेमिनेटेड) कार्डबोर्ड के बने होते हैं जो 30 सेंमी. लम्बे व 52 सेंमी. चौड़े होते हैं जिन्हें बोर्ड पर दिये गये निर्देशों के अनुसार डेल्टा के आकार में मोड़कर तैयार किया जाता है। ट्रैप की भीतरी सतह पर लगभग 19X24 सेंमी. आकार का गोंद लगा कार्डबोर्ड लगाया जाता है, यह चिपचिपा पदार्थ नमी को सोख लेता है तथा सूखता नहीं है। स्टिकी ट्रैप का प्रयोग उड़ने वाले कीटों जैसे सफेद मक्खी, फल मक्खी, माहू आदि छोटे पतंगों की निगरानी/ट्रैप के लिए प्रयोग किया जाता है। सामान्य रूप से जब छोटे कीट पतंगे उड़ते हैं तो ये ट्रैप की गोंद लगी भीतरी सतह पर चिपक जाते हैं। साप्ताहिक रूप से इन फंसे कीटों का निरीक्षण कर कीट घनत्व का अनुमान लगाया जाता है इसके अतिरिक्त स्टिकी ट्रैप की भीतरी सतह पर बीच में प्रजाति विशेष के ल्यूर को गोंद पर चिपका कर इसे फेरोमोन ट्रैप के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। स्टिकी ट्रैप को फेरोमोन ट्रैप की भाँति बांस के डंडे पर फसल की सतह से एक फुट की ऊँचाई पर लगाकर प्रयोग किया जाता है।

इस प्रकार किसान कम लागत में वातावरण एवं जीवधारियों के लिए सुरक्षित इन फेरोमोन ट्रैप का उपयोग कर हानिकारक कीटों से अपनी फसल को बचा सकते है।

ध्यान देने योग्य बातें:

- विभिन्न प्रजातियों के फेरोमोन ल्यूर को एक साथ उपयोग नहीं करना चाहिए। एक प्रजाति के ल्यूर को लगाने के पश्चात् हाथ धोकर ही दूसरी ल्यूर लगानी चाहिए।
- ल्यूर को 15 दिन के अन्तराल पर बदलते रहना चाहिए।
- ट्रैप का साप्ताहिक निरीक्षण करके पकड़े गये कीटों की संख्या की समीक्षा करते रहें।
- ट्रैप निरीक्षण के समय यह सुनिश्चित कर लें कि ल्यूर यथास्थान लगा है अथवा नहीं।

ट्रैप में फंसे कीटों की संख्या के आधार पर, कीट प्रबंधन हेतु उपयुक्त साधनों अथवा परजीवी, परभक्षियों को खेत में छोड़ना, जैविक/रासायनिक कीटनाशकों का प्रयोग करना चाहिए।

समाप्त

⌘ वे जीत जाते हैं, जिन्हें यह विश्वास होता है कि वे जीत सकते है। ⌘

कृषि जल की समस्या के उचित समाधान के लिए जल संरक्षण अपनाएं

संजय कुमार एवं नरेन्द्र कुमार

कृषि अभियांत्रिकी एवं प्रौद्योगिकी महाविद्यालय
चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार (हरियाणा)
E-mail : sanjay7228@yahoo.com

हमारे देश की अर्थव्यवस्था कृषि पर आधारित है और कृषि जल पर निर्भर करती है। फसलों की भरपूर उपज के लिए उन्नत बीज व संतुलित खाद के अतिरिक्त अच्छी गुणवत्ता के सिंचाई जल की पर्याप्त मात्रा का सही समय पर उपलब्ध होना एक मूलभूत आवश्यकता है। एक किलोग्राम गेहूँ व धान पैदा करने के लिए क्रमशः 1000 एवं 3000 लीटर पानी की आवश्यकता पड़ती है। देश में तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या के भरणपोषण के लिए जल की बढ़ती मांग से अनेक प्रकार की समस्याओं से जूझना पड रहा है, जो भारतीय कृषि के लिए एक बहुत बड़ी चुनौती है। इन चुनौतियों का सामना करने के लिए हमें बेहतर जल संरक्षण व प्रबंधन की नई व उन्नत तकनीकों का सहारा लेना पड़ेगा। यह तभी संभव है जब हम मिलकर इस दिशा में सार्थक पहल करें और लगन के साथ मिट्टी और जल संरक्षण पर काम करें। निम्नलिखित पहलूओं पर ध्यान देकर हम जल संरक्षण कर, कृषि क्षेत्र में जल संबंधित समस्याओं से कुछ सीमा तक निजात पा सकते हैं।

1. वर्षा जल का समुचित संरक्षण

वर्षा जल का संग्रहण वर्तमान समय की सबसे बड़ी आवश्यकता है, इससे जल समस्या का स्थायी समाधान संभव है। यह एक कम मूल्य और पारिस्थितिकी अनुकूल विधि है जिसके द्वारा वर्षा जल एवं अतिरिक्त उपलब्ध जल को झीलों, तालाबों, कूओं व गड्ढ़ों में एकत्रित किया जा सकता है। पानी की प्रत्येक बूंद संरक्षित करने के लिए राजस्थान में वर्षा जल को भूमिगत टंकी में संग्रहित किया जाता है। शहरों में वर्षा का जल बहकर व्यर्थ चला जाता है या फिर वाष्पीकरण के कारण समाप्त हो जाता है ऐसे में भवनों में वर्षा जल संचयन तकनीक का प्रयोग जल प्रबंधन के लिए मील का पत्थर साबित हो सकता है। घर के आंगन व छतों पर होने वाली वर्षा के जल को हम टैंक व भूमिगत जल में डाल कर घर के आसपास जलमग्नता व आने वाली बाढ़ के खतरों को भी कम कर सकते हैं। खेतों को समतल कर किनारों पर बंध बनाने चाहिए ताकि वर्षा का जल खेतों में ही संरक्षित किया जा सके।

2. बारानी इलाकों में नमी संरक्षण

बारानी इलाके में खेती बरसात के पानी पर ही निर्भर होती है। इन इलाकों में भूमिगत पानी ज्यादातर खारा व बहुत गहरा है और बरसात भी काफी कम होती है। कुल वर्षा का 75–80 प्रतिशत जुलाई से सितम्बर में ही बरस जाता है। इसलिए यह जरुरी हो जाता है कि वर्षा जल का जमीन में संरक्षण किया जाए ताकि मिट्टी में अधिक समय तक नमी बनी रहे जिससे फसल की भरपूर पैदावार ली जा सके। बारानी इलाकों में नमी का संरक्षण करने वाली मशीनों का इस्तेमाल करना चाहिए जैसे जीरो टिल ड्रिल, रीज सीडर, लेजर लेवलर, हैपी सीडर आदि। इसके अतिरिक्त इन इलाकों में भरपूर फसल लेने के लिए निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना अति आवश्यक है।

- वर्षा से पहले गहरी जुताई करें और जुताई ढ़लान के आरपार (लंबरूप) हो ताकि वर्षा जल जहां गिरे वहीं इसका संरक्षण हो जाये। वर्षा के फालतू पानी को खेत के निचले भाग में पोखर या कुंड में इकट्ठा करें।
- कम समय में पकने वाली तथा सूखारोधी फसलों व किस्मों का चुनाव करके सही समय पर बिजाई करें। यदि सितम्बर माह में अच्छी बारिश हो जाए तो बाजरे के बाद चने की फसल ली जा सकती है।
- यदि भूमि की नमी 175 मि.मी. प्रति मीटर से अधिक हो तो जौ की बिजाई कर सकते हैं। सरसों व चने के लिए नमी 125–175 मि.मी. प्रति मीटर चाहिए। यदि नमी 100–125 मि.मी. हो तो सिर्फ तारामीरा की बिजाई करें।
- बारानी क्षेत्रों में आमतौर पर फसलें 45 सेंमी. की दूरी पर बीजने की सिफारिश की जाती है परन्तु रिजर सीडर द्वारा जुड़वां कतारों में 60 गुणा 30 सेंमी.की दूरी पर बोना लाभदायक होता है।

- सही समय पर निराई गुडाई द्वारा खरपतवार नियंत्रण करें। पहिए वाला कसोला इस्तेमाल करके अधिक लाभ उठाएं।
- खादों का संतुलित प्रयोग करें एवं पौधों की संख्या प्रति एकड़ रखें। यदि खड़ी फसल में सूखा आ जाए तो पौधों की संख्या घटाएं।

3. खेतों को समतल करना

खेत का ऊँचा नीचा होना फसल की उपज को बहुत प्रभावित करता है क्योंकि इनमें जल संरक्षण ठीक से नहीं हो पाता। ऐसे में हम भूमि को पुराने तरीकों से समतल करने की कोशिश करते हैं, जिससे भूमि सही ढंग से समतल नहीं होती और न ही आवश्यकतानुसार ढलान दे पाते हैं। परन्तु लेजर लेवलर एक ऐसा यंत्र है जिसके माध्यम से हम भूमि को समतल कर सकते हैं अथवा इच्छानुसार ढलान भी दे सकते हैं। लेजर लेवलर से समतल की हूई भूमि से उच्च सिंचाई जल दक्षता प्राप्त की जा सकती है और जल संरक्षण भी ठीक से किया जा सकता है। निम्नलिखित तालिका 1 में मृदा प्रकार के अनुसार क्यारी में कितना ढलान दिया जाये के बारे में बताया गया है।

तालिका 1: मृदा प्रकार के अनुसार क्यारी में ढलान की आवश्यकता

मृदा का प्रकार	क्यारी में ढ़लान (प्रतिशत)
भारी मिट्टी	0.05 – 0.20
दोमट मिट्टी	0.20 – 0.40
रेतीली मिट्टी	0.25 – 0.65

4. भूमि से वाष्पीकरण कम करना

खेतों में पलवार (मल्च) जैसे पौधों के अवशेष पत्तियां, पुआल, कूड़ा–करकट आदि का प्रयोग मिट्टी ढकने के लिए किया जाता है। इससे भूमि वर्षा की बूंदों की सीधी चोट व तेज हवा के प्रकोप से बचती है और भूमि की सतह से पानी के वाष्पीकरण को कम करती है जिससे भूमि में नमी बनी रहती है। प्रति हैक्टर 6 टन घास की पलवार बिछाने से मूंग, मोठ और ग्वार की डेढ़ से ढाई गुना तक पैदावार बढ जाती है। खरपतवार की पलवार से लोबिया की डेढ़ गुणा और बाजरा की सवा गुणा अधिक उपज प्राप्त होती है।

5. फसलों के अनुरूप सिंचाई की सही मात्रा व समय का चुनाव

मृदा में प्राप्य जल की कमी की पूर्ति के लिए सिंचाई की आवश्यकता होती है। सिंचाई के जल के समुचित प्रयोग के लिए यह जानना आवश्यक है कि सिंचाई कब की जाए। मृदा में प्राप्य जल का इतना ह्रास हो जाए कि प्राप्य जल की कमी के कारण पौधों की वृद्धि और उत्पादन घटने की संभावना होने लगे तो सिंचाई करना आवश्यक होता है। मृदा जलधारण क्षमता, फसल की अवस्था आदि बातें किसी फसल में सिंचाई निर्धारण में मुख्य भुमिका निभाती है। समय से पहले तथा आवश्यकता से अधिक सिंचाई करने से जल की बर्बादी होती है तथा देरी करने से पौधों की वृद्धि, उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इसलिए मृदा की दशा एवं गुणों के आधार पर या फिर मृदा में प्राप्य जल मात्रा की कमी या आर्द्रता प्रतिबल मापकर ही फसलों में सिंचाई की सही मात्रा व समय का चुनाव करना चाहिए।

6. फसल चक्र का चुनाव

भूमि में जल की उपलब्धता के अनुरूप फसल चक्र का चुनाव करना भी एक तरह से जल संरक्षण है। जल के अभाव वाले क्षेत्रों में ऐसी फसलें उगानी चाहिए जो प्राकृतिक रूप से कम पानी मांगती है। किसानों को धान और गेहूँ के बजाय मक्का, बेबी कॉर्न, कपास आदि फसलें लेनी चाहिए। साठी धान लगाने से बचना चाहिए। धान की मुख्य फसल जून के अन्तिम सप्ताह से पहले न लगाएं। वर्षा जल का अधिक भण्डारण धान के खेतों में ही करें। इसके लिए मेडों को 10–15 सें.मी. तक ऊँचा करें। फलदार वृक्षों की खेती करें और इन फसलों के लिए सतही सिंचाई की अपेक्षा टपका प्रणाली को अपनाएं।

7. फसल, मिट्टी व जल–धारा के अनुरूप सिंचाई का सही तरीका अपनाना

कम जल का प्रयोग करके अधिक भूमि को सिंचित करना भी जल संरक्षण का तरीका है। आज देश में नवीनतम सिंचाई प्रणालियां जैसे फव्वारा व टपका सिंचाई को अपनाने पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। फव्वारा व टपका सिंचाई प्रणाली पानी की उपलब्धता व फसल के आधार पर अपनायी जा सकती है। राज्य सरकारें भी इस प्रणाली पर विशेष ध्यान दे रही है। भविष्य की जल संबंधित मांग को देखते हुए यह अत्यन्त आवश्यक है कि किसान अधिक से अधिक नवीनतम सिंचाई के तरीकों को अपनाएं। निम्नलिखित तालिका 2 में विभिन्न सिंचाई प्रणालियों की दक्षता से यह स्पष्ट हो जाता है कि अगर हम पारंपरिक

तालिका 2: विभिन्न सिंचाई प्रणालियों की दक्षता

सिंचाई प्रणाली	सिंचाई की अनुमानित दक्षता (प्रतिशत)
परंपरागत सिंचाई	40
फव्वारा सिंचाई	70
टपका सिंचाई	90

सिंचाई प्रणाली की जगह आधुनिक सिंचाई प्रणाली (फव्वारा या टपका प्रणाली) का प्रयोग करें तो उपलब्ध जल से अधिक सिंचाई कर सकते हैं। अगर पारंपरिक (सतही) सिंचाई विधि का प्रयोग करना हो तो, गहरे रिसाव को कम करने के लिए, खेतों को मृदा प्रकार के अनुसार छोटे–छोटे भागों में बांटकर सिंचाई करनी चाहिए। इसके अलावा सतही सिंचाई में प्रयोग किए जा रहे कच्चे खालों एवं नालियों में लगभग 20–25 प्रतिशत पानी का गहरे रिसाव द्वारा नुकसान हो जाता है। अतः खालों एवं नालियों का उचित रखरखाव अत्यन्त आवश्यक है।

8. भूमिगत लवणीय पानी का संरक्षित उपयोग

भूमिगत लवणीय पानी को प्रयोग में लाना भी एक तरह से जल संरक्षण है। लेकिन इस जल का प्रयोग करते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना अति आवश्यक है।

- पलेवा गहरा करें यदि हो सके तो पलेवा दो बार करें। जहाँ तक संभव हो पलेवा नहर के पानी से करें।
- यदि भूमि क्लोराइड वाले नमक से ग्रस्त है तो फसलों में सामान्य भूमि की अपेक्षा उर्वरकों (विशेषकर फॉस्फोरस) की मात्रा 25 प्रतिशत बढ़ा दें।
- गोबर की खाद, कम्पोस्ट खाद ज्यादा से ज्यादा खेत में डाले और खेत में अच्छी तरह मिला दें।
- लवणीय पानी से सिंचाई हल्की व जल्दी–जल्दी करें।
- जहाँ अच्छे पानी की ज्यादा कमी हो वहाँ हमें एक नहरी : एक लवणीय (सिंचाई चक्र) को अपनाना चाहिए।
- नमक सहनशक्ति के आधार पर फसलों का वर्गीकरण तालिका 3 अनुसार किया जा सकता है।

9. भूमिगत क्षारीय व तैलीय पानी का संरक्षित उपयोग

लवणीय पानी की तरह, भूमिगत क्षारीय व तैलीय पानी को प्रयोग में लेते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना अति आवश्यक है।

- पानी की जांच विवरण तथा सिंचाई की संख्या के आधार पर जिप्सम की पूरी मात्रा भूमि में डालकर पानी की क्षारीयता (आर.एस.सी.) को नगण्य करें।
- यदि खेत पहले से कल्लर हो चुका है तो तैलीय पानी लगे खेत में रबी की फसल काटने के बाद तथा बरसात से पहले बारीक जिप्सम की पूरी मात्रा (मिट्टी परीक्षण आधार पर) खेत में एक बार बिखेर कर हल्की जुताई करें और मेड़ मजबूत बनाएं ताकि वर्षा का पूरा पानी खेत में समा जाये।
- अधिक पानी चाहने वाली फसलों (बरसीम, गन्ना, धान) में ऐसे पानी का प्रयोग न करें।
- मिट्टी संरचना के आधार पर तैलीय पानी का रबी फसलों (गेहूँ, सरसों, जौ) में प्रयोग करें।
- अगर नहर का पानी नहीं है तो ऐसे पानी के साथ केवल रबी मौसम में गेहूँ, सरसों व जौ उगाएँ और खरीफ में वर्षा आधारित फसल लें।
- जिस तैलीय पानी की ई.सी. 2–4 डेसीसीमन/मी. हो तो ऐसे पानी का उपयोग चिकनी भूमि (कले $\geq$ 30 प्रतिशत) में न करें तथा बाकी भूमि में सिर्फ रबी मौसम में गेहूँ, सरसों तथा जौ की फसल ले सकते हैं।
- जिन क्षेत्रों की वार्षिक वर्षा 250 मि.मी. से कम है वहाँ खरीफ मौसम में खेत खाली रखें या फिर बाजरा, ग्वार की फसल लें और रबी में गेहूँ की बजाए सरसों व जौ की फसल लें। जहाँ वर्षा 400 मि.मी. से ज्यादा है वहाँ क्षारीय पानी से खरीफ में ज्वार, बाजरा, ग्वार व कपास की फसलें जिप्सम डालकर उगाई जा सकती है।

तालिका 3: नमक सहनशक्ति के आधार पर फसलों का वर्गीकरण

संवदेनशील	मध्यम सहनशील	सहनशील
दलहन, मूंगफली, बरसीम, चना, धान, नींबू जाति के पौधे, आम, पपीता आदि।	बाजरा, ज्वार, मक्का, मटर बाकला, तम्बाकू, अनार, अमरूद आदि।	जौ, चुकन्दर, कपास, सरसों, गेहूँ, बेर, फालसा आदि।

- तैलीय पानी से सिंचित फसलों में नाइट्रोजन की 25 प्रतिशत, बीज की 20 प्रतिशत मात्रा बढ़ा दें तथा जस्ते की मात्रा दोगुनी डालें।
- जिस पानी में आर.एस.सी. न हो परन्तु एस.ए.आर. की मात्रा 15 से ज्यादा है तो एक पानी से सिंचित खेत में 2.5–5.0 कुण्टल/एकड़ जिप्सम डालने से खरीफ में कपास, बाजरा तथा ग्वार की फसल अच्छी होती है।
- यदि पानी में नाइट्रेट है तो सिंचाई की संख्या तथा नाइट्रेट की मात्रा के आधार पर फसल की नाइट्रोजन तथा पोटाश की मात्रा में कमी कर सकते हैं। (1 मि.ली. तुल्यांक नाइट्रेट–4 कि.ग्रा. नाइट्रोजन और 11.2 कि.ग्रा. पोटेशियम)।
- खरीफ की फसल रिजर सीडर से बोएँ वरना अधिक पानी खड़ा होने से फसल मर सकती है।

10. खेत में नमी संरक्षण के लिए उपयुक्त मशीनरी का चयन

अच्छी पैदावार के लिए मिट्टी में पर्याप्त मात्रा में नमी की मौजूदगी आवश्यक है। पर्याप्त नमी न होने पर अच्छी पैदावार लेना लगभग नामुमकिन है, खेतों में पानी की बढती आवश्यकता और कम हो रहे पानी के स्रोतों ने जल संरक्षण की महत्ता को भी बढ़ा दिया है। खेती में यंत्रीकरण के बढ़ते प्रचलन से पैदावार में बढ़ोतरी के साथ–साथ मिट्टी की उथल–पुथल भी बढ़ गई है जिसके कारण मिट्टी में मौजूद नमी में कमी आ जाती है जिसके कारण फसल की वृद्धि प्रभावित होती है फलस्वरूप पैदावार में कमी आ जाती है। बिजाई के समय, मिट्टी में पर्याप्त मात्रा में नमी, मशीन के कुशल उपयोग आदि बीज के जमने की प्रक्रिया के लिए अनिवार्य है। जिन क्षेत्रों में पानी का अभाव है, उनमें नमी का संरक्षण करने वाली मशीनें इस्तेमाल की जानी चाहिए। आज के युग में पानी के संरक्षण की महत्ता को देखते हुए ऐसी मशीनों का प्रचलन बढ़ा है जो पानी के संरक्षण को प्रोत्साहित करती है। खेतों के विभिन्न कार्यों के लिए नमी के संरक्षण को ध्यान में रखते हुए उपयुक्त मशीनरी का चुनाव करना चाहिए जैसे जीरो टिल ड्रिल, रीजर सीडर, लेजर लेवलर, हैपी सीडर आदि।

11. कन्टूर बंध व वेदिकाएं बनाना

जहाँ भूमि ऊंची–नीची व ढलान वाली होती है उन स्थानों पर पानी बह कर निचले क्षेत्रों की ओर चला जाता है। इस पानी को रोकने के लिए समान ऊंचाई पर छोटे–छोटे बांध बनाये जाते हैं जिससे फालतू पानी के बहाव में रुकावट आती है। 0–1 प्रतिशत ढाल के लिए बांधों की आपसी दूरी 1.05 मीटर, 1–1.5 प्रतिशत ढाल के लिए 1.20 मीटर और 2–3 प्रतिशत ढाल के लिए 1.50 मीटर रखते हैं। बांध 0.6 से 0.75 मीटर ऊंचे बनाने चाहिए तथा इनकी ऊपरी सतह 0.45 मीटर तक चौड़ी और बाजू का ढाल कम से कम इतना हो कि वर्षा में बांध टूटे नहीं। इससे मिट्टी एवं जल क्षरण कम होगा। चौड़े आधार वाली मेड़ों को ही वेदिकाएं कहते हैं जो विभिन्न प्रकार की होती हैं जैसे समतल वेदिकाएं, नाली–जैसी वेदिकाएं और सीढ़ीदार वेदिकाएं।

12. मेड़बंदी द्वारा वर्षा जल का संरक्षण करना

इसमें ढालू जमीन की प्रारम्भिक स्थिति को बदलकर नया रूप देते हैं जिससे सीमित वर्षा वाले स्थानों में वर्षा जल को संरक्षित किया जा सके तथा ज्यादा वर्षा वाले स्थानों में अधिक जल को सुरक्षित रूप से खेत से बाहर निकाला जा सके। ऐसा नहीं करने से वर्षा का जल जमीन से ज्यादा मिट्टी बहाकर ले जाता है। ढाल के विरोध में बहुत सी मेड़े एक उचित दूरी पर बनाई जाती है जिससे जल के बहाव की गति को रोका जा सके। इससे मिट्टी द्वारा जल शोषण को बढ़ावा मिलता है तथा सतह पर जल के बहाव से होने वाले मिट्टी के क्षरण को रोका जा सकता है।

13. जीवांश खादों द्वारा मिट्टी की जलधारण शक्ति बढ़ाना

जीवांश खादों के प्रयोग से पौधों की जड़ों का उचित विस्तार होता है जो मिट्टी के कणों को बांधकर रखती है जिससे भूमि कटाव कम होता है। भूमि में जीवांश की मात्रा बढ़ने से भूमि के भौतिक गुणों में सुधार आता है। इससे मिट्टी की जलधारण शक्ति बढ़ती है और भूमि क्षरण कम होता है। भूमि ढलान 1, 2 और 3 प्रतिशत रहने पर भूमि कटाव अवरोधक और कटाव सहायक फसलों की पट्टियों की चौड़ाई क्रमशः 1:5, 1:4 और 1:3 रखते हैं। इस प्रकार जो पानी और मृदा, जमीन के पृष्ट भाग से बह जाता है उसको रोकने में मदद मिलती है।

14. वनरोपण व चरागाहों का विकास करना

भूमि एवं जल संरक्षण में प्राकृतिक साधनों में सबसे महत्वपूर्ण स्थान वनरोपण का है। वृक्षारोपण बंजर भूमि, परती भूमि, सड़कों, रेल लाइन, नहरों व तालाबों के किनारों आदि पर करना चाहिए। इससे दोहरा लाभ होता है। एक तो जल एवं भूमि का संरक्षण होता है तथा दूसरा चारा एवं लकड़ी आदि की भी प्राप्ति होती है

जो किसानों की दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ उनकी आर्थिक स्थिति को भी मजबूत बनाती है। इसके अतिरिक्त चरागाहों में स्थानीय घास तथा फलीदार पौधों को लगाना चाहिए। ये वर्षा की तेज बूंदों से होने वाले मृदा कटाव को रोकने व मिट्टी की जलधारण शक्ति को बढ़ाने में मदद करते हैं।

15. पहाड़ी क्षेत्र में वर्षा जल संरक्षण करना

इन क्षेत्रों में 50 से 60 प्रतिशत वर्षा जल अपवाह के रूप में बह जाता है। वह हजारों टन उपजाऊ मिट्टी अपने साथ बहाकर ले जाता है जो मैदानी भागों में भीषण बाढ़ का रुप धारण कर लेती है। एक अनुमान के अनुसार हमारे देश में नौ करोड़ हैक्टर भूमि पानी द्वारा भूमि कटाव से प्रभावित है। इस पानी के कटाव के कारण प्रतिवर्ष लगभग छः अरब टन मिट्टी एक स्थान से दूसरे स्थान पर चली जाती है। इसके अलावा 25 लाख टन नाइट्रोजन, 23 लाख टन फॉस्फोरस और 26 लाख टन पोटाश की खाद भी बह जाती है। आज हमारे देश में कुल पोषक तत्वों (खाद) का प्रयोग 120 लाख टन के करीब होता है। इसका आधे से ज्यादा भाग प्रति वर्ष बेकार बह जाता है। इन क्षेत्रों मे जल संग्रहण, जल संरक्षण की सबसे प्रभावी एवं सस्ती विधि है। जल संग्रहण द्वारा निचले इलाकों मे चैक डेम बनाकर वर्षा के जल को संरक्षित किया जा सकता है तथा इसका उपयोग फसलों की जीवनदायी सिंचाई करने में किया जा सकता है।

16. घरेलू स्तर पर जल संरक्षण

हम घरेलू स्तर पर जल संरक्षण निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखकर कर सकते हैं।

- पानी उतना ही प्रयोग करें जितनी जरुरत हो अन्यथा नल बंद कर दें और घर के अन्दर व बाहर कहीं से भी पानी का व्यर्थ रिसाव न होने दें।
- सब्जी, दाल, चावल को धोने में प्रयुक्त पानी फेंके नहीं। इसे फर्श साफ करने या पेड़ों को पानी देने के काम में लाये।
- अपने समुदाय में ऐसा समूह बनायें जो जल संरक्षण और वर्षा जल संग्रहण को प्रोत्साहन देता हो। अपने इलाके के लिए सामूहिक वर्षा जल संग्रहण प्रणाली बनायें।
- छत के जल का संचय कर व छान कर घरेलू प्रयोग के लिये शुद्ध पानी पाया जा सकता है।
- अगर वाशिंग मशीन का प्रयोग करना ही है तो मशीन फुल लोड़ पर चलायें।
- दिन के सबसे ठंडे समय यानि प्रातः या सांयकाल के समय अपने बगीचे में पानी डालें।

समाप्त

बुद्धिमान व्यक्ति को जितने अवसर मिलते हैं, उससे अधिक वह स्वयं बनाता है।

दुधारू पशुओं का आहार प्रबंधन

रामावतार शर्मा एवं कैलाश चन्द्र शर्मा
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि महाविद्यालय, जोबनेर (राजस्थान)
E-mail : kcsharmakvk@yahoo.com

जिस प्रकार पौधे के लिये खाद एवं पानी की आवश्यकता होती है, ईंजन को चलाने के लिये पेट्रोल या डीजल की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार पशुओं को जीवित रहने तथा शारीरिक वृद्धि एवं उत्पादन के लिये आहार (चारा/बांटा) की आवश्यकता पड़ती है। अतः पशु का आहार ऐसे पौष्टिक तत्वों का होना चाहिये, जिससे उसको आवश्यकतानुसार सभी पौषक तत्व मिल सकें अर्थात् पशुओं का वह भोजन जो उसकी जीवन–निर्वाह, उत्पादन एवं अन्य सभी आवश्यकताओं को पूर्ण करता हो, सन्तुलित आहार कहलाता है। पशुओं को स्वस्थ्य रखने एवं अधिकतम उत्पादन प्राप्त करने के लिये सन्तुलित आहार खिलाना आवश्यक है। पशु की समस्त आवश्यकता पौषक तत्वों से पूर्ण होती है जिन्हें पानी, प्रोटीन, काबोहाईड्रेट, वसा, विटामिन व खनिज लवण मिश्रण कहते हैं।

आहार के शरीर में कार्य

- आहार शरीर को शक्ति एवं ऊर्जा प्रदान करता है।
- शरीर की टूटी फूटी ऊतकों की मरम्मत करने में व मृत कोषों का नवीनीकरण का कार्य भी आहार द्वारा होता है।
- आहार शरीर के विकास एवं भार वृद्धि के लिए आवश्यक है।
- सभी प्रकार के उत्पादन कार्य जैसे – दुध, ऊन, मांस, अण्डे, बैलों द्वारा कृषि कार्य आदि प्रक्रियायें आहार के द्वारा ही होती है।

यदि पशुओं को उचित समय पर आवश्यकतानुसार संतुलित आहार नहीं मिलेगा या कुपोषण रहेगा तो–

- पशु की दुध उत्पादन शक्ति कम हो जायेगी।
- पशु समय पर गर्मी में नहीं आयेगा, गर्भधारण नहीं करेगा, यदि गर्भ ठहरेगा भी तो गर्भपात हो सकता है, यदि गर्भपात नहीं भी हो तो बछड़ा/बछड़ी कमजोर/अस्वस्थ पैदा होगें। जन्नेन्द्रीय संबंधी विकार हो सकते हैं।
- पशु कमजोर हो जायेगा व शरीर में बीमारियों से लडने की शक्ति कम हो जायेगी व पशु अक्सर बीमार रहेगा।
- बछड़ियों की बढ़वार रूक जायेगी, जिससे ज्यादा उम्र में बछड़ी गाय बनेगी।
- सांडों में लिंग के प्रति उत्तेजना कम हो जाती है व शुक्राणु में निष्क्रियता होने की संभावना रहती है।
- खेती व भार ढोने में काम आने वाले बैलों की कार्य क्षमता कम हो जाती है।

अतः गौ पशुओं को समय पर संतुलित आहार देना बहुत आवश्यक है वरना दूध उत्पादन एवं प्रजनन व कार्य क्षमता कम होने से पशु लाभदायक नहीं रहेगा।

संतुलित आहार

चारे अथवा चारे एवं दाने का वह मिश्रण जो पशु की समस्त आवश्यकताओं को उचित मात्रा में देने पर पूर्ण कर देता है। पशु की आवश्यकता निम्न पौषक तत्वों से पूर्ण होती है।

- **पानी** – इसके अभाव में कोई भी जीवधारी जीवित नहीं रहता। यदि शरीर की आवश्यकता का 20 प्रतिशत पानी कम मिले तो मृत्यु हो सकती है। पानी पौषक तत्वों को सोखने, दुषित पदार्थों को शरीर से बाहर निकालने व शरीर का तापमान बनाये रखने में काम आता है।
- **प्रोटीन** – प्रोटीन का काम शरीर की मांसपेशियां बनाने एवं टूट–फूट की मरम्मत करना होता है। साथ ही शरीर की वृद्धि व विभिन्न अंगों के विकास व उत्पादन में आवश्यक होती है। यह दलहनी फसलों जैसे ग्वार, चना, उड़द व मूंग, मोठ व खलों में अधिक होती है।

- **कार्बोहाइड्रेट** – इसका मुख्य कार्य शक्ति प्रदान करना है, आवश्यकता से अधिक चर्बी में बदल कर शरीर में जमा हो जाता है व इसकी कमी होने पर यह चर्बी पुनः शर्करा बनकर शक्ति पहुंचाने में काम आता है। यह गैर दलहनी चारे की फसलों जैसे जौ, जई, मक्का, बाजरा आदि में अधिक पाया जाता है।

- **वसा** – इसका भी मुख्य काम शक्ति प्रदान करना है, इससे शर्करा से लगभग सवा दो गुणा अधिक शक्ति मिलती है। साधारणतया स्थुल खाद्य पदार्थों में थोड़ी बहुत वसा की मात्रा रहती है।

- **विटामिन** – इन तत्वों की शरीर में बहुत कम मात्रा में आवश्यकता होती है। शरीर के प्रायः सभी अंगो का कार्यकलाप इनके द्वारा ही होता है, यदि आहार में प्रोटीन व वसा कितना ही अच्छा रहे फिर भी इनकी कमी से शरीर के अंग शिथिल पड़ सकते हैं।

- **खनिज पदार्थ** – शरीर के दांत, हड्डी व मांसपेशियां बनाने में इसकी आवश्यकता रहती है। भोजन को पचाने, खून बनाने व मस्तिष्क के कार्य को चलाने में इनका होना आवश्यक है। इसमें प्रमुख कैल्शियम, फास्फोरस, मैग्नीशियम, लौहा, तांबा, गंधक जस्ता, सोडियम, पोटेशियम, कोबाल्ट आदि है।

अतः गाय के दुध देने की क्षमता जो वंश परंपरा से प्राप्त हुई है वह तभी क्षमतानुसार दुध दे सकती है, जब उसको संतुलित आहार दिया जाये। इसके अभाव में दुध उत्पादन की मात्रा कम हो जायेगी। यही नहीं दो ब्यांत का अन्तर भी ज्यादा हो जायेगा व गाय लाभदायक नहीं रहेगी।

यदि पशु जीवन पर्यन्त उत्पादन प्रदान करने वाला और पुष्ट बना रहे तो उसे अच्छी तरह वैज्ञानिक ढंग से खिलायें। गाय को खिलाने के लिये उसकी पूर्ण आवश्यकता खाद्य मानकों से ज्ञात की जा सकती है। लेकिन मोटे रूप में निम्नानुसार खिलाई की जा सकती है।

- **सुखा चारा** – पर्याप्त मात्रा में पेटभर सभी गौ पशुओं को खिलाये, जैसे कुत्तर, बाजरा/ग्वार की कट्टी, घास भूसा आदि।

- **हरा चारा** – जितना संभव हो सके प्रत्येक पशु को हरा चारा खिलाना चाहिये। जैसे – रिजका, चौला, बरसीम, नई बाजरी, चरी आदि। जीवन निर्वाह के लिये उम्र के अनुसार मात्रा इस प्रकार खिलायें।

1 से 2 वर्ष	–	5 किलोग्राम/पशु/दिन
2 वर्ष से बड़े	–	10 किलोग्राम/पशु/दिन
गाय/सांड	–	15 किलोग्राम/पशु/दिन

चूंकि पशुओं को उनके उत्पादन व बढ़वार के अनुसार अच्छा फलीदार हरा चारा नहीं मिल पाता अतः पौषक तत्वों की आवश्यकता सूखे व हरे चारे से पूरी नहीं होती। गाय के लिये आहार उसके जीवन निर्वाह के अलावा पूर्ण विकास और दूध उत्पादन के लिये होता है। इसके अलावा प्रथम ब्यांत वाली गाय दूध उत्पादन के साथ शारीरिक वृद्धि भी करती है। अतः अतिरिक्त पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। पशु के आहार ग्रहण करने की क्षमता उसकी ऊर्जा पर भी निर्भर करती है। यदि आहार में ऊर्जा कम हुई तो पशु अधिक मात्रा में खायेगा।

- मोटे तौर पर एक पशु अपने वजन का 2.5 से 3 प्रतिशत शुष्क पदार्थ खा सकता है।

- चूंकि कुल शुष्क पदार्थ की मात्रा जो पशु खा सकता है वह निश्चित है। अतः सभी आवश्यक तत्व जैसे ऊर्जा पाचनशील प्रोटीन आदि आहार में संतुलित हों।

- यदि हरा चारा ज्यादा उपलब्ध है तो प्रति 10 किलोग्राम फलीदार हरे चारे पर एक किलोग्राम दाने की मात्रा कम की जा सकती है और यदि कमी पड़ती है तो एक किलो दाने की मात्रा बढ़ाई जा सकती है।

- दुधारू गाय/भैंस के लिये जीवन निर्वाह के अतिरिक्त उसके प्रति 2.5 किलोग्राम दुध उत्पादन पर एक किलोग्राम दाना आवश्यक है।

- गाय के ब्याने के दो माह पूर्व से ब्याने तक सामान्य खुराक के अतिरिक्त एक किलोग्राम दाना दिया जाना चाहिये।

तालिका 1 : सन्तुलित आहार में दाना/बांटा मिश्रण

खाद्य पदार्थ	(अ) 12–15 प्रतिशत पाच्य प्रोटीन			(ब) 15–18 प्रतिशत पाच्य प्रोटीन		
	1	2	3	1	2	3
खल	16	12	16	13	21	28
चूरी	19	–	10	20	10	21
दलिया	18	26	22	–	21	14
चापड	44	38	42	59	25	20
छिलका चना अरहर आदि	–	21	7	5	20	14
नमक	1	1	1	1	1	1
मिनरल मिश्रण	2	2	2	2	2	2
कुल मात्रा किलोग्राम	100	100	100	100	100	100

दाना बनाना

पौष्टिक संतुलित दाना मिश्रण बनाने के लिये निम्न पौषक पदार्थों की आवश्यकता होती है।

- खल–बिनोले की खल, मूंगफली, सरसों, सूरजमुखी, आदि।
- चूरी–ग्वार, उड़द, मूंग, अरहर, चना आदि।
- दलिया–जौ, ज्वार, जई, बाजरा आदि।
- चापड़/दाना–गेहूँ, चावल।
- विटामिन युक्त खनिज लवण मिश्रण।

उपरोक्त खाद्य पदार्थों से 12–16 प्रतिशत पाच्य प्रोटीन वाला दाने का मिश्रण उपलब्धता व कीमत के अनुसार पशुपालक बना सकते हैं।

1. ''अ'' प्रकार के दाने उन पशुओं के लिये है जिन्हें दलहनी चारा जैसे – बरसीम, रिजका आदि उपलब्ध है।
2. ''ब'' प्रकार के दाने उन पशुओं के लिये है जिन्हें मोटा सूखा चारा उपलब्ध है जैसे भूसा–ज्वार, बाजरा कडबी आदि।
3. अधिक दूध देने वाली गायों अर्थात् 15 लीटर प्रति दिन से अधिक दूध देने वाली गायों को 'ब' प्रकार के दाने के मिश्रण के साथ दलहनी चारा खिलाना चाहिये।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि यदि चारा घटिया किस्म का होगा तो दाने की मात्रा बढ़ानी पड़ेगी और उससे उत्पादन कीमत में वृद्धि होगी।

समाप्त

उस व्यक्ति के लिए सभी परिस्थितियां अच्छी हैं जो अपने भीतर खुशी संजोकर रखता है।

फसलों में यांत्रिक विधियों द्वारा खरपतवार नियंत्रण के आधुनिक यंत्र

नरेन्द्र सिंह चंदेल, अभिजीत खड़तकर एवं हिमांशु त्रिपाठी
भाकृअनुप–केन्द्रीय कृषि अभियांत्रिकी संस्थान, भोपाल (मध्य प्रदेश)
E-mail : narendracae@gmail.com

खरपतवार ऐसे पौधों एवं वनस्पतियों को कहा जाता है जो बिना चाहे खेत में फसल के साथ उगते हैं तथा जो मुख्य फसल के संदर्भ में अवांछित होते हैं। इनका किसी दुसरे स्थान पर खाद्य एवं दवा के रूप में महत्व हो सकता है, परन्तु ऐसे पौधे फसल के बीच में होने से उपज पर प्रतिकूल प्रभाव और अन्य कृषि क्रियाओं में बाधा डालते हैं। खरपतवार बिना चाहे बहुप्रजानिक, प्रतिस्पर्धी, कभी–कभी जहरीले तथा पारिस्थितिकी के लिए हानिकारक सिद्ध होते हैं। यह खेत में सामान्य भूपरिष्करण के बाद फसल के साथ ही उगते रहते हैं। ऐसे कुछ पौधे उसी फसल के पूर्वज भी हो सकते हैं, जैसे–मध्य भारत में ओराइजा निवारा नामक जंगली प्रजाति के पौधे। खरपतवारों द्वारा फसलों के विकास एवं पौधवृद्धि में बाधा होती है, परिणामस्वरूप उपज में गिरावट आती है। अन्तर्राष्ट्रीय चावल अनुसंधान संस्थान के अनुमान से खरपतवार नियंत्रण न होने से यह गिरावट खेती की विभिन्न दशाओं में 44 से 66 प्रतिशत तक आंकी गई है। खरपतवार निम्न प्रकार से फसलों के लिए हानिकारक सिद्ध होते हैं।

- खरपतवार भोजन एवं प्रकाश के लिए मुख्य फसल से प्रतिस्पर्धा करते हैं अतः फसल के लिए खेत में डाले गए उर्वरक व जल की पूर्ण मात्रा फसल के काम नहीं आती है।
- खरपतवार कीट एवं रोग कारक जीवाणुओं को शरण, भोजन तथा स्थान प्रदान करते हैं अथार्त इन सभी फसल के शत्रुओं के लिए परपोषी होते हैं, अतः परोक्ष रूप से फसल उत्पादन को सीमित करते हैं।
- खरपतवार नियंत्रण के लिए मशीन एवं मजदूर आदि की व्यवस्था व उपयोग से उत्पादन लागत में वृद्धि होती है, जिससे खेती में लाभांश घटता है।
- खरपतवार कटाई में बाधा डालते हैं तथा कटाई और गहाई व्यय को बढ़ाते हैं। मुख्य फसल उपज में खरपतवारों के बीज होने से उत्पादित बीज एवं उपज की गुणवत्ता घट जाती है, जिससे किसान को अपेक्षाकृत कम आय मिलती है।
- जलीय–खरपतवार सिंचाई व्यवस्था को अवरूद्ध करते हैं, जिससे सिंचाई उपभोग क्षमता घटती है एवं उत्पादन व्यय बढ़ता है।

खरपतवारों की रोकथाम से न केवल फसलों की पैदावार बढ़ाई जा सकती है, बल्कि उसमें निहित प्रोटीन व् अन्य लाभकारी तत्व एवं फसलों की गुणवत्ता में वृद्धि की जा सकती है। प्रायः निदाई करके इन्हें निकाल दिया जाता है। फसलों की निदाई के लिए प्रयुक्त होने वाले कुछ यांत्रिक उपकरणों का विवरण नीचे दिया गया है।

ड्राईलैंड पेग वीडर

ड्राईलैंड वीडर (हुक टाईप) एक ऐसा हस्तचालित यंत्र है जो फसल की पंक्तियों के बीच खरपतवार को नष्ट करता है। इसमें एक रोलर होता है जिसमें लोहे की रॉड द्वारा फिट की गई दो डिस्क लगी होती है। रॉड पर छोटे समचतुर्भुज आकार के हुक कंपित (स्टेगर्ड) प्रकार से जुडे होते हैं। पूरी रोलर नरम लोहे से निर्मित होती है। रोलर के पीछे हैंडल के रॉड (भुजाएँ) पर 'वी' आकारीय ब्लेड लगे होते है। कार्य की गहराई के अनुसार ब्लेड की ऊंचाई व्यवस्थित की जा सकती है। मशीन की भुजाएँ हैंडल के साथ जुडी होती है, जो पतले मजबूत पाईप से बनी होती है। हैंडल की ऊंचाई भी चालक की आवश्यकतानुसार व्यवस्थित की जा सकती है।

इस यंत्र को खरपतवार हटाने के लिए फसलों की पंक्तियों मे खडी हुई स्थिति में बार–बार धकेलने एवं खींचने की प्रक्रिया द्वारा चालित किया जाता है। समचतुर्भुजी आकारी हुक मिट्टी में गडाकर धुमाव प्रक्रिया द्वारा मिट्टी को बारीक करते है। दबाने की स्थिति में ब्लेड जमीन में घुसकर खरपतवार की जडों को काट देते हैं। इसका प्रयोग सब्जी, फलों के बागों तथा अंगूर उद्यानों मे खरपतवार हटाने के लिए किया जाता है। यह भूमि की सख्त मिट्टी की परत को तोडकर उसे उपजाऊ बनाने में भी सहायक है। इसकी कार्य क्षमता लगभग 0.05 हैक्टर प्रतिदिन होती है।

व्हील हैंड हो

व्हील हैंड हो' एक व्यापक रूप में स्वीकार किया गया खरपतवार नियंत्रण का यंत्र है जो फसल की पंक्तियों के मध्य खरपतवार नियंत्रण हेतु उपयोग किया जाता है। यह एक लंबे हैंडल का यंत्र है जो आगे–पीछे धकेलने एवं खींचने की प्रक्रिया द्वारा चालित होता है। पहियों की संख्या एक या दो हो सकती है और पहियों का व्यास इसके डिजाईन के अनुसार होता है। इस यंत्र के फ्रेम में विभिन्न प्रकार की मिट्टी में कार्य करने वाले पुर्जे जैसे सीधे ब्लेड, प्रतिवर्ती ब्लेड, स्वीप, वी–ब्लेड, टाईन कल्टीवेटर, आयामी कुदाल, लघु आकारीय फरोअर, स्पाईक हैरो (रेक) आदि लगाने हेतु प्रावधान होता है। यह यंत्र अकेले व्यक्ति द्वारा चालित होता है। इस औजार के सभी मिट्टी में कार्य करने वाले पुर्जे मध्यम कार्बन स्टील के बने होते है जो 40–45 एच.आर.सी. तक कठोर किए होते हैं। मशीन के संचालन एवं कार्य की गहराई के लिए हैंडल की ऊंचाई को व्यवस्थित किया जा सकता है और व्हील को बार–बार धकेलने एवं खींचने की प्रक्रिया द्वारा चालित किया जाता है जिससे मिट्टी में कार्य करने वाले पुर्जे फसल की पंक्तियों की जमीन में धँसकर खरपतवार को काटते या जड़ से उखाड़ते हैं। इस प्रक्रिया द्वारा घास भी कटकर मिट्टी में दब जाती है। इसका प्रयोग पंक्तियुक्त सब्जी फसलों तथा अन्य फसलों में निराई एवं खरपतवार हटाने के लिए किया जाता है।

कोनो वीडर

इस यंत्र मे दो रोटर, फ्लोट, फ्रेम और हैंडल लगे होते है। रोटर त्रिशंकु आकार के होते हैं एवं इसकी सतह पर लंबाई में चौरस दाँतेदार स्ट्रिप्स जुडी होती है। रोटर विपरीत अनुकूलनिय आगे–पीछे क्रम में लगे होते हैं। फ्लोट, रोटर और हैंडल फ्रेम के साथ जुड़े होते हैं। फ्लोट कार्य की गहराई को नियंत्रित करते है तथा रोटर असेंब्ली को पोखर मिट्टी में धंसने नहीं देते। कोनो वीडर दबाव प्रक्रिया से चालित किया जाता है। रोटर के अभिविन्यास मिट्टी के शीर्ष 3 सें.मी. में आगे–पीछे संचालन करते हैं जिससे खरपतवार को जड से उखाड़ने में मदद मिलती है। कोनो वीडर का प्रयोग पंक्तियुक्त धान की फ़सल में कुशलतापूर्वक खरपतवार हटाने के लिए किया जाता है। यह आसानी से चलाया जा सकता है तथा यह पोखर मिट्टी में नहीं धँसता। इस यंत्र की कार्य क्षमता लगभग 0.18 हैक्टर प्रतिदिन है।

पावर टिलर स्वीप टाईन कल्टीवेटर

यह यंत्र विशेषतः 5–8 हॉर्स पावर (4.5 से 6.0 किलोवॉट) के पावर टिलर से चलाने के लिए तैयार किया गया है तथा मुख्यतः खड़ी फसल जैसे सोयाबीन, ज्वार, मक्का, काला चना, मटर इत्यादि जहाँ पंक्ति का अंतर चौडा होता है तथा पावर टिलर पौधों को बिना नुकसान पहुंचाये चलाया जा सकता है, में खरपतवार नियंत्रण बहुत आसानी से किया जा सकता है। इसमें पीछे की तरफ एक गहराई नियंत्रक पहिया लगा होता है जो कार्य की एक समान गहराई को बनाए रखता है। यह मध्यम तथा हल्की मिट्टी के लिए उपयोगी है। हीच सिस्टम सहित मेन फ्रेम,

हैंडल, ड्राइव व्हील तथा टाईन इत्यादि इसके मुख्य घटक है। इस यन्त्र की संचालन गति 1.8–2.5 किमी. प्रतिघण्टा, ईंधन खपत 0.7–1.0 लीटर प्रतिघण्टा तथा क्षेत्र क्षमता 0.18–0.25 हैक्टर प्रतिघण्टा है।

स्वचालित रोटरी पावर वीडर

वीडर एक डीजल इंजन चालित यंत्र है। इंजन की पावर बेल्ट पुली के द्वारा ग्राउंड व्हील को प्रेषित की जाती है। गहराई बनाए रखने के लिए इस यंत्र में पीछे एक पहिया लगाया गया है। रोटरी वीडींग अटेचमेंट द्वारा खरपतवार नष्ट करने की प्रक्रिया की जाती है। रोटरी वीडर की तीन पंक्तियों में प्रत्येक डिस्क पर एक दूसरे की विपरीत दिशा में छह घुमावदार ब्लेड लगे होते हैं।

इन ब्लेड के घूमने से मिट्टी एवं घास आदि कटकर मिश्रित हो जाते हैं। रोटरी टिलर की 400 मि.मी. चौड़ाई में कार्य करने की क्षमता होती है तथा फसल क्षेत्र में मिट्टी एवं घास आदि को काटकर मिश्रित करने, खरपतवार नष्ट करने हेतु गहराई आवश्यकतानुसार निर्धारित की जा सकती है। इस यंत्र का प्रयोग गन्ना, मक्का, कपास, टमाटर, बेंगन और दलहन जैसी फ़सलों जिनमें पंक्तियों के बीच की दूरी 45 सें.मी. से ज्यादा है, में खरपतवार नियंत्रण हेतु किया जाता है। स्वीप ब्लेड, रिजर एवं ट्रॉली जैसे अटेचमेंट भी इस यंत्र के साथ लगाए जा सकते है। इसकी कार्य क्षमता 0.1–0.12 हैक्टर प्रतिघण्टा है एवं इसकी कीमत 60000 से 80000 के बीच होती है।

समाप्त

श्रेष्ठ व्यक्ति बोलने में संयमी होता है लेकिन अपने कार्यों में अग्रणी होता है।

कृषि में महिलाओं द्वारा भूमि की तैयारी और बुवाई के लिए हस्त संचालित यंत्र

अभिजीत खड़तकर, राहुल पोद्दार एवं ए.पी. मगर
भाकृअनुप–केन्द्रीय कृषि अभियांत्रिकी संस्थान, भोपाल (मध्य प्रदेश)
E-mail : abhijitnu2@gmail.com

भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का एक महत्वपूर्ण स्थान है और इसमें मुख्य शक्ति स्त्रोत मानव है। कृषि एवं कृषि संबंधित क्षेत्रों में महिलाओं का श्रम बल 97 मिलीयन है जोकि देश के कुल ग्रामीण श्रम का 37 प्रतिशत है। खेती के विभिन्न कार्यों में उपयोग में आने वाले उन्नत कृषि औजार एवं यंत्र मुख्यतः पुरूषों को ध्यान में रखकर बनाए गए हैं और इन्हीं यंत्रों को महिलाओं को दिया जाता है। इन यंत्रों एवं उपकरणों के संचालन से महिलाओं को विभिन्न तरह की कठिनाईयों का सामना करना पडता है जैसे कम कार्य क्षमता एवं स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं। महिलाएं मुख्यतः बुआई, निराई, कटाई, गहाई, अनाज साफ करना इत्यादि कार्य करती है, जिसमें कठिन परिश्रम शामिल है। महिलाओं द्वारा ज्यादातर कार्य पारंपरिक औजारों से झुककर किया जाता है जोकि कठिन श्रम का कारक है जिससे पीठ दर्द, घुटने में दर्द, चोट लगना, जैसी समस्या होती है।

इसलिए, महिलाओं की आवश्यकतानुसार ऐसे यंत्रों एवं उपकरणों को विकसित करने की आवश्यकता है जिन्हें महिलाओं द्वारा आसानी से चलाया जा सके। ऐसे ही कुछ उन्नत कृषि यंत्रों एवं उपकरणों का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया गया है, जिनमें से कुछ अनुसंधान संगठनों और राज्य कृषि विश्वविद्यालयों द्वारा विकसित किये गये हैं।

नाली/मेड़ बनाने का यंत्र

मेड/नाली बनाने हेतु इस यंत्र में टी आकार का खींचने के लिये बीम, हैंडल एवं रिजर लगा होता है। इस यंत्र को चलाने के लिये दो कर्मियों की आवश्यकता होती है, एक यंत्र को खींचने के लिये व दूसरी यंत्र के हैंडल को पकड़ने एवं दिशा निर्देशन के लिये। इस यंत्र की कार्य क्षमता, 330 वर्ग मीटर प्रति घंटा है।

बीज बुवाई यंत्र

गेहूँ, सोयाबीन, मक्का, अरहर आदि की कतार में बुवाई करने हेतु इस यंत्र में एक हैंडल, बीज व खाद के लिए हॉपर, खूंटीदार पहिए, रोलर एवं यंत्र को खींचने के लिए एक हुक लगा होता है। रोलर पहिए के धुरे में ही लगा होता है। इस यंत्र को खेत में चलाने के लिए दो कर्मियों की आवश्यकता पड़ती है जिसमें एक कर्मी यंत्र को खींचती है एवं दुसरी कर्मी यंत्र को ढकेलने और आगे वाली महिला को दिशा–निर्देश देने का काम करती है। एक रस्सी को यंत्र में दिये गए हुक से बांधा जाता है जो यंत्र को खींचने के काम में आता है। यह यंत्र 430 वर्ग मीटर प्रति घंटा की क्षमता से काम करता है।

नवीन डिबलर

इस यंत्र का उपयोग कीमती एवं बड़े आकार के बीजों जैसे मक्का, सोयाबीन, आदि को कम क्षेत्रफल में दूरी पर बोने और बोई गई फसलों के बीच की दूरी को भरने के लिए भी किया जाता है। इस डिबलर में बीज को बोने का यंत्र, कोशिका आकार की बीज मापक प्रणाली, लीवर द्वारा संचालित रोलर व जबड़ा एवं बीज का डब्बा होता है। बीज के डब्बे में निर्धारित बीज भरने के पश्चात इसे बोने की उचित जगह पर रखते हुए यंत्र के आगे लगे लीवर को हल्के से आगे की तरफ दबाते हैं जिससे यंत्र का जबड़ा खुल जाता है व उसी जगह पर बीज पड़ जाता है। यह यंत्र 150 वर्ग मीटर प्रति घंटा की क्षमता से काम करता है।

चार कतारीय धान बोने का ड्रम सीडर

अंकुरित धान के बीज को मचाई किये गये खेत में कतार में बोने हेतु इस यंत्र में पहिये, वर्गाकार लोहे की धुरी, डमरू आकार का ड्रम और झुलने की तरह खींचने की बीम होती है। डमरू आकृत के बीज ड्रम होने की वजह से बीज को छिद्र से आसानी से गिरने में मदद करता है। ड्रम में बीज भरने के लिए दो छिदों के बीच एक बाधक दिया जाता है। ड्रम सीडर खिंचने के लिए एक

झुलता हुआ हैंडल दिया रहता है। बीज ड्रम में अंकुरित बीज को इसके आधे हिस्से तक ही भरा जाता है। इस यंत्र को 1 से 1.5 कि.मी. प्रति घंटा की गति से हल्के पानी भरे खेत में चलायें। इस यंत्र की कार्य क्षमता 920 वर्ग मीटर प्रति घंटा है।

दो कतारीय धान रोपने की मशीन

20–25 दिन पुरानी चटाईनुमा धान की पौध (3–4 पत्ती प्रति पौध

की अवस्था) को मचायी वाले खेत में एक साथ दो कतार में पौध रोपण करने हेतु इस यंत्र में मुख्य ढांचा, फ्लोट (तैरने वाला), पौध ट्रे, संचालन हेतु हत्था, पिकरस, ट्रे को चलाने एवं गहराई नियंत्रण करने की व्यवस्था शामिल है। इस यंत्र की कार्य क्षमता 245 वर्ग मीटर प्रति घंटा है।

निष्कर्ष

भारतीय कृषक महिलाओं द्वारा उपरोक्त उपकरणों/यंत्रों को उपयोग किया जाता है। इनमें कुछ यंत्रों को महिलाओं की शारीरिक बनावट एवं आवश्यकता को ध्यान में रखकर विकसित किया गया है। महिलाओं द्वारा इन यंत्रों का कृषि कार्यों में उपयोग करने से उन्हे अधिक परिश्रम नहीं करना पडेगा। महिलाओं द्वारा इन यंत्रों का उपयोग करने से समय की बचत, कम परिश्रम, स्वास्थ्य एवं आजीविका में भी सुधार होगा।

समाप्त

जिसके पास धैर्य है, वह जो कुछ इच्छा करता है, प्राप्त कर सकता है।

फसलोत्पादन में उचित जिंक प्रबंधन का महत्त्व

बी॰एल॰ मीणा, आर॰के॰ फगोडिया, आर॰एल॰ मीणा, प्रवीण कुमार, अश्वनी कुमार, एम॰जे॰ कलेढोणकर एवं कैलाश प्रजापत
भाकृअनुप–केन्द्रीय मुदा लवणता अनुसंधान संस्थान करनाल (हरियाणा)
E-mail : blmeena2008@gmail.com

पौधों के विकास के लिए 17 पोषक तत्वों को आवश्यक पोषक तत्व माना गया है एवं इनका निर्माण पौधे स्वयं नहीं कर सकते हैं, जिनके अभाव या कमी में पौधे अपना जीवनचक्र पूरा नहीं कर पाते हैं। कार्बन, हाइड्रोजन एवं आक्सीजन तत्व मिलकर पौधों का 90–95 प्रतिशत भाग बनाते है जिन्हे पौधे हवा और पानी से प्राप्त करते हैं। मुख्य पोषक तत्व जैसे नाइट्रोजन, फॉस्फोरस एवं पोटाश पौधे का 3–5 प्रतिशत भाग बनाते हैं। गौण एवं सूक्ष्म पोषक तत्व जैसे सल्फर, मैग्नीशियम, कैल्शियम, जिंक, लोहा, मैंगनीज, कॉपर, बोरॉन, मॉलिब्डेनम, क्लोरीन एवं निकिल मिलकर पौधे का 3–4 प्रतिशत भाग बनाते हैं। जिंक, लोहा, मैंगनीज, कॉपर, बोरॉन, मॉलिब्डेनम, क्लोरीन एवं निकिल सूक्ष्म पोषक तत्वों की श्रेणी में आते हैं। पौधों को मुख्य पोषक तत्वों की अपेक्षा सूक्ष्म पोषक तत्व अत्यन्त सूक्ष्म मात्रा (100 मि.ग्रा. प्रति कि.ग्रा. पादप भार से कम या बराबर) में आवश्यकता होती है। सूक्ष्म पोषक तत्व पौधों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण होते है जिसमें जिंक सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। भारत में जिंक की कमी के कारण होने वाले खैरा रोग की पहचान सर्वप्रथम डॉ. वाई. एल. नेने ने सन् 1966 में तराई क्षेत्र की मृदाओं में उगाए गए धान की फसल में की थी। शोध अध्ययनों में पाया गया कि जिंक की कमी लगभग सभी फसलों के लिए एक गंभीर समस्या है। मृदाओं में जिंक अत्यंत कम है और भोजन की बढती माँग हेतु की जा रही सघन खेती से मृदा में जिंक की कमी और बढ़ सकती है। जिसका सीधा संबंध मानव की खाद्य एवं पोषण सुरक्षा से जुडा है क्योंकि जिंक फसल उत्पादन के साथ–साथ फसलों की गुणवत्ता बढाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। आमतौर पर अधिक उपज देने वाली अनाज फसलों में आनुवंशिक रूप से सूक्ष्म तत्वों की मात्रा कम होती है और सूक्ष्म तत्वों की कमी वाली मृदा में इन फसलों को उगाने से इनमें उक्त तत्वों की मात्रा और कम हो जाती है। इसलिए यह जरूरी हो जाता है कि फसल उत्पादन में जिंक का उचित प्रबंधन करना चाहिए।

पौधो में जिंक का महत्त्व

- जिंक पौधों में ट्रिप्टोफेन संश्लेषण के लिए आवश्यक है जो कि इन्डोल एसिटिक अम्ल के निर्माण के लिये सहायक है।
- जिंक विभिन्न धात्विक एन्जाइमों का मुख्य घटक होने के कारण पौधों की विभिन्न उपापचय क्रियाओं का अपरोक्ष नियंत्रण करता है।
- राइबोन्यूक्लिक अम्ल (आर.एन.ए.) एवं प्रोटीन संश्लेषण में भी जिंक भाग लेता है। जिंक की कमी से फसल उत्पादन में लगभग 10–20 प्रतिशत तक की गिरावट दर्ज की गयी है।

जिंक की कमी के सामान्य लक्षण

फसलों में जिंक की कमी के लक्षण उत्पन्न होने से पहले ही उपज में काफी गिरावट आ जाती है इसलिए सही समय पर निदान अत्यन्त आवश्यक होता है। फसलों में जिंक की कमी की पहचान मृदा परीक्षण, उत्तक परीक्षण एवं पौधों में दृश्य लक्षणों के आधार पर की जाती है। जिससे पौधों में जिंक की पूर्ति का सही समय एवं विधि की जानकारी हासिल कर लेते हैं। सामान्य तौर पर जिंक की कमी से पत्तियों की शिराओं के बीच में हरिमाहीनता होने लगती है। नई पत्तियों में अन्तःशिरीय पर्ण हरिमाहीनता दिखाई देती है जबकि शिराओं से लगा भाग हरा ही रहता है। पर्व (इंटरनोड) छोटे तथा पत्तियाँ मुडी हुई होती है। नई पत्तियों के रंग में असामान्य रूप से परिवर्तन दिखाईं देता है। पत्तियाँ चित्तीदार, मुडी हुई व रंगीन होती है। कभी–कभी ऐसा भी देखने में आता है कि पौधों में जिंक तत्व की कमी होते हुये भी पौधे में कोई दृश्य–लक्षण दिखाई नहीं देते है। इस दशा को 'हिडन हंगर'/'छुपी हुई भूख' के नाम से जाना जाता है। ऐसी अवस्था में पौधे में जिंक की खुराक नहीं देने से फसल उत्पादन पर

विपरीत प्रभाव पड़ता है। जिंक की कमी से होने वाली पर्ण हरिमाहीनता लोहे की कमी के लक्षणों से मिलती है। परन्तु यह अन्तर आसानी से समझा जा सकता है क्योकि जिंक की कमी से पत्तियों के आधार भाग पर सफेद धब्बे से दिखते हैं जबकि लौहे की कमी से अन्तःशिरीय हरिमाहीनता पत्ती की पूरी लम्बाई में दिखाई देती है।

धान, गेहूँ , सरसों, सब्जी, दलहनी फसलें इत्यादि में कुछ प्रमुख लक्षण दिखाई देते हैं। फसलों में जिंक की कमी एवं प्रभाव के लक्षणों का चित्रांकन आगे दिया गया है। अनाजी फसलें साधारणतः जिंक की कमी के प्रति सहनशील होती है। जिंक की कमी के कारण फसल के पकने में लगभग एक सप्ताह की देरी हो जाती है।

मूंगः मूंग की फसल की नई पत्तियाँ पीली होकर अन्तःशिरीय पर्ण हरिमाहीनता दिखाई देती है व साथ ही क्लोरोटिक धब्बों की वजह से उत्तक मृत होकर झड़ जाते हैं।

गोभीः गोभी में जिंक की कमी से पौधों की बढ़वार रूक जाती है। पत्तियों का आकार छोटा हो जाता है मध्य पत्तियों में हरिमाहीनता और मुडी हुई दिखाई पड़ती है तथा पौधों की पत्तियों की शिराएं मोटी और उभरी हुई दिखाई देती है। मध्य एवं नई पत्तियों में अन्तःशिरीय हरिमाहीनता आती है जो बाद में धब्बों में बदल जाती है। नई पत्तियों का त्रिफलक अंदर की तरफ मुडा हुआ प्याले के आकार का दिखाई पड़ता है, पत्तियाँ मोटी एवं नाजुक तथा आकार में छोटी एवं अव्यवस्थित हो जाती है।

टमाटरः सामान्यतया टमाटर में जिंक की कमी रोपाई के 20–25 दिन बाद दिखाई देती है जिसमें मध्य पत्तियों पर हरिमाहीनता के साथ पत्तियों का आकार छोटा हो जाता है। पत्तियाँ शिराओं से अंदर की ओर मुड़ी हुई होती है और इन पर पीले धब्बे अन्तःशिरीय क्षेत्र में दिखाई देते हैं, कुछ समय पश्चात् पत्तियाँ नीचे की ओर झुक जाती है साथ ही शाखाएं भी झुक जाती है अगली अवस्था में पौधे की बढ़वार रूक जाती है। जिंक की कमी की दशा में पौधे में फल और फूल का समुचित विकास नहीं हो पाता है।

सरसोंः सरसों के पौधों में जिंक की कमी के लक्षण बुवाई के 45 दिन की अवस्था पर प्रकट होते हैं। मध्य एवं नई पत्तियों पर एक क्रम में हरिमाहीन धब्बे बनते हैं जो बाद में नेक्रोटिक/धब्बों में बदल जाते हैं। बाद में यह धब्बे बडे आकार के हो जाते हैं एवं उनमें उत्तक क्षय होता है। पुरानी पत्तियाँ पीली एवं जीर्ण हो जाते है। 60 दिन की अवस्था पर नेक्रोटिक पत्तियाँ कास्य रंग की हो जाती है। पुरानी पत्तियाँ पतली एवं सूखी पड़ जाती है, फलियों की संख्या कम हो जाती है।

तिलः तिल में जिंक की कमी के लक्षण मध्य पत्तियों के आधार से आरम्भ होता है जिनमें अन्तःशिरीय भागों का रंग फीका पड़ जाता है। पत्रफलक का आकार छोटा हो जाता है। पत्ती के किनारे अंदर की और मुड़ जाते हैं।

गेहूँः गेहूँ में जिंक की कमी के लक्षण केवल अत्यधिक कमी की दशा में ही दिखाई देते हैं। गेहूँ की ड्यूरम प्रजातियों में जिंक की कमी के लक्षण शीघ्र दिखाई देते हैं। जिंक पौधों में गतिशील होता है अतः कमी के लक्षण सर्वप्रथम मध्य पत्तियों पर दिखाई पडते हैं। नई एवं पुरानी पत्तियाँ शुरू में अप्रभावित रहती है। लक्षण सर्वप्रथम मध्य पत्तियों के आधे निचले भाग में दिखाई पड़ते हैं। पत्तियों के अग्रक एवं आधार हरे रहते हैं, जबकि मध्य भाग में मटमैले हरे रंग के धब्बे बनते हैं, जो बाद में गहरे भूरे रंग के धब्बों में बदल जाते हैं। जिंक की कमी की तीव्रता बढ़ने पर धब्बे सभी पत्तियों पर फैल जाते हैं और पत्तियाँ गिर जाती है। जिंक की कमी के कारण कल्ले कम बनते है, पौधे की बढ़वार कम हो जाती है और पौधा छोटा रह जाता है। अत्यधिक कमी की दशा में सैकड़ो कल्ले बनते हैं जो अत्यंत छोटे होकर झाड़ीनूमा हो जाते है।

धानः जिंक की कमी के लक्षण साभान्य रूप से रोपाई के 2 से 4 हफ्ते बाद दिखाई पड़ते हैं। पत्तियों पर कत्थई या कास्य रंग के धब्बे दिखाई पड़ते हैं। यह धब्बे आकार में बडे होकर संपूर्ण पत्रफलक में फैल जाते हैं तथा बाद में सभी पत्तियों में कांस्य धब्बे बन जाते हैं, इस दशा को खैरा रोग के नाम से जाना जाता है। जिंक की अत्यधिक कमी होने पर कल्लों की संख्या कम होती है एवं जड़ों की वृद्धि रूक जाती है, बालियों में निष्फलता या बांझपन आ जाता है जिससे फसल उत्पादन में कमी होती है।

मृदा में जिंक की कमी की वर्तमान स्थिति

पौधों की अच्छी वृद्धि के लिए 20 पी.पी.एम. जिंक का स्तर उपयुक्त पाया गया है। हमारे देश में दरअसल डी.टी.पी.ए. निष्कर्ष जिंक की 0.65 पी.पी.एम. की रेखा जिंक कुपोषित तथा सामान्य क्षारीय मृदा का होना दर्शाती है। मृदा विशेष में जिंक का

तालिका 1: देश के विभिन्न राज्यों ने जिंक की कमी की वर्तमान स्थिति

राज्य	विश्लेषित नमूनों की संख्या	जिंक की कमी प्रतिशत
आन्ध्र प्रदेश	7292	23.5
असम	7208	28.1
बिहार	14487	45.4
छतीसगढ़	4731	20.2
गोवा	680	55–3
गुजरात	7587	36.6
हरियाणा	5637	15.4
हिमाचल प्रदेश	10586	8.0
जम्मू और कश्मीर	597	7.4
झारखंड	995	11.3
कर्नाटक	7987	43.1
केरल	894	18.3
मध्य प्रदेश	14236	65.9
महाराष्ट्र	13663	39.3
मणिपुर	1860	18.3
ओंडिशा	4591	29.2
पंजाब	6166	21.2
राजस्थान	6320	56.5
तमिलनाडु	34315	63.2
तेलंगाना	4939	26.8
उत्तर प्रदेश	8072	32.4
उत्तराखंड	2575	9.6
पश्चिम बंगाल	3872	13.8
भारत	169290	39.9

क्रान्तिक स्तर दूसरी मृदा के लिए थोड़ा अलग भी हो सकता है। मृदा एवं पौधों में पोषक तत्वों की कमी मात्रात्मक रूप से उसके क्रान्तिक स्तर पर निर्भर करती है। क्रान्तिक स्तर मृदा में पोषक तत्वों की उपलब्धता का वह स्तर है जिससे कम मात्रा होने पर फसल सामान्य रूप से बढ़वार न कर सके तथा उस तत्व की बाहर से आपूर्ति करने पर ही फसल की उपज में वृद्धि होती है। मृदा में जिंक की उपलब्धता का निर्धारण डाईइथीलीन ट्राईएमीन पेंटा एसिटिक अम्ल (डी.टी.पी.ए.) निष्कर्षण द्वारा किया जाता है। मृदा एवं पौधों में सूक्ष्म एवं गौण पोषक तत्वों एवं प्रदूषक तत्वों के शोध पर अखिल भारतीय समन्वित परियोजना एवं भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के अन्य संस्थाओं के अंतर्गत 23 राज्यों के 464 जिलों से सन् 2005 से 2015 के मध्य लगभग 1.69 लाख मृदा नमूने एकत्र किये गये। इन मृदा नमूनों के परीक्षण से पता चला कि देश की लगभग 40 प्रतिशत मृदाओं में जिंक की कमी है (तालिका 1)। मृदा के प्रकार, कृषि जलवायु एवं सस्य प्रणाली में भिन्नता के कारण विभिन्न प्रदेशों में जिंक की कमी अलग–अलग आंकी गई है। उदाहरण के तौर पर जम्मू और कश्मीर (7.4 प्रतिशत), हिमाचल प्रदेश (8 प्रतिशत), उत्तराखंड (9.6 प्रतिशत), एवं पश्चिम बंगाल (13.8 प्रतिशत) की मृदाओं में जिंक की कमी अपेक्षाकृत कम दर्ज की गयी।

जिंक की उपलब्धता को प्रभावित करने वाली परिस्थितियाँ

मृदा में जिंक की कमी व कम आपूर्ति, फसल उत्पादन और उत्पादकता घटा सकती है। अतः पौधों के लिये जिंक की उपलब्धता सुनिश्चित किया जाना अत्यन्त आवश्यक है। मृदा में होने वाली भौतिक, रासायनिक और जैविक प्रक्रियाएं जिंक की उपलब्धता को प्रभावित करती है।

- फॉस्फोरस, मैंगनीज एवं लोहे की अधिक उपलब्धता होने पर जिंक का पौधों में स्थानांतरण कम हो जाता है और पौधों के सभी भागों को पूरी मात्रा में नहीं मिल पाता है।
- नाइट्रोजन की अधिक मात्रा के प्रयोग से पौधों की जडों में जिंक–प्रोटीन जटिल बन जाता है।
- मृदा में कार्बनिक पदार्थ की कमी से जिंक का संघटित होना रूक जाता है और मृदा के विभिन्न घटकों के साथ अधिक क्रिया होने से जिंक का स्थिरीकरण अधिक होता है।
- जमीन के समतलीकरण से पोषक तत्वों की अधिक मात्रा वाली ऊपरी परत के हटने से जिंक की कम मात्रा वाली नीचे की परत ऊपर आ जाती है।
- ठंडी एवं नमी वाली मृदाएं पौधों की जड़ों की क्रियाशीलता और जिंक की घुलनशीलता को कम करती है। मृदा तापक्रम में बढोत्तरी सामान्यतः जिंक की उपलब्धता को बढाती है।
- क्षारीय पानी के प्रयोग से जिंक का विभिन्न अघुलनशील हाइड्रॉक्साइड में अवक्षेपण हो जाता है।
- मृदा में कैल्शियम कार्बोनेट की अधिकता से जिंक का अधिशोषण होता है और कैल्शियम जिन्केट तथा जिंक कार्बोनेट के रूप में अवक्षेपण हो जाता है।

- धान के खेत में लगातार पानी भरने से मृदा की ऑक्सी–अवकरण क्षमता कम हो जाती है जिससे सल्फर का अवकरण हो जाता है और जिंक के साथ मिलकर जिंक सल्फाइड बनता है, जोकि पानी में कम घुलनशील होता है परिणामस्वरूप जिंक की कमी हो जाती है।
- मृदा पी.एच. मान 7.0 से अधिक होने पर जिंक के हाइड्रोक्साइड और ऑक्साइड बनने के कारण मृदा में जिंक की उपलब्धता घट जाती है।
- लवणीय अभिक्रिया के साथ रेतीली मृदाओं में जिंक की कमी सहज ही होती है।

जिंक उपयोग का फसलोत्पादन पर प्रभाव

जिंक के उचित प्रबंधन के विभिन्न प्रयोग किसानो के खेत पर ही किये जाते हैं ताकि इसकी उपयोगिता सिद्ध हो सके। मृदा की किस्म, मृदा में उपलब्ध जिंक की मात्रा तथा फसल की किस्मों के अनुसार दिए गए जिंक के प्रति फसलों की अनुक्रिया में अन्तर रहता है। ऐसी मृदाओं में, जिनमें प्राप्य जिंक अधिक होता है, जिंक के प्रयोग से उपज में कोई सार्थक वृद्धि नहीं होती है जबकि कम प्राप्य जिंक वाली मृदाओं में इसके प्रयोग से फसलों की उपज में निश्चित वृद्धि होती है। सूक्ष्म एवं द्वितीयक तत्वों द्वारा फसल प्रतिक्रिया पर परियोजना के तहत देश के विभिन्न राज्यों में किसानो के खेतों पर जिंक के प्रयोग हेतु हजारों परीक्षण व प्रदर्शन लगाये गये जिनमें यह पाया गया कि जिंक का प्रयोग करने से विभिन्न फसलों की उपज में अच्छी वृद्धि हुई। विभिन्न प्रयोगों के निष्कर्ष का महत्वपूर्ण विश्लेषण तालिका 2 में दिया गया है। जिंक के प्रयोग से यह सिद्ध होता है कि जिंक की कमी वाले क्षेत्रों में जिंक फसल उत्पादन हेतु अति आवश्यक है।

जिंक के स्रोत

जिंक की कमी की पूर्ति के लिए जिंक सल्फेट (21 प्रतिशत जिंक), जिंक डस्ट (99 प्रतिशत जिंक) जिंक ऑक्साइड (67–80 प्रतिशत जिंक), जिंक कार्बोनेट (65 प्रतिशत जिंक), जिंक चीलेट्स (जिंक–ईडीटीए 12 प्रतिशत जिंक), जिंकेटेड यूरिया (2 प्रतिशत जिंक) और जिंक क्लोराइड (45 प्रतिशत जिंक) प्रयुक्त होते हैं। आर्थिक दृष्टिकोण से कम मूल्य वाले जिंक उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए जिससे किसान को अधिक से अधिक लाभ मिल सके। व्यापक स्तर पर जिंक सल्फेट का प्रयोग सभी मृदाओं तथा फसलों में सबसे उपयुक्त पाया गया। यद्यपि कुछ शोधों में चिलेटेड जिंक को जिंक सल्फेट से अधिक प्रभावी पाया गया। परन्तु मृदा में जिंक की कमी को दूर करने में जिंक सल्फेट अधिक मात्रा में प्रयोग किए जाने के बावजूद आर्थिक रूप से सस्ता पाया गया एवं दीर्घकालीन प्रयोगों से जिंक सल्फेट एवं चिलेटेड जिंक समान रूप से प्रभावी पाये गये।

जिंक अनुप्रयोग दर

जिंक का प्रयोग धान की रोपाई या अन्य फसलों की बुवाई के समय ही करना चाहिए। एक बार में 25 से 50 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर जिंक सल्फेट प्रयोग करने से जिंक की कमी दूर करके फसल

तालिका 2 : विभिन्न राज्यों की मृदाओं में जिंक प्रयोग से फसल उत्पादन में वृद्धि

फसल	संख्या	जिंक की मात्रा (टन प्रति हैक्टर)	औसत उपज वृद्धि (टन प्रति हैक्टर)	फसल	संख्या	जिंक की मात्रा (टन प्रति हैक्टर)	औसत उपज वृद्धि (टन प्रति हैक्टर)
गेहूँ	2447	0.01–1.47	0.42	मूँगफली	83	0.21–0.47	0.32
धान	1652	0.14–1.27	0.54	सोयाबीन	12	0.16–0.39	0.36
मक्का	280	0.11–1.37	0.47	सरसों	11	0.14–0.26	0.27
जौ	17	0.49–0.73	0.50	अलसी	5	0.15–0.20	0.16
ज्वार	83	0.21–0.65	0.36	सूरजमुखी	8	0.15–0.20	0.24
बाजरा	236	0.17–0.46	0.19	प्याज	3	1.70–4.91	2.96
रागी	47	0.08–0.42	0.36	आलू	45	2.40–3.90	5.13
मसूर	16	0.08–0.39	0.22	गन्ना	6	1.72–2.40	3.77
चना	15	0.23–0.56	0.36	कपास	27	0.06–0.24	0.22
उड़द	10	0.11–1.12	0.24				

उत्पादकता को बढ़ाया जा सकता है। इसका प्रभाव विभिन्न मृदाओं एवं फसलों में जिंक प्रयोग दर, जिंक उर्वरक की दक्षता, मृदा में स्थिरीकरण, फसल की प्रकृति एवं उत्पादकता लक्ष्य पर निर्भर करती है। हालाँकि धान–गेहूँ फसल चक्र में एक बार में 25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर जिंक सल्फेट डालने के बाद दो वर्ष तक जिंक का प्रभाव रहता है। धान में जिंक का प्रयोग करने पर गेहूँ में जिंक का प्रयोग किये बिना ही पूरा उत्पादन मिल जाता है। इसी प्रकार गेहूँ में फास्फोरस का लगातार उचित मात्रा में प्रयोग करने पर धान में फास्फोरस के प्रयोग बिना पूरा उत्पादन प्राप्त हो जाता है। विभिन्न प्रकार की मृदाओं में भी जिंक की संस्तुत मात्रा भिन्न होती है। उच्च पीएच मान, उच्च कैल्शियम कार्बोनेट तथा कम कार्बनिक पदार्थ वाली मृदाओं में जिंक की मात्रा का अधिक प्रयोग किया जाता है। इसके अलावा बलुई भूमियों की स्थिरीकरण क्षमता कम होने के कारण जिंक की कम मात्रा से जबकि चिकनी व क्षारीय भूमियों में अधिक मात्रा देकर ही फसलों का पूरा उत्पादन लिया जा सकता है।

जिंक अनुप्रयोग की विधियाँ

आमतौर पर पत्तियों पर छिड़काव या जिंक ऑक्साइड में पौधों की जड़ों को डुबाने या बीज उपचार की तुलना में मृदा में जिंक देना सर्वोत्तम विधि है। मृदा में जिंक की दक्षता एवं उपलब्धता बहुत कम है। सामान्यतः जिंक का प्रयोग भुरकाव विधि से मिट्टी में मिलाकर करते है। कुछ अन्य विधियाँ जैसे खडी फसल में जिंक का भुरकाव (टाप ड्रेसिंग), पटिट्यों में जिंक का प्रयोग तथा जिंक सल्फेट का 0.5 से 1 प्रतिशत का पर्णीय छिडकाव, बीजों को जिंक घोल में भिगोना तथा बीजों में जिंक कोटिंग करना आदि शामिल है। विभिन्न फसलों तथा मृदाओं में जिंक कोटिंग पर किए गए अध्ययन से ज्ञात हुआ कि यह विधि भुरकाव तथा छिड़काव विधि से कम प्रभावी है। सामान्यतः जिंक उर्वरकों का प्रयोग बुवाई के समय बिखराव या भुरकाव या कतारों के मध्य अच्छा पाया गया है। यदि किसी कारणवश बुवाई के समय जिंक का प्रयोग नहीं किया गया है तो बुवाई के 35–45 दिन बाद जिंक उर्वरकों का प्रयोग पर्णीय छिड़काव द्वारा किया जा सकता है। खड़ी फसल में जिंक की कमी के लक्षण दिखाई देने पर 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट हेप्टाहाइड्रेट या 0.35 प्रतिशत जिंक सल्फेट मोनोहाइड्रेट घोल का छिड़काव 7–10 दिन के अन्तराल पर तीन बार करने से इसकी कमी को सुधारा जा सकता है। जिंक ऑक्साइड के घोल में धान तथा सब्जियों की पौध को डुबोकर उपचारित करने की विधि भी काम में लाई जा सकती है। यदि नियमित रूप से मृदा में 10–15 टन प्रति हैक्टर की दर से गोबर की खाद का प्रयोग किया जाता है तो यह सभी सूक्ष्म तत्वों की पूर्ति करने में सक्षम होता है। यदि उपयुक्त मात्रा में गोबर की खाद उपलब्ध न हो तब 4–5 टन गोबर की खाद के साथ जिंक की 50 प्रतिशत संस्तुत मात्रा के प्रयोग से बेहतर परिणाम प्राप्त होते हैं।

मृदा परीक्षण के आधार पर जिंक की संस्तुति

मृदा परीक्षण के आधार पर मृदा में उपलब्ध जिंक को निम्न प्रकार वर्गीकृत कर सकते हैं जैसे अत्यधिक कमी, कमी, सीमान्त कमी, आंशिक पर्याप्त, पर्याप्त व अधिक। इस वर्गीकरण के आधार पर

तालिका 3. मृदाओं में उपलब्ध जिंक स्तर के आधार पर जिंक उर्वरकों की मात्रा

मृदा में उपलब्ध जिंक की मात्रा (मि.ग्रा./कि.ग्रा.मृदा)	जिंक की उर्वरता श्रेणी	जिंक युक्त उर्वरकों की फसलों में प्रयोग की अनुशंसा
0.3 से कम	अत्यधिक कमी	5.0 कि.ग्रा. जिंक (25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट हेप्टाहाइड्रेट) प्रति हैक्टर प्रति फसल चक्र
0.3–0.6	कमी	5.0 कि.ग्रा. जिंक (25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट हेप्टाहाइड्रेट) प्रत्येक दूसरे वर्ष या 3.0 कि.ग्रा. जिंक (15 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट हेप्टाहाइड्रेट) प्रति वर्ष प्रति फसल चक्र
0.6–0.9	सीमान्त कमी	5.0 कि.ग्रा. जिंक (25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट हेप्टाहाइड्रेट) प्रत्येक तीसरे वर्ष या 2.5 कि.ग्रा. जिंक (12.5 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट) प्रति फसल चक्र
0.9–1.2	आंशिक पर्याप्त	2.0 कि.ग्रा. जिंक प्रति हैक्टर प्रति फसल चक्र
1.2–1.8	पर्याप्त	अनुरक्षण खुराक के रूप में 1.5 किग्रा. जिंक (7.5 किग्रा. जिंक सल्फेट हेप्टाहाइड्रेट) प्रति हैक्टर प्रति फसल चक्र प्रति फसल
1.8 से ज्यादा	अधिक	उर्वरक डालने की आवश्यकता नहीं

जिंक युक्त उर्वरकों का फसलों में प्रयोग किया जाता है। वर्गीकरण व मृदा का स्तर तथा दिये जाने वाले उर्वरकों की मात्रा को तालिका 3 में दिया गया है। इस प्रकार यह महत्त्वपूर्ण हो जाता है कि फसलों के लिए उर्वरकों की मात्रा निश्चित करते समय पिछली फसल में तत्वों, खासकर फास्फोरस और जिंक की डाली गई मात्रा का ध्यान रखा जाए। **मृदा परीक्षण** एवं फसल प्रणाली के अनुसार उर्वरक संस्तुति तैयार करके और जिंक की मात्रा में कटौती करते हुए पूरा उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

दलहनी फसल मूँग में जिंक की कमी के लक्षण

धान में जिंक की कमी के लक्षण

सरसों में बुवाई के समय जिंक भुरकाव का प्रभाव

गोबर खाद के साथ जिंक प्रयोग का प्रभाव

समाप्त

जब किसी कार्य में रुचि और उसे करने के हुनर का संगम हो, तो उत्कृष्टता स्वाभाविक है।

मृदाओं में सुक्ष्म पोषक तत्वों की कमी एवं सुधार के उपाय

कैलाश प्रजापत, गोपाल लाल चौधरी[1], राजपाल मीना[2], रामकिशोर फगोडिया, बाबू लाल मीना, अरविन्द कुमार, राजेश कुमार मीना[3] एवं अश्वनी कुमार

भाकृअनुप–केन्द्रीय मुदा लवणता अनुसंधान संस्थान करनाल (हरियाणा)

[1]बिहार कृषि विश्वविद्यालय, सबौर, भागलपुर (बिहार)

[2]भाकृअनुप–भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा)

[3]भाकृअनुप–राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा)

E-mail : kailash.prajapat@icar.gov.in

देश में आई हरित क्रांति के बाद खाद्यान्न उत्पादन में 4.5 गुणा, उद्यान फसलों में 6 गुणा, मछली उत्पादन में 9 गुणा, दुध उत्पादन में 6 गुणा एवं अण्डे उत्पादन में 27 गुणा वृद्धि हुई है। भारत को 2025 तक लगभग 320 एवं 2050 तक 400 मिलियन टन खाद्यान्न की आवश्यकता होगी। वर्तमान में कृषि में प्रगति की स्थिरता को देखते हुए, भविष्य में खाद्य सुरक्षा की चुनौती दिखाई दे रही है। खाद्य एवं पोषण सुरक्षा के लिए तीन मुख्य कारक उन्नत बीज, अच्छी गुणवत्ता का सिंचाई जल एवं उर्वरक है। इन सभी कारकों की सफलता मृदा उर्वरता पर निर्भर करती है। भारत में नवीन कृषि तकनीकियों जैसे अधिक उपज देने वाली किस्में, सिंचाई की सुविधा में वृद्धि, उर्वरकों का प्रयोग तथा सघन कृषि आदि से परंपरागत कृषि, तकनीकी कृषि के रूप में विकसित हुई। परन्तु, सघन कृषि एवं एकल पोषक तत्व उर्वरक अपनाने से मृदा में सुक्ष्मपोषक तत्वों के स्तर में कमी आई है। वर्तमान में कृषि में उपज स्थिरता, असंतुलित पोषक तत्व अनुपात, कृषि विकास दर में कमी, पोषक तत्वों की कमी से घटती हुई उपज आदि समस्याएँ सामने आ रही है। धान–गेहूँ फसल पद्धति भारी मृदाओं एवं अपरंपरागत क्षेत्रों में अधिक अपनाने से मृदा से सुक्ष्म पोषक तत्वों का अत्यधिक दोहन हुआ है। सुक्ष्म पोषक तत्वों की कमी से उपज के साथ–साथ उत्पाद की गुणवत्ता में भी कमी आई है। अतः घटती हुई उपज एवं मृदा में बहु–पोषक तत्वों की कमी को देखते हुए सुक्ष्म पोषक तत्वों का उचित प्रबंध आवश्यक है।

तालिका 1: भारत की मृदाओं में विभिन्न सुक्ष्म पोषक तत्वों का स्तर

सुक्ष्म पोषक तत्व	उपलब्ध मात्रा (मि.ग्रा./कि.ग्रा.मृदा)	
	सीमा	औसत
जस्ता	0.2–6.9	0.9
तांबा	0.1–8.2	2.1
लोहा	0.8–196	19.0
मैंगनीज	0.2–118	21.0
बोरोन	0.08–2.6	–

मृदा में विभिन्न सुक्ष्म पोषक तत्वों का स्तर

पौधों की उचित बढ़वार एवं विकास के लिए पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। सुक्ष्म पोषक तत्वों की कमी से पौधों की वृद्धि, कार्यिकी एवं जनन क्षमता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। भारतीय मृदाओं में पोषक तत्वों का स्तर तालिका 1 में दिया गया है।

भारत में 2.52 लाख मृदा नमूनों के अध्ययन से सिद्ध हुआ है कि भारत में सबसे ज्यादा जस्ते की कमी है। इन नमूनों में से 49, 12, 4, 3, 33 एवं 41 प्रतिशत नमूनों में क्रमशः जस्ता, लोहा, मैंगनीज, तांबा, बोरोन एवं गंधक आदि सुक्ष्म तत्वों की कमी है। भारत में जस्ते की कमी तराई क्षेत्रों, उत्तर प्रदेश एवं पंजाब की रेतीली मृदा में सर्वप्रथम 1965 में दिखाई दी थी। बाद में सम्पूर्ण भारत में धान–गेहूँ फसल पद्धति क्षेत्रों में जस्ते की कमी पाई गई है। सामान्यतया जस्ते की कमी भारी मृदाओं, अधिक चुनेदार क्षारीय रेतीली मृदाएँ, अधिक पीएच मान एवं कम कार्बनिक पदार्थ वाली मृदाओं में पायी जाती है। लोहा, मैंगनीज एवं तांबा की कमी जस्ते की कमी की अपेक्षा कम पायी गयी है। लोहा की सर्वाधिक कमी हरियाणा की सीरोजेम मृदाओं में (26 प्रतिशत), तमिलनाडु में (18 प्रतिशत), पंजाब में (12 प्रतिशत) एवं गुजरात तथा उत्तर प्रदेश की चुनेदार मृदाओं में (8 प्रतिशत) पायी गई है। बोरोन की कमी गुजरात में 2 प्रतिशत व पश्चिम बंगाल में 68 प्रतिशत तक पाई गई है। सामान्यतया बोरोन की कमी कर्नाटक की लाल एवं धुसर मृदाओं, पश्चिम बंगाल की अम्लीय मृदाओं, झारखण्ड, उड़ीसा, महाराष्ट्र एवं बिहार की चुनेदार मृदाओं में अधिक पाई गई है। मोलिब्डेनम की कमी नम क्षेत्रों की अम्लीय मृदाओं में

तालिका 2: भारतीय मृदाओं में सुक्ष्म पोषक तत्वों की कमी का स्तर (प्रतिशत नमूने)

राज्य	जस्ता	तांबा	लौहा	मैंगनीज	बोरोन
आन्ध्र प्रदेश	49	<1	3	3	–
असम	34	<1	2	20	17
बिहार	54	3	6	2	38
गुजरात	24	4	8	4	2
हरियाणा	61	2	20	4	0
हिमाचल प्रदेश	42	0	27	5	–
जम्मू एवं कश्मीर	12	–	–	–	–
कर्नाटक	73	5	35	17	32
केरल	34	3	<1	0	–
मध्य प्रदेश	44	<1	7	1	22
महाराष्ट्र	86	0	24	0	–
मेघालय	57	2	0	23	–
उड़ीसा	54	–	0	0	69
पाण्डिचेरी	8	4	2	3	–
पंजाब	48	1	14	2	13
राजस्थान	21	–	–	–	–
तमिलनाडु	58	6	17	6	21
उत्तर प्रदेश	46	1	6	3	24
पश्चिम बंगाल	36	0	0	3	68
सम्पूर्ण भारत	49	3	12	5	33

होती है। भारत के विभिन्न प्रदेशों में सुक्ष्म पोषक तत्वों की कमी का स्तर तालिका 2 में दिया गया है।

मृदा में सुक्ष्म पोषक तत्वों की मात्रा को प्रभावित करने वाले कारक

पैतृक पदार्थ: ऐसे पैतृक पदार्थ से उत्पन्न मृदाएँ जिसमें सुक्ष्म पोषक तत्वों की कमी होती है। सघन फसल उत्पादन में सुक्ष्म पोषक तत्वों की कमी दिखाई देती है।

मृदा पीएच मान: अम्लीय मृदाओं में बोरोन एवं मोलिब्डेनम की कमी होती है। इसी प्रकार अधिक पीएच मान वाली मृदाओं में जस्ता, लौहा, मैंगनीज एवं तांबा की कमी हो जाती है। अम्लीय मृदाओं में अधिक चुने का प्रयोग करने से भी सुक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता कम हो जाती है।

अधिक उपज वाली किस्मों का प्रयोग: अधिक उपज देने वाली किस्में मृदा से अधिक मात्रा में सुक्ष्म पोषक तत्वों का अवशोषण करती है। कुछ वर्षों पश्चात इन फसलों वाली मृदा में सुक्ष्म पोषक तत्वों की कमी के लक्षण दिखाई देने लगते हैं।

असंतुलित पोषक तत्व प्रबंध: एकल पोषक तत्व वाले उर्वरकों के लम्बे समय तक अनुप्रयोग से भी मृदा में सुक्ष्म पोषक तत्वों की कमी हो जाती है।

मृदा परिस्थितियाँ: जल प्लावित मृदाओं में जस्ता एवं तांबा की उपलब्धता कम हो जाती है एवं लौहा एवं मैंगनीज की उपलब्धता बढ़ जाती है।

कार्बनिक पदार्थ: कार्बनिक पदार्थ मुख्य एवं सुक्ष्म पोषक तत्वों का भण्डार ग्रह कहलाता है। उचित कार्बनिक खादों के प्रयोग से मृदा में सुक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता में वृद्धि होती है।

पौधों में विभिन्न सुक्ष्म पोषक तत्वों के कार्य एवं कमी के लक्षण

लौहे के कार्य

- क्लोरोफिल एवं प्रोटीन निर्माण में सहायक है।
- लौहा साइटोक्रोम्स, फैरीडोक्सीन व हीमोग्लोबिन का मुख्य अवयव है।

– यह पौधों की कोशिकाओं में विभिन्न ऑक्सीकरण–अवकरण क्रियाओं में उत्प्रेरक का कार्य करता है। श्वसन क्रिया में ऑक्सीजन का वाहक है।

लौहे की कमी के लक्षण

– पत्तियों के किनारों व नसों का अधिक समय तक हरा बना रहना।

– नई कलिकाओं की मृत्यु हो जाना तथा तनों का छोटा रह जाना।

– धान में कमी से क्लारोफिल रहित पौधा होना, पौधे की वृद्धि का रुकना।

जस्ता के कार्य

– कैरोटीन व प्रोटीन संष्लेशण में सहायक है।

– हार्मोन्स के जैविक संष्लेशण में सहायक है।

– यह एन्जाइम (जैसे–सिस्टीन, लेसीथिनेज, इनोलेज, डाइसल्फाइड आदि) की क्रियाशीलता बढ़ाने में सहायक है। क्लोरोफिल निर्माण में उत्प्रेरक का कार्य करता है।

– पौधों द्वारा फास्फोरस और नाईट्रोजन के उपयोग में सहायक होता है।

– न्यूक्लिक अम्ल और प्रोटीन–संष्लेशण में मदद करता है।

– हार्मोनों के जैव संष्लेशण में योगदान करता है।

– अनेक प्रकार के खनिज एंजाइमों का आवश्यक अंग है।

जस्ता की कमी के लक्षण

– पत्तियों का आकार छोटा, मुड़ी हुई, नसों में नेक्रोसिस व नसों के बीच पीली धारियों का दिखाई पड़ना।

– गेहूँ में ऊपरी 3–4 पत्तियों का पीला पड़ना।

– फलों का आकार छोटा व बीज की पैदावार कम होना।

– मक्का एवं ज्वार के पौधों में ऊपरी पत्तियाँ सफेद हो जाती है।

– धान में जिंक की कमी से खैरा रोग हो जाता है। लाल, भूरे रंग के धब्बे दिखते हैं।

तांबा के कार्य

– यह इंडोल ऐसीटिक अम्ल वृद्धिकारक हार्मोन के संष्लेशण में सहायक है।

– ऑक्सीकरण–अवकरण क्रिया को नियमितता प्रदान करता है।

– अनेक एन्जाइमों की क्रियाशीलता बढ़ाता है। कवक रोगों के नियंत्रण में सहायक है।

– पौधों में विटामीन 'ए' के निर्माण में वृद्धि करता है।

– अनेक एन्जाइमों का घटक है।

तांबा की कमी के लक्षण

– फलों के अन्दर रस का निर्माण कम होना। नींबू जाति के फलों में लाल–भूरे धब्बे अनियमित आकार के दिखाई देते हैं।

– अधिक कमी के कारण अनाज एवं दाल वाली फसलों में रिक्लेमेशन नामक बीमारी होना।

बोरोन के कार्य

– पौधों में शर्करा के संचालन। परागण एवं प्रजनन क्रियाओं में सहायक है।

– दलहनी फसलों की जड़ ग्रन्थियों के विकास में सहायक है।

– यह पौधों में कैल्शियम एवं पोटेशियम के अनुपात को नियंत्रित करता है।

– यह डी.एन.ए., आर.एनए., ए.टी.पी. पेक्टिन व प्रोटीन संष्लेशण में सहायक है।

– कोशिका विभाजन को प्रभावित करता है।

– कैल्शियम के अवशेषण और पौधों द्वारा इसके उपयोग को प्रभावित करता है।

– कोशिका झिल्ली की पारगम्यता बढ़ाता है।

बोरोन की कमी के लक्षण

– पौधे की ऊपरी बढ़वार का रुकना, इन्टरनोड की लम्बाई का कम होना।

– पौधों में बौनापन होना। जड़ का विकास रुकना।

- बोरेन की कमी से चुकन्दर में हर्टराट, फूलगोभी में ब्राउनिंग या खोखला तना एवं तम्बाकू में टापसिकनेस नामक बीमारी का लगना।

मैंगनीज के कार्य

- क्लोरोफिल, कार्बेहाईड्रेट व मैंगनीज नाइट्रेट के स्वागीकरण में सहायक है।
- पौधों में ऑक्सीकरण–अवकरण क्रियाओं में उत्प्रेरक का कार्य करता है।
- प्रकाश संश्लेषण में सहायक है।
- प्रकाश और अंधेरे की अवस्था में पादप कोशिकाओं में होने वाली क्रियाओं को नियंत्रित करता है।
- नाईट्रोजन के उपापचय और क्लोरोफिल के संश्लेषण में भाग लेने वाले एंजाइमों की क्रियाशीलता बढ़ा देता है।
- पौधों में होने वाली अनेक महत्वपूर्ण एंजाइमयुक्त और कोशिकीय प्रतिक्रियाओं के संचालन में सहायक है।
- कार्बोहाईड्रेट के ऑक्सीकरण के फलस्वरूप कार्बन डाईआक्साइड और जल का निर्माण करता है।

मैंगनीज की कमी के लक्षण

- पौधों की पत्तियों पर मृत उतकों के धब्बे दिखाई पड़ते हैं।
- अनाज की फसलों में पत्तियाँ भूरे रंग की व पारदर्शी होती है तथा बाद में उसमें ऊतक गलन रोग पैदा होता है।
- जई में भूरी चित्ती रोग, गन्ने में अंगमारी रोग तथा मटर में पैंक चित्ती रोग उत्पन्न होते हैं।

मोलिब्डेनम के कार्य

- यह पौधों में एन्जाइम नाइट्रेट रिडक्टेज एवं नाइट्रोजिनेज का मुख्य भाग है।
- यह दलहनी फसलों में नत्रजन स्थिरीकरण, नाईट्रेट एसीमिलेशन व कार्बोहाइड्रेट मेटाबोलिज्म क्रियाओं में सहायक है।
- पौधों में विटामीन–सी व शर्करा के संश्लेषण में सहायक है।

मोलिब्डेनम की कमी के लक्षण

- सरसों जाति के पौधों व दलहनी फसलों में मोलिब्डेनम की कमी के लक्षण जल्दी दिखाई देते हैं।
- पत्तियों का रंग पीला हरा या पीला हो जाता है तथा इस पर नारंगी रंग का चितकबरापन दिखाई पड़ता है।
- टमाटर की निचली पत्तियों के किनारे मुड़ जाते हैं तथा बाद में मोल्टिंग व नेक्रोसिस रचनाएँ बन जाती है।
- इसकी कमी से फूल गोभी में व्हिपटेल एवं मूली में प्याले की तरह रचनाएँ बन जाती है।
- नींबू जाति के पौधों में मोलिब्डेनम की कमी से पत्तियों में पीला धब्बा रोग लगता है।

तालिका 3: विभिन्न उर्वरकों में सुक्ष्म पोषक तत्वों की मात्रा

क्र.सं.	स्त्रोत	पोषक तत्व	मात्रा (प्रतिशत)
1.	जिंक सल्फेट	जस्ता	21.0
2.	मैंगनीज सल्फेट	मैंगनीज	30.5
3.	अमोनियम मोलीब्डेड	मोलिब्डेनम	52.0
4.	बोरेक्स	बोरोन	10.5
5.	सोल्यूबोर	बोरोन	19.0
6.	कॉपर सल्फेट	तांबा	24.0
7.	फेरस सल्फेट	लोहा	19.5
8.	जिंक सल्फेट मोनोहाइड्रेट	जस्ता	33.0
9.	जिंक फॉस्फेट	जस्ता	19.5
10.	जिंक चिलेट (इडीटीए)	जस्ता	12.0
11.	आयरन चिलेट (इडीटीए)	लोहा	12.0
12.	जिंकेटेड यूरिया	जस्ता+नाइट्रोजन	2.0 जिंक+43 नाइट्रोजन
13.	बोरोनेटेड	बोरोन+फास्फोरस	0.18 बोरोन+16.0 फास्फोरस

मृदा में सुक्ष्म पोषक तत्व प्रबंधन

सुक्ष्म पोषक तत्वों की कमी का निदान रासायनिक उर्वरकों, कार्बनिक खादों के प्रयोग एवं सुक्ष्म पोषक तत्वों की कमी को सहन करने वाली फसलों को उगाकर किया जा सकता है। सुक्ष्म पोषक तत्वों को प्रदान करने वाले रासायनिक उर्वरक एवं उनमें सुक्ष्म पोषक तत्वों की मात्रा तालिका 3 में दर्शाई गयी है।

जस्ता : भारतीय मृदाओं में जस्ते की औसत मात्रा 1 पीपीएम के लगभग पाई जाती है। मृदा में जस्ते की मात्रा 0.5 पीपीएम से कम होने पर इसकी कमी के लक्षण दिखाई देने लगते हैं। पौधों में जस्ते की कमी की क्रांतिक मात्रा 20 पीपीएम होती है। जस्ता उर्वरकों के विभिन्न अकार्बनिक स्त्रोतों में जिंक सल्फेट हैप्टाहाइड्रेट सभी प्रकार की मृदाओं एवं फसलों में जस्ते की कमी को दूर करने में काफी दक्ष पाया गया है। मोनोहाइड्रेट एवं हेप्टाहाइड्रेट जिंक सल्फेट की दक्षता मृदा प्रयोग अथवा पर्णीय छिड़काव दोनो रूपों में समान पाई गई है। जिंक ऑक्साइड जड़ों एवं बीज उपचार के रूप में जिंक सल्फेट की अपेक्षा अधिक प्रभावी होता है।

जस्ता उर्वरकों की मात्रा, प्रयोग समय एवं विधि

जस्ते की मात्रा जस्ते की कमी, मृदा प्रकार एवं फसल आदि पर निर्भर करती है। अधिकांश दशाओं में 5.5 कि.ग्रा. जस्ता प्रति हैक्टर एक आदर्श मात्रा है। धान, मक्का एवं गेहुँ के लिए।

11 कि.ग्रा., सोयाबीन, सरसों, राया एवं सूर्यमुखी के लिए 5.5 कि. ग्रा. एवं मूँगफली एवं अलसी के लिए 2.5 कि.ग्रा. जस्ता/हैक्टर मात्रा सिफारिश की गई है। मृदा में जस्ते का प्रयोग बुवाई से पूर्व करना चाहिए। खड़ी फसल में कमी के लक्षण दिखाई देने पर।

0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट के घोल का छिड़काव 10 दिन के अन्तराल पर 2–3 बार करना चाहिए। जिंक ऑक्साइड की 2–4 प्रतिशत स्लरी में बुवाई से पूर्व बीजों को डुबोने से भी जस्ते की कमी को दूर किया जा सकता है।

लौहा : लौहे की कमी क्षारीय, चुनेदार मृदाओं एवं कम कार्बनिक पदार्थ वाली मृदाओं में फसल उत्पादन में मुख्य बाधा है। मृदा एवं पौधों में इसकी क्रांतिक मात्रा क्रमशः 4.5 एवं 50 पीपीएम है। लौहे की कमी को दूर करने के लिए प्रयोग किए जाने वाले मुख्य स्त्रातों में आयरन सल्फेट, आयरन–इडीटीए, पायराइट आदि उपलब्ध है।

लौहा उर्वरकों की मात्रा, प्रयोग, समय एवं विधि

लौहे की कमी की पूर्ति मृदा अनुप्रयोग या पर्णीय छिड़काव दोनों विधियों से की जा सकती है। धान, गेहूँ, सोयाबीन, मूँगफली, गन्ना, नींबू आदि में आयरन सल्फेट अथवा आयरन–चिलेट का पर्णीय छिड़काव, मृदा अनुप्रयोग की अपेक्षा अधिक दक्ष पाया गया है। मृदा में अनुप्रयोग की मात्रा (50–150 कि.ग्रा. आयरन सल्फेट प्रति हैक्टर), पर्णीय छिड़काव (1–2 प्रतिशत आयरन सल्फेट) की अपेक्षा काफी अधिक होने के कारण मृदा अनुप्रयोग आर्थिक रूप से लाभकारी नहीं है। लौहे की कमी को दूर करने में आयरन–चिलेट अन्य अकार्बनिक स्त्रोतों की अपेक्षा अधिक दक्ष होता है। परन्तु अधिक महँगे होने के कारण किसान इसका प्रयोग नहीं कर पाते हैं। धान की नर्सरी में आयरन–क्लोरोसीस को दूर करने के लिए 1–2 प्रतिशत आयरन सल्फेट का 7 दिन के अन्तराल से पर्णीय छिड़काव काफी प्रभावी सिद्ध हुआ है।

मैंगनीज : मैंगनीज की कमी पंजाब में मक्का– गेहुँ या मूँगफली–गेहुँ फसल चक्र के स्थान पर धान–गेहुँ फसल पद्धति के अधिक पारगम्य क्षारीय मृदाओं में सघन खेती के फलस्वरूप उत्पन्न हुई है। मैंगनीज के विभिन्न स्त्रोत मैंगनीज सल्फेट, मैंगनीज फ्रिट्स तथा मैंगनीज ऑक्साइड आदि है। मैंगनीज सल्फेट का मृदा अनुप्रयोग, मैंगनीज फ्रिट्स एवं मैंगनीज ऑक्साइड की अपेक्षा क्रमशः 1.5 एवं 10 गुणा अधिक प्रभावी सिद्ध हुआ है।

मैंगनीज उर्वरकों की मात्रा, समय एवं प्रयोग विधि

मैंगनीज सल्फेट का मृदा में अनुप्रयोग एवं पर्णीय छिड़काव दोनों ही मैंगनीज की कमी को दूर करने में समान रूप से कारगर सिद्ध हुए हैं। मृदा अनुप्रयोग आर्थिक रूप से महँगा होता है। मैंगनीज सल्फेट का 0.05 से 0.1 प्रतिशत घोल का 3–4 बार पर्णीय छिड़काव इसके 25–75 कि.ग्रा./हैक्टर मृदा में प्रयोग के बराबर दक्ष पाया गया है।

बोरोन : बोरोन की कमी चुनेदार, कम कार्बनिक पदार्थ वाली एवं अम्लीय मृदाओं में पाई गयी है। क्रुसीफेरी कुल एवं दलहनी फसलों में अन्य फसलों की अपेक्षा बोरोन की कमी अधिक प्रदर्शित होती है। विभिन्न फसल पद्धतियों में फल वृक्षों के अन्तर्गत अन्य खाद्य फसलों की अपेक्षा अधिक बोरोन की कमी होती है। बोरोन के विभिन्न स्त्रोतों में बोरेक्स, सोडियम टेट्रा बोरेट एवं सोडियम बोरेट मृदा अनुप्रयोग एवं बोरिक एसिड पर्णीय छिड़काव के लिए प्रयोग में लिए जाते हैं।

धान में जस्ता की कमी के लक्षण

मक्का में लौहा कमी के लक्षण

फुलगोभी में मोलिब्डेनम की कमी के लक्षण

गेहुँ में बोरोन की कमी के लक्षण

गेहुँ में मैंगनीज की कमी के लक्षण

गेहुँ में तांबा की कमी के लक्षण

फसलों में सुक्ष्म पोषक तत्वों की कमी के लक्षण

बोरोन उर्वरकों की मात्रा, प्रयोग समय एवं विधि

बोरोन उर्वरकों का बुवाई से पूर्व मृदा में अनुप्रयोग इसके पर्णीय छिड़काव की अपेक्षा अधिक प्रभावी होता है, परन्तु खड़ी फसल में कमी के लक्षण दिखाई देने पर बोरिक एसिड का 0.2 प्रतिशत घोल का पुष्पन के समय पर्णीय छिड़काव किया जा सकता है। विभिन्न फसलों में बोरोन की कमी को दूर करने के लिए 1.5 से 2.0 कि.ग्रा. बोरोन/हैक्टर की दर से बुवाई से पूर्व मृदा अनुप्रयोग करना चाहिए।

तांबा: तांबे की कमी यदा–कदा रेतीली या अधिक कार्बनिक पदार्थ युक्त मृदाओं में दिखाई देती है। कॉपर–सल्फेट मृदा एवं पर्णीय छिड़काव के लिए तांबे का मुख्य स्त्रोत है मृदा में 5 कि.ग्रा. कॉपर–सल्फेट का अनुप्रयोग, पर्णीय छिड़काव की अपेक्षा अधिक कारगर होता है। सब्जियों एवं विभिन्न फसलों में फफूँदनाशक के रूप में प्रयोग किए जाने वाले बोरडेक्स मिश्रण से भी तांबे की पूर्ति हो जाती हैं। चूँकि तांबा पौधों में अचालक होता है अतः इसके कई पर्णीय छिड़काव करने चाहिए।

मोलिब्डेनम: मोलिब्डेनम की कमी सब्जियों, दलहनों एवं तिलहनों में खाद्यानों की अपेक्षा अधिक पाई जाती है। अम्लीय मृदाओं में इसकी कमी पाई जाती है। मोलिब्डेनम की कमी को दूर करने के लिए अमोनियम मोलिब्डेट एवं सोडियम मोलिब्डेट मुख्य स्त्रोत है। मृदा अनुप्रयोग के लिए 0.4 से 0.5 कि.ग्रा. मोलिब्डेनम प्रति हैक्टर की दर से प्रयोग किया जाता है। अमोनियम मोलिब्डेट एवं सोडियम मोलिब्डेट का फास्फोरस उर्वरकों के साथ मिश्रण करने से इन की दक्षता में वृद्धि हो जाती है।

समाप्त

जिस प्रकार बिना जल के धान नहीं उगता उसी प्रकार बिना विनय के प्राप्त की गई विद्या फलदायी नहीं होती।

महानगरीय ठोस अपशिष्ट पदार्थों से कम्पोस्ट बनाने की सस्ती एवं टिकाऊ पद्धति

यशपाल सिंह, संजय अरोड़ा, विनय कुमार मिश्र, हिमांशु दीक्षित एवं रवीन्द्र कुमार गुप्ता

भाकृअनुप–केन्द्रीय मुदा लवणता अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, लखनऊ (उत्तर प्रदेश)

E-mail : ypsingh_5yahoo.co.in

भारत के नगरों एवं महानगरों में बढ़ती जनसंख्या, रहन–सहन, खानपान के स्तर में सुधार आदि कारणों से महानगरीय ठोस अपशिश्ट पदार्थों की मात्रा में दिनोंदिन वृद्धि होती जा रही है। भारत में प्रतिवर्श लगभग 90 लाख टन अपशिश्ट पदार्थ उत्पन्न हो रहे हैं तथा उत्तर प्रदेश में 5,515 टन प्रतिदिन अपशिश्ट पदार्थ उत्पन्न हो रहे हैं। इन अपशिश्ट पदार्थों का निस्तारण एक गंभीर समस्या है क्योंकि इनको शहरों की सीमा के बाहर खुले में फेंक दिया जाता है जिससे इनसे रिसने वाले पदार्थ भूमि में जाकर भूजल को प्रदूशित करते हैं जिसको पीने से स्वास्थ्य संबंधी गंभीर बीमारियों का सामना करना पड़ रहा है। इसके अलावा यह वातावरणीय प्रदूशण को भी बढ़ा रहे हैं। खुले में फेंके जाने के कारण जीव जन्तुओं के स्वास्थ्य पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। इस समस्या से निपटने के लिये उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा विभिन्न शहरों में ठोस अपशिश्ट प्रबंधन इकाईयों की स्थापना की गई है जोकि इन अवशेशों से कम्पोस्ट का उत्पादन कर रही है परन्तु इन इकाईयों द्वारा उत्पादित कम्पोस्ट का बाजार मूल्य अधिक होने के कारण इसका उपयोग कुछ फसलों तक ही सीमित हो गया है।

केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र लखनऊ के वैज्ञानिकों द्वारा इन ठोस अपशिश्ट पदार्थों को कृशि अवशेशों के साथ मिलाकर कम्पोस्ट खाद बनाने का सफल प्रयास केन्द्र के शोध प्रक्षेत्र शिवरी फार्म पर किया गया जिसके आशातीत परिणाम प्राप्त हुये हैं।

प्रक्षेत्र पर कम्पोस्ट बनाने की विधि का मानकीकरण करने के लिये महानगरीय ठोस अपशिश्ट पदार्थों को लखनऊ शहर के 11 अलग–अलग डंपिंग क्षेत्र जैसे दुबग्गा, पल्टन छावनी, सदर बाजार, तेली बाग, तेलीबाग भट्टा मैदान, रश्मि खंड, कांशीराम स्मृति उपवन, आलम बाग चौराहा, मोती झील, बुद्धा पार्क तथा हाथी पार्क से एकत्र करने एक मिश्रित नमूना तैयार किया गया। नमूने का भौतिक परीक्षण करने के लिए उसे क्षय होने वाले एवं न क्षय होने वाले पदार्थों में बांटा गया, जिसके परिणाम तालिका 1 में दिए गए हैं।

तालिका 1 से स्पष्ट है कि प्राप्त नमूने में सड़ने वाले पदार्थों (कार्बनिक पदार्थ, कागज, कार्ड–बोर्ड, लकड़ी/टहनियां) की मात्रा 37.5 प्रतिशत थी, जिससे महानगरीय अपशिष्ट खाद का निर्माण किया जा सकता है।

कच्चा महानगरीय ठोस अपशिष्ट पदार्थ

महानगरीय ठोस अपशिष्ट में भौतिक पदार्थ

कम्पोस्टिंग शेड

तालिका 1: महानगरीय ठोस अपशिष्ट पदार्थों के नमूने की भौतिक संरचना

पदार्थ	प्रतिशत मात्रा
कागज/कार्ड बोर्ड	5.0
प्लास्टिक	15.0
धातु	6.0
कांच	5.0
पत्थर/ईंट/कंकड़	36.5
कार्बनिक पदार्थ/कचरा	30.5
लकड़ी/टहनियाँ	2.0

इन सड़ने वाले पदार्थों को कृषि अवशेषों जैसे पेड़ों की पत्तियां, धान का पुआल, सरसों का भूसा आदि के साथ मिलाकर 12 फीट लंबे, 4 फीट चौड़े, तथा 2 फीट ऊंचे जालीदार गडढों में विभिन्न उपचारों के साथ भरा गया। इन पदार्थों से जल्दी खाद बनाने के लिये इसमें सूक्ष्म जीवीय घोल एवं केंचुओं को निम्न उपचारों के साथ इन गडढों में डाला गया तथा समय–समय पर नमी एवं तापमान को दर्ज किया गया।

$टी_1$– 100 प्रतिशत सड़ने वाले महानगरीय ठोस अपशिष्ट पदार्थ

कम्पोस्ट खाद बनाने की विधि :

महानगरीय ठोस अवशेष

⇩

महानगरीय ठोस अवशेषों से न सड़ने वाले पदार्थों को अलग करना।

⇩

सड़ने वाले पदार्थों का फसल अवशेषों के साथ मिश्रण तैयार करना।

⇩

मिश्रण को वर्मीबैड में केंचुए तथा सूक्ष्म जीवों के साथ भरना

⇩

कम्पोस्टिंग प्रक्रिया का निरीक्षण करना।

⇩

कम्पोस्ट खाद

$टी_2$– 100 प्रतिशत सड़ने वाले महानगरीय ठोस अपशिष्ट पदार्थ सूक्ष्मजीव

$टी_3$– 50 प्रतिशत सड़ने वाले महानगरीय ठोस अपशिष्ट पदार्थ 50 प्रतिशत कृषि अवशेष सूक्ष्मजीव

$टी_4$– 100 प्रतिशत सड़ने वाले महानगरीय ठोस अपशिश्ट पदार्थ केंचुए

$टी_5$– 50 प्रतिशत सड़ने वाले महानगरीय ठोस अपशिष्ट पदार्थ 50 प्रतिशत कृषि अवशेष केंचुए

$टी_6$– 100 प्रतिशत सड़ने वाले महानगरीय ठोस अपशिष्ट पदार्थ केंचुए सूक्ष्म जीव

$टी_7$– 50 प्रतिशत सड़ने वाले महानगरीय ठोस अपशिष्ट पदार्थ 50 प्रतिशत कृषि अवशेष सूक्ष्म जीव केंचुए।

गडढों में भरने के 120 दिनों के पश्चात् कम्पोस्ट बनकर तैयार हुई। उत्पादित कम्पोस्ट की रासायनिक संरचना का परीक्षण प्रयोगशाला में किया गया जिसका रासायनिक संगठन तालिका 2 में दिया गया है।

तालिका 2: 120 दिनों के पश्चात् उत्पादित कम्पोस्ट का रासायनिक संगठन

उपचार	पीएच	ईसी	कुल पोटेशियम (प्रतिशत)	कुल फास्फोरस (प्रतिशत)	कुल कार्बन (प्रतिशत)	कुल नत्रजन (प्रतिशत)	कार्बन : नत्रजन अनुपात
टी1	7.48	0.68	0.57	0.41	11.14	0.43	25.90
टी2	7.54	0.70	0.56	0.40	11.31	0.51	22.17
टी3	7.59	0.49	0.58	0.40	13.63	0.58	23.50
टी4	7.32	0.58	0.65	0.41	11.19	0.51	21.94
टी5	7.72	0.63	0.76	0.40	13.69	0.56	24.44
टी6	7.33	0.90	0.67	0.40	12.03	0.65	18.51
टी7	7.36	0.66	0.74	0.39	13.54	0.79	17.13

तालिका 3 : कम्पोस्ट बनाने की विधि का आर्थिक विश्लेषण

क्रियाएं	मात्रा	लागत (रुपये)
अपशिष्ट पदार्थों के लिए परिवहन का भुगतान	17.12 टन	1500*
अलगाव के लिए मजदूरी	17.12 टन	6500
कृषि अवशेष	5 टन	10000
गडढों की लागत	5	12500**
गडढे भरना एवं रखरखाव	30 आदमी	9000
केंचुए	5 कि.ग्रा.	1500
रोगाणुओं की लागत		400
गडढे भरने के लिए मजदूरी	60 आदमीप्रतिदिन	9000
कुल उत्पादन लागत (10 टन)	10 टन	41400
कुल उत्पादन लागत रुपये/कि.ग्रा.		4.14
*एक बार खर्च करना है, **स्वयं का घर का कचरा		

उपरोक्त विधि से बनाई गई कम्पोस्ट का आर्थिक विश्लेषण करने पर पाया गया कि एक हैक्टर के लिए आवश्यक 10 टन महानगरीय अपशिष्ट कम्पोस्ट बनाने में 41900 रूपये का खर्च आया, जिसे क्रमवार तालिका 3 में दिखाया गया है। जबकि किसान इस विधि को अपना कर कम्पोस्ट बनाने पर होने वाले खर्च को कम कर सकते हैं।

समाप्त

शिक्षा और प्रशिक्षण का एकमात्र उद्देश्य समस्या का समाधान होना चाहिए।

टिकाऊ कृषि उत्पादन के लिए उचित नाइट्रोजन प्रबंधन

राम किशोर फगोडिया, बाबू लाल मीना, कैलाश प्रजापत, राजेश कुमार मीना[1], अरिजित बर्मन एवं मनीष कुमार

भाकृअनुप–केन्द्रीय मुदा लवणता अनुसंधान संस्थान करनाल (हरियाणा)
[1]भाकृअनुप–राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा)
E-mail : ram.iari4874@gmail.com

नाइट्रोजन पौधों के लिए अनिवार्य पोषक तत्व है एवं वनस्पतियों के भार में लगभग 4 प्रतिशत एवं मानव शरीर भार में लगभग 3 प्रतिशत तक नाइट्रोजन पाया जाता है। मुख्य पोषक तत्व होने के कारण, कृषि उत्पादन में इसका महत्वपूर्ण योगदान है। नाइट्रोजन तत्व वायुमंडल में 78 प्रतिशत तक पाया जाता है। वायुमंडल में यह नाइट्रोजन निष्क्रिय अवस्था में होने के कारण, पौधे वायुमंडलीय नाइट्रोजन का स्थिरीकरण नहीं कर सकते हैं। भारत में अधिकतर मृदाओं में नाइट्रोजन की कमी पायी गयी है। जिसके कारण पौधों में नाइट्रोजन की पूर्ति नहीं हो पाती है। इसलिए नाइट्रोजन की कमी को पूरा करने एवं फसल की उत्पादकता में वृद्धि के लिए लगभग सभी फसलों में नाइट्रोजन के बाह्य उपयोग की आवश्यकता होती है। सन् 1950 से 2015 तक नाइट्रोजन उर्वरकों के उपयोग में विश्व स्तर पर 10 गुणा एवं भारत में 7 गुणा वृद्धि हुई है। खाद्यान्न की बढ़ती हुई मांग को पूरा करने के लिए 2050 तक नाइट्रोजन उर्वरकों का उपयोग कई गुणा बढ़ने की उम्मीद है। भारत में अनाज उत्पादन एवं नाइट्रोजन उर्वरकों के उपयोग में काफी निकट संबंध है। भारत में जैसे–जैसे नाइट्रोजन का उपयोग बढा है वैसे–वैसे ही अनाज के उत्पादन में भी वृद्धि हुई है।

नाइट्रोजन तत्व का वायुमंडल से जीवमंडल एवं जीवमंडल से वातावरण में लगातार प्रवाह होता रहता है। नाइट्रोजन तत्व का वायुमंडल से जीवमंडल एवं कार्बनिक यौगिक पदार्थ में और पुनः वायुमंडल में प्रवेश करने की गतिविधियों का विवरण नाइट्रोजन चक्रण द्वारा समझाया गया है (चित्र 1)। सामान्यतः यूरिया, यूरिक अम्ल, अमोनियम के यौगिक पदार्थों, नाइट्रोजन उत्पाद के व्युत्पन्न के अभिरूप में नाइट्रोजन पशुओं के अपशिष्ट पदार्थों का बहुत बड़ा संघटक है, कृषि उत्पादन प्रणाली के अनुसार नाइट्रोजन विभिन्न प्रकार के अभिरूपों में परिवर्तित पथो का चुनाव करता है।

पौधों में नाइट्रोजन के कार्य

नाइट्रोजन प्रमुख पोषक तत्व होने के कारण इसका पौधों के पूर्ण विकास के लिए विशेष महत्व है। पौधों में नाइट्रोजन के महत्वपूर्ण कार्य निम्न प्रकार है।

- नाइट्रोजन पौधों को गहरा हरा रंग प्रदान करता है एवं पौधों को रसीला बनाता है। जिससे पौधों की वृद्धि को बढ़ावा मिलता है।
- यह पादप कोशिका विभाजन के लिए आवश्यक है।
- अमीनो एसिड के निर्माण के लिए आवश्यक है जिससे पौधों में प्रोटीन का निर्माण होता है।
- ऊर्जा स्थानांतरण यौगिकों जैसे एडीनोसिन डाईफॉस्फेट (एडीपी) और एडीनोसिन ट्राइफॉस्फेट (एटीपी) का प्रमुख घटक है, जो ऊर्जा के उपयोग एवं स्थानांतरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।
- नाइट्रोजन न्यूक्लिक अम्ल (डीऑक्सीराइबोन्यूक्लिक अम्ल और राइबोन्यूक्लिक अम्ल) का भी घटक है जो पौधों के आनुवंशिक गुणों के स्थानांतरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।
- यह पर्णहरित का अवयव है जो प्रकाश संश्लेषण की क्रिया पूर्ण करने के लिए आवश्यक है।
- नाइट्रोजन विटामिनों का एक आवश्यक अवयव है।
- नाइट्रोजन पौधों की जड़ों के तंत्र को सुधारता है, जिसका पानी और पोषक तत्वों के अवशोषण में विशेष महत्व है।

पौधों में नाइट्रोजन की कमी के लक्षण

नाइट्रोजन की अनुपलब्धता या कम आपूर्ति होने से पौधों में इसकी कमी के कुछ लक्षण दिखाई देते हैं। फसल की शुरुआत में वृद्धि के दौरान नाइट्रोजन की कमी आती है तो फसल की उपज

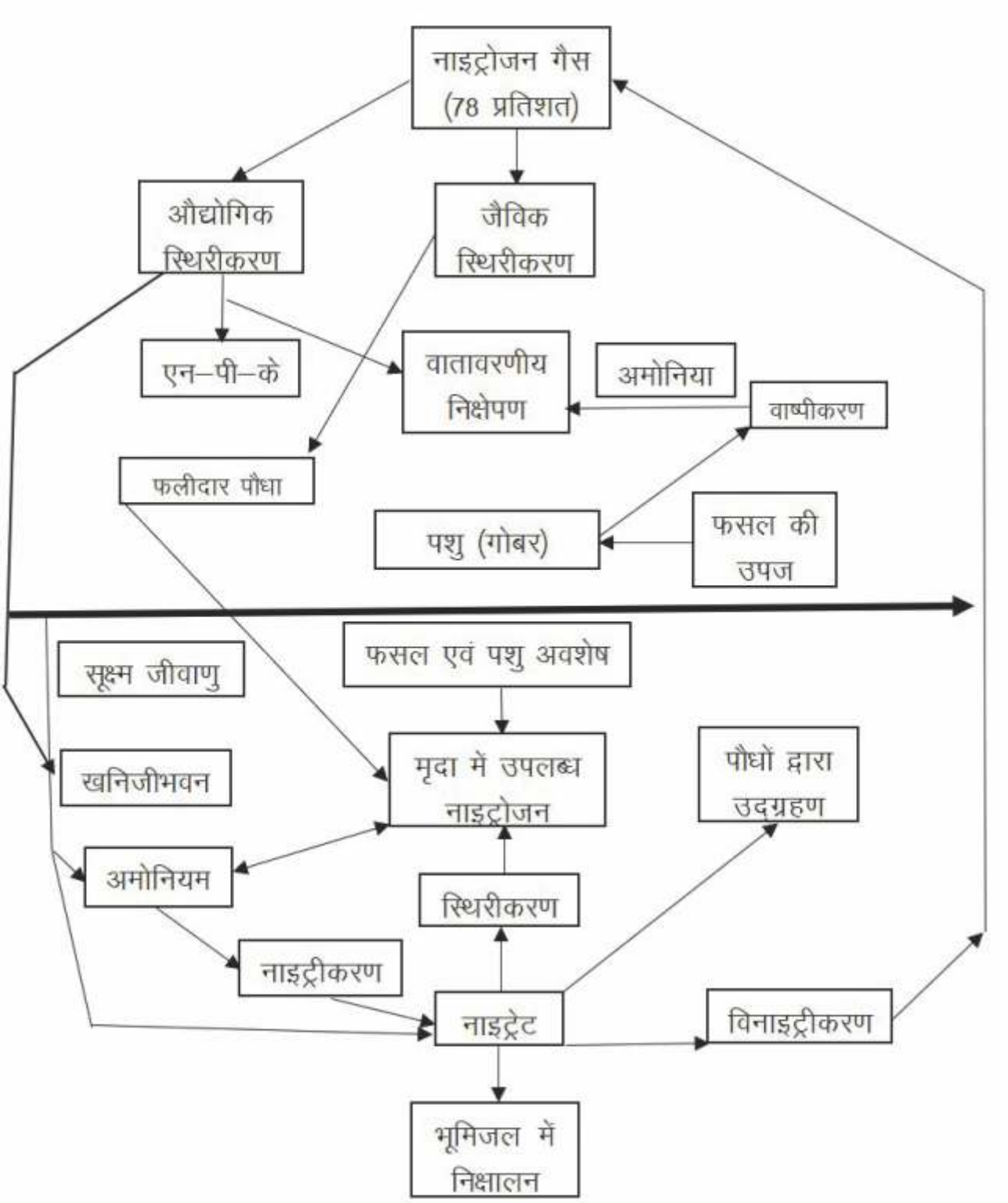

नाइट्रोजन के विभिन्न प्रकार के अभिरूप एवं पथ

नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करने वाले बायोफर्टिलाइजर का प्रवाह

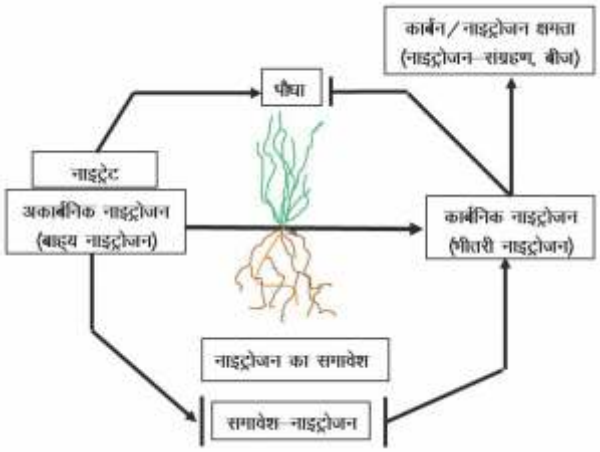

नाइट्रोजन उपयोग क्षमता की जैविक प्रणाली

एवं गुणवत्ता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। यदि नाइट्रोजन की कमी गंभीर है तो कमी के कुछ लक्षण दिखाई देते हैं जो निम्न प्रकार है।

- पौधों की वृद्धि में रुकावटः कोशिका विभाजन के लिए नाइट्रोजन आवश्यक है। इसकी कमी होने पर पौधों की वृद्धि सामान्य से कम हो जाती है और पत्तियां भी छोटी रह जाती है।
- पर्णहरितः पत्तियों में हरा रंगद्रव्य क्लोरोफिल के कारण होता है। नाइट्रोजन की कमी के कारण पौधों में क्लोरोफिल की कमी हो जाती है और पत्तियों का क्षेत्रफल भी कम हो जाता है जिससे प्रकाश संश्लेषण में कमी आती है।
- पत्तियों की हरिमाहीनताः नाइट्रोजन की कमी के लक्षण पहले नीचे के पत्तों पर दिखाई देते है क्योंकि, पुराने ऊतक पहले प्रभावित होते हैं। नाइट्रोजन की अधिक कमी के कारण पूरी पत्तियां पीली होकर एक साथ हरिमाहीन हो सकती है।
- प्रोटीन की कमीः कई फसलों में नाइट्रोजन की कमी के लक्षण से प्रोटीन की मात्रा में कमी होती है, जो फसल कटाई के बाद तक भी स्पष्ट नहीं होते हैं।

मृदाओं में नाइट्रोजन की कमी के कारण

मृदाओं में नाइट्रोजन की कमी भारत में सबसे आम समस्याओं में से एक है। अधिकांश भारतीय मृदाओं में यह आम तौर पर प्रचलित है। अधिकांश फसलों की आधुनिक किस्मों को पर्याप्त नाइट्रोजन उर्वरकों के अनुप्रयोग के बिना उगाने से मृदा में

तालिका 1: कार्बनिक एवं रासायनिक खादों में नाइट्रोजन की औसत मात्रा

कार्बनिक खाद	नाइट्रोजन (प्रतिशत)	रासायनिक उर्वरक	नाइट्रोजन (प्रतिशत)
गोबर की खाद	0.5	यूरिया	46
फार्म कम्पोस्ट	0.5	निर्जल अमोनिया	82
मानव विष्ठा	5.5	सोडियम नाइट्रेट	16
गटर का कीचड़	4.0	अमोनियम नाइट्रेट	33–35
भेड़ एवं बकरी की खाद	3.5	अमोनियम सल्फेट	20.6
कुक्कुट खाद	3.0	अमोनियम सल्फेट नाइट्रेट	26
नीम केक	5.2	अमोनियम क्लोराइड	26
अरंडी केक	4.3	डायमोनियम फॉस्फेट (डीएपी)	16
करंज केक	3.9	मोनोअमोनियम फॉस्फेट (एमएपी)	12
कपास केक	3.9	कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट (किसान खाद)	25–28

नाइट्रोजन की कमी हो जाती है। निम्न प्रकार की मिट्टीयों में नाइट्रोजन की कमी विशेष रूप से पायी जाती है।

- मृदा में बहुत कम कार्बनिक पदार्थ की मात्रा का पाया जाना।
- अम्लीय, क्षारीय, लवणीय एवं चुने वाली मिट्टियों में मूल रूप से नाइट्रोजन की कम आपूर्ति होती है।
- क्षारीय और काली मिट्टीयां जिसमें कार्बनिक पदार्थ कम मात्रा में होने से अमोनिया का वाश्पीकरण भी ज्यादा होता है।
- प्रायः नाइट्रोजन की कमी पौधों के महत्वपूर्ण विकास चरणों में होती है।
- नाइट्रोजन उर्वरकों का उपयोग जहाँ बड़ी मात्रा में किया जाता है वहाँ भी नाइट्रोजन की कमी हो सकती है जोकि नाइट्रोजन का गलत समय या तरीके से उपयोग के कारण होती है।

नाइट्रोजन के स्रोत

सामान्यतः कार्बनिक खाद, हरी खाद, जैविक खाद एवं रासायनिक उर्वरक नाइट्रोजन के चार प्रमुख स्रोत है।

- कार्बनिक खाद में पौधों और जानवरों के अपशिष्ट पदार्थों को नाइट्रोजन के स्रोत के रूप में उपयोग किया जाता है। अलग–अलग तरह के कार्बनिक खादों की औसत नाइट्रोजन तालिका 1 में उल्लेखित है।
- हरी खाद में पौधों एवं पौधों की पत्तियों को खाद के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। हरी खाद दो प्रकार की होती है। यथास्थान हरी खाद और हरी पत्ती खाद। यथास्थान हरी खाद में पौधों को जिन खेतों में उगाया जाता है, उसी खेत में पौधों को फूल वाली अवस्था में मृदा में मिला दिया जाता है। आम तौर पर ढैंचा, चौलाई, बरसीम एवं रिजका फसलों का इस्तेमाल यथास्थान हरी खाद के लिए किया जाता है। हरी पत्ती खाद में पेड़, झाड़ियों और जड़ी–बूटियों की हरी पत्तियों (उदाहरणः ग्लिरिसिडिया, सुबबुल, सेसबेनिया, करंज, महुआ) को अन्य जगह से एकत्र करके फसल वाले खेत की मृदा में मिलाया जाता है। पत्तियों की खाद पोषक तत्वों की मात्रा में उच्च गुणवता की होती है।
- नाइट्रोजन स्थिरीकरण बायोफर्टिलाइजर में नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करने वाले जीवों की जीवित कोशिकायें शामिल होती है, जिनका उपयोग वायुमंडलीय नाइट्रोजन का सहजीवी और गैर–सहजीवी रूप से स्थिरीकरण करने के लिए किया जाता है। विभिन्न नाइट्रोजन स्थिरीकरण बायोफर्टिलाइजर का उल्लेख रेखाचित्र में किया गया है।

रासायनिक उर्वरक के रूप में नाइट्रोजन के बहुत स्रोत उपलब्ध है जिनमें से मुख्य नाइट्रोजन उर्वरक तालिका 1 में दिखाये गये हैं। इसमें से निर्जल अमोनिया नाइट्रोजन का सबसे सस्ता स्रोत है एवं यह निक्षालन और विनाइट्रीकरण के लिए संवेदनशील भी नहीं है। जबकि यूरिया एवं यूरिया अमोनियम नाइट्रेट के विलयन निर्जल अमोनिया से ज्यादा महंगे होते है क्योंकि इनमे कुछ मात्रा में कम नाइट्रोजन होता है। इसके साथ–साथ इनमें नाइट्रोजन की हानि भी ज्यादा होती है।

नाइट्रोजन उपयोग क्षमता

नाइट्रोजन उपयोग क्षमता का अभिप्राय पौधों द्वारा उपयोग किए जाने वाले नाइट्रोजन उर्वरक की मात्रा और नाइट्रोजन उर्वरक की क्षति के बीच का आपेक्षित संतुलन है। नाइट्रोजन उपयोग क्षमता, टिकाऊ कृषि के लिए पौधों का एक विशिष्ट अभिलक्षण है। पौधों में डाले गये उर्वरक का कुछ ही भाग पौधों द्वारा उपयोग होता है, बाकी बचा हुआ भाग वातावरण में विलुप्त हो जाता है। नाइट्रोजन क्षति के परिणामों एवं अच्छी उपज में अस्थिरता के कारण नाइट्रोजन उपयोग क्षमता एक परिस्थिति से दूसरी परिस्थिति में भिन्न होती है। नाइट्रोजन क्षति की दक्षता, मौसम एवं मृदा के विभिन्न प्रकार से प्रभावित होते हैं। सम्भवतः नाइट्रोजन उपयोग क्षमता फसलों की प्रजाति, मृदा के प्रकार, तापमान, नाइट्रोजन उर्वरक की प्रयोग विधि, मृदा की नमी एवं फसलों के चक्रण से प्रभावित होती है। नाइट्रोजन के उद्ग्रहण एवं उपयोग और उपज में वृद्धि की पर्याप्त मात्रा को सुनिश्चित करने हेतु, फसलों की माँग एवं नाइट्रोजन की उपलब्धता का संकलन करना अत्यंत आवश्यक है। नाइट्रोजन उर्वरक की अत्यधिक मात्रा एवं उपयोग का अनुचित समय, नाइट्रोजन उपयोग क्षमता के स्तर में घटाव के प्रमुख कारक है। नाइट्रोजन के स्रोत, उर्वरक उपयोग की विधि, फसलों की उत्पति प्रणाली आदि नाइट्रोजन उपयोग क्षमता के कुछ प्रभावकारी कारक है। वैकल्पिक रूप से नाइट्रोजन के प्रति इकाई के प्रयोग से होने वाली उपज के संबंध से नाइट्रोजन उपयोग क्षमता को प्रकट किया जा सकता है।

नाइट्रोजन उपयोग दक्षता की कमी के परिणाम

नाइट्रोजन उर्वरकों का उपयोग फसलों की अच्छी उपज के लिए किया जाता है, परन्तु उसका कुछ हिस्सा ही पौधों द्वारा उपयोग होता है और बाकी हिस्सा विभिन्न मार्गों जैसे निक्षालन, वाष्पीकरण, विनाइट्रीकरण, स्थिरीकरण आदि द्वारा वातावरण में विलुप्त हो जाता है। नाइट्रोजन की क्षति से न केवल मृदा के उपजाऊपन और पौधे की उपज में कमी आती है, बल्कि पर्यावरण भी अत्यंत प्रभावित होता है। नाइट्रोजन उर्वरकों के कम उपयोग दक्षता के कारण पर्यावरण में होने वाले दुष्परिणाम निम्न प्रकार है।

- **भूजल प्रदूषण** – नाइट्रोजन की वह मात्रा जो पौधों के जड़क्षेत्र से बाहर हो गयी है वह भूजल प्रदूषण का कारण बनती है। नाइट्रोजन का निक्षालन इसका सबसे सामान्य कारण है जो अक्सर उच्च पारगम्यता एवं हल्की संरचना वाली रेतीली मिट्टी में देखा जाता है।
- **यूट्रोफिकेशन** – यह विशेष रूप से नाइट्रोजन और फॉस्फोरस पोषक तत्वों के साथ जल निकायों का संवर्धन होना है। जिसके कारण जलीय शैवाल का अत्यधिक विकास होता है। इससे पानी में ऑक्सीजन की कमी और जहरीले पदार्थ का निर्माण हो जाता है जो सीधे जलीय जीवन के लिए हानिकारक है। ज्यादा वर्षा के दौरान कृषि भूमि से अपवाह जल के साथ उर्वरक नाइट्रोजन का नुकसान यूट्रोफिकेशन का एक प्रमुख कारक है।
- **ग्रीनहाउस प्रभाव** – नाइट्रोजन चक्र के दौरान नाइट्रीकरण एवं डिनाइट्रीकरण प्रक्रिया के माध्यम से नाइट्रोजन ऑक्साइड का निर्माण होता है जोकि एक महत्वपूर्ण ग्रीनहाउस गैस है जो वैश्विक जलवायु परिवर्तन के लिए जिम्मेदार है। वातावरण में नाइट्रस ऑक्साइड के अत्यधिक उत्सर्जन से ओजोन परत का भी क्षरण होता है।
- **नाइट्रोजन निक्षेपण** – कृषि क्षेत्रों में नाइट्रोजन के उपयोग से वाष्पशीलता के माध्यम से वातावरण में अमोनिया का उत्सर्जन होता है जो सल्फर के ऑक्साइड के साथ पृथ्वी की सतह पर वापस लौटता है। पारिस्थितिकी तंत्र में बड़े पैमाने पर वायुमंडलीय निक्षेप अप्रत्यक्ष ग्लोबल वार्मिंग और अम्लीय वर्षा का कारण बनता है।

नाइट्रोजन का सही तरीके से संचालन करने हेतु नाइट्रोजन उर्वरक के स्रोतों पर ध्यान देना अत्यंत आवश्यक है ताकि नाइट्रोजन की क्षति को कम किया जा सके। अतः कृषि प्रणाली के अन्तर्गत दो बातों पर ध्यान देना अति आवश्यक है, नाइट्रोजन क्षति में घटाव एवं नाइट्रोजन उपयोग क्षमता में बढ़ोत्तरी।

नाइट्रोजन उपयोग क्षमता के सुधार का प्रयोजन

- प्रजाति विशेष श्रेणी द्वारा नाइट्रोजन उपयोग क्षमता में वृद्धि।
- नाइट्रोजन अनुक्रियाशील प्रजातियों के चयन द्वारा नाइट्रोजन उपयोग क्षमता में सुधार।
- जैविक नाइट्रोजन यौगिकीकरण द्वारा नाइट्रोजन उपयोग क्षमता में वृद्धि।
- यूरिया के अतिरिक्त अन्य नाइट्रोजन स्रोतों का उपयोग जिनका वाष्पीकरण कम हो।
- नाइट्रीकरण अवरोधी के उपयोग करने से विनाइट्रीकरण एवं निक्षालन द्वारा होने वाली क्षति में कमी आती है।
- विभिन्न प्रकार की प्रमुख मृदा के आधार पर परिवर्तनशील नाइट्रोजन का व्यवस्थापन।
- नाइट्रोजन के व्यवस्थापन के आधार पर नाइट्रोजन की मात्रा का उपयोग।
- पत्तियों के विश्लेषण द्वारा फसलों में नाइट्रोजन के उद्ग्रहण की जाँच।

नाइट्रोजन क्षति रोकने हेतु उपयुक्त उपाय

- सतह पर यूरिया का उपयोग न करना।
- यूरिया एवं अमोनियम सल्फेट के मिश्रण का उपयोग करना।
- नीम लेपित यूरिया का उपयोग करना, जो वर्षा के दौरान ही नाइट्रोजन का विमोचन करता है।
- अति संवेदनशील मृदा में उर्वरक पहले से उपयोग करना, ताकि फसलें निक्षालन से पूर्व कुछ हद तक नाइट्रोजन का उद्ग्रहण कर सके।
- नाइट्रोजन उर्वरक का उपयोग एक ही बार में न करना।

- नियंत्रित उर्वरक उत्पाद का उपयोग करना ।
- नाइट्रोजन उर्वरकों को वाष्पीकरण के नुकसान से बचाने के लिए मिट्टी में गहराई से रखा जाना चाहिए।
- बुवाई के समय नाइट्रोजन को एक बार में उपयोग नहीं करना चाहिए। इसे फसल की आवश्यकता के अनुसार जब सबसे अधिक आवश्यकता हो, उसी समय देना चाहिए
- खड़ी फसलों में लीफ कलर चार्ट (एलसीसी) के आधार पर भी नाइट्रोजन दी जा सकती है।
- फसल चक्र में कम से कम एक दलहन फसल को शामिल करके एक ही फसल चक्र से बचना चाहिए।
- लंबी अवधि के लिए मौसम की पूर्व सूचना से अवगत रहना चाहिए।

निष्कर्ष

पौधों के विकास के लिए नाइट्रोजन एक महत्वपूर्ण पोषक तत्व है और इसका दक्षतापूर्वक प्रयोग फसल पद्धति के आर्थिक टिकाऊपन के लिए अति आवश्यक है। नाइट्रोजन उर्वरक खास तौर पर घुलनशील होने के कारण पौधों द्वारा आसानी से ग्रहण हो जाता है। परन्तु दूसरी ओर घुलनशील उर्वरकों की कुछ मात्रा वातावरण में विभिन्न तरीकों जैसे निक्षालन, वाष्पीकरण, विनाइट्रीकरण आदि द्वारा व्यर्थ हो जाती है जिसके फलस्वरूप पानी के स्रोतों की गुणवता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। वर्तमान में नाइट्रोजन क्षति की समस्या अत्यंत विकराल रूप लेने की कगार पर है। मृदा एवं जल के उचित प्रबंधन से नाइट्रोजन की क्षति को कुछ हद तक कम करके, नाइट्रोजन ग्रहण की दक्षता एवं उपयोग क्षमता को बढ़ा कर नाइट्रोजन की क्षति को कम किया जा सकता है। नाइट्रोजन उपयोग क्षमता के विकास से कम उर्वरक के उपयोग से भी उपज में बढ़ोत्तरी होगी एवं नाइट्रोजन, क्षति की समस्या भी दूर हो जाएगी। अतः यदि कम मात्रा में नाइट्रोजन का उपयोग दक्षतापूर्वक हो जाए तो क्षति में घटाव के साथ–साथ धन एवं पर्यावरण भी सुरक्षित रहेगा।

समाप्त

विचारों को मूर्त रूप देने की क्षमता ही सफलता का रहस्य है।

धान की सीधी बिजाई : बदलते पर्यावरण परिवेश में उत्तम प्रौधोगिकी

राजेश कुमार मीना, राम किशोर फगोडिया[1], बाबू लाल मीना[1] एवं कैलाश प्रजापत[1]

भाकृअनुप–राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा)
[1]भाकृअनुप–केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान करनाल (हरियाणा)

E-mail : rajeshkumar2793@gmail.com

खाद्य एवं जल सुरक्षा दोनों ही बदलते पर्यावरण परिवेश में एक महत्वपूर्ण समस्या के रूप में प्रकट हो रहे हैं। एक ओर जनसंख्या का तीव्र विस्फोट एवं दूसरी ओर घटते प्राकृतिक संसाधन हमारे लिए समय के साथ एक विकराल समस्या बनकर उभर रहे हैं। अगर प्राकृतिक संसाधनों पर गौर किया जाए तो ये मानव की आवश्यकताओं के सामने बहुत ही छोटे प्रतीत होते हैं। वर्तमान में भारत की कुल जनसंख्या 1.34 अरब आंकड़े को पार कर चुकी है, जो विश्व की कुल जनसंख्या की 17.8 प्रतिशत है। सन् 2050 तक भारत विश्व का सबसे अधिक आबादी वाला देश हो जाएगा जो अपने आप में एक विकट समस्या के रूप में विद्यमान होगा। जिस प्रकार से भारत की आबादी में वृद्धि हो रही है, उसके अनुसार 2050 तक भारत को 335 मिलियन टन खाद्य पदार्थों की आवश्यकता होगी, जो बदलते पर्यावरण परिवेश एवं घटते जैविक संसाधनों के अनुसार बहुत ही मुश्किल चुनौती होगी। वर्तमान में जिस प्रकार से भारत में प्राकृतिक संसाधनों का दोहन किया जा रहा है उसको देखते हुए आने वाली पीढ़ियाँ एक विकराल समस्या एवं अंधकारमय भविष्य का सामना कर सकती है। भारत में विश्व का केवल 4 प्रतिशत मीठा पानी है एवं वर्तमान परिवेश में मीठे पानी का 70–80 प्रतिशत तो केवल खेती के लिए उपयोग किया जाता है। इसमें भी कुल जल का लगभग 40–50 प्रतिशत तो केवल धान उत्पादन के लिए ही प्रयोग किया जाता है।

चावल दुनिया की महत्वपूर्ण खाद्य फसलों में से एक है, और गेहूँ के बाद भोजन का प्रमुख स्रोत है। भारत में 44 मिलियन हैक्टर जमीन से 104 मिलियन टन धान उत्पादन किया जा रहा है, जो वैश्विक क्षेत्र और उत्पादन का क्रमशः 37 और 32 प्रतिशत है। भारत में वर्तमान में धान उत्पादन की मुख्य विधि धानरोपण है। इस विधि में धान के बीज को पहले पौधशाला में तैयार करके, 20–22 दिन बाद खेत में प्रत्यारोपित किया जाता है। जल एक सीमित प्राकृतिक संसाधन है एवं इसकी महत्ता को देखते हुये इसका उचित उपयोग करना अति आवश्यक है। इसलिए बदलते पर्यावरण परिवेश एवं सीमित प्राकृतिक संसाधनों को ध्यान में रखते हुये धान उत्पादन की सीधी बुवाई (डीएसआर) को एक महत्त्वपूर्ण विकल्प के रूप में स्वीकार किया जा सकता है।

धान की सीधी बिजाई

यह धान उत्पादन की एक नई तकनीक है जिसके अंतर्गत पौधशाला, गारा बनाना एवं धान के प्रत्यारोपण की आवश्यकता नहीं होती है। इस विधि के अंतर्गत बाकी फसलों की तरह धान की भी सीधी बुवाई की जाती है। इसलिए इसमें पौधशाला एवं धान के प्रत्यारोपण में लगने वाली मजदूरी का बचाव हो जाता है। इसके साथ ही पडलिंग में लगने वाला जल एवं खर्च दोनों की बचत होती है। इसके साथ ही धान का उत्पादन भी लगभग रोपण विधि के समान या थोड़ा कम पाया गया है। इस विधि में प्रारंभिक सस्य क्रियाएं बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान रखती है। अगर धान की सीधी बुवाई के लिए मान्य सभी सस्य क्रियाओं को उपयोग में लाया जाए तो प्राकृतिक संसाधनों के बचाव के साथ–साथ लागत को भी कम किया जा सकता है तथा इसके लाभःलागत अनुपात में सुधार किया जा सकता है। पानी का कम इस्तेमाल होने के कारण इसे अपेक्षित कम वर्षा वाले क्षेत्र में भी लगाया जा सकता है। इस विधि में मुख्यतया आंतरमिक जल भराव एवं अधिक उत्पादन देने वाली धान की किस्मों का उपयोग किया जाता है।

धान की सीधी बिजाई का महत्त्व

धान की सीधी बुवाई करने से लगभग 10–15 दिन उत्पादन अवधि एवं 30–40 प्रतिशत पानी की बचत होती है। रोपण विधि से धान की सीधी बुवाई में बदलाव के लिए जिम्मेदार विभिन्न कारणों की चर्चा नीचे की गई है।

धान की परंपरागत रोपण विधि

धान उत्पादन की पारंपरिक विधि में पानी की बहुत ज्यादा मात्रा की आवश्यकता होती है। इस विधि में धान की सम्पूर्ण अवधि के दौरान लगभग 1650–3000 मिलीमीटर प्रति हैक्टर पानी की

खपत होती है। सामान्यतया 1 किलोग्राम धान उत्पादन करने के लिए लगभग 3000 लीटर पानी की आवश्यकता होती है। अगर इसकी उपयोग दक्षता की गणना की जाए तो यह बहुत ही कम होती है। इस प्रकार से देखा जाये तो भारत में 44 मिलियन हैक्टर जमीन से 104 मिलियन टन धान के लिये पानी की कुल मात्रा लगभग 416 × 10^9 लीटर है। यह खेती में उपयोग किए जाने वाले कुल पानी का का लगभग 40–50 प्रतिशत भाग है।

गैर–कृषि क्षेत्रों से पानी की प्रतिस्पर्धा

भारत जैसे देश में कृषि सिंचाई की व्यवस्था पहले से ही अपर्याप्त है और जो है उसमें भी पानी की गुणवत्ता बहुत अच्छी नहीं है। बढ़ती आबादी के कारण कृषि क्षेत्र के लिए उपयोग होने वाले पानी की मात्रा भी दिनोंदिन कम हो रही है एवं गैर–कृषि क्षेत्रों के साथ पानी की प्रतिस्पर्धा बढ़ती जा रही है। इन परिस्थितियों में आने वाले समय में धान उत्पादन के लिये भी पानी की मात्रा में कमी आने वाली है।

धान रोपण में मजदूरों की बढ़ती लागत और अनुपलब्धता

रोपित विधि में धान की रोपाई के समय कम समय के अंतराल में ही बहुत ज्यादा श्रमिकों की आवश्यकता होती है जिसके कारण श्रमिकों की अनुपलब्धता एक मुख्य समस्या है। इसके साथ ही देश में तेजी से बढ़ते आर्थिक विकास के कारण गैर–कृषि क्षेत्रों में श्रम की मांग में भी बहुत ज्यादा वृद्धि हुई है। इसके कारण भी कृषि के लिए श्रमिकों की उपलब्धता कम हो गई है। धान की सीधी बुवाई में न तो पौधशाला लगानी पड़ती है और न ही रोपाई करने की जरूरत होती है। इस कारण रोपित धान की तुलना में बहुत ही कम श्रमिकों की आवश्यकता होती है। इस विधि में रोपित विधि की अपेक्षा लगभग 40–50 प्रतिशत कम श्रमिकों की जरूरत होती है।

गारा बनाने (पडलिंग) के प्रतिकूल प्रभाव

पडलिंग रोपित धान की अति महत्वपूर्ण सस्य क्रिया है क्योंकि इससे खरपतवार नियंत्रण, पानी और पोषक तत्व की उपलब्धता में सुधार एवं धान की रोपाई में सुविधा होती है। चूंकि पडलिंग को धान के लिए फायदेमंद माना जाता है, फिर भी इसके कुछ विपरीत प्रभाव है। इससे मिट्टी के भौतिक गुणों पर प्रतिकूल प्रभाव पडता है जिसकी वजह से धान के बाद लगाई जाने वाली फसल की वृद्धि और उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

फसल चक्रण एवं फसल प्रणालियों के लिए उपयुक्त

धान की सीधी बुवाई में पौधशाला की जरूरत नहीं पड़ती है। इसके साथ ही फसल 15–20 दिन जल्दी पककर तैयार हो जाती है। उत्पादन की अवधि रोपित धान की तुलना में कम होने के कारण, धान के बाद बिजाई की जाने वाली फसल की बुवाई भी उचित समय पर हो जाती है। इसके कारण धान की सीधी बिजाई फसल चक्रण एवं फसल प्रणालियों के लिए अधिक उपयोगी है।

ग्रीन हाउस गैस का उत्सर्जन

कार्बन डाइऑक्साइड, मीथेन और नाइट्रस ऑक्साइड के उत्सर्जन में कृषि का भी महत्त्वपूर्ण योगदान है और इनके कुल उत्सर्जन में कृषि का योगदान क्रमशः 60, 39 और 1 प्रतिशत है। इसमें भी धान आधारित फसल प्रणाली की प्रमुख भूमिका है इस प्रणाली में तीनों गैसों का उत्सर्जन होता है, लेकिन मीथेन के उत्सर्जन में इसका मुख्य योगदान है। जलभराव व रोपित धान की खेती में लगातार जल भरा होने के कारण, ऑक्सीजन की कमी होने से मीथेन का उत्सर्जन बहुत ज्यादा होता है। धान की सीधी बिजाई के अंतर्गत रोपित धान की तुलना में 80–90 प्रतिशत कम मीथेन का उत्सर्जन होता है।

धान की सीधी बिजाई विधि

इस विधि के अंतर्गत बाकी फसलों की तरह धान की भी सीधी बुवाई की जाती है। इसके उत्पादन की क्रमबद पद्धति निम्न प्रकार है।

- सर्वप्रथम 10 टन गोबर की खाद को पूरे खेत में समरूप तरीके से डालें।
- इसके बाद खेत को लेजर तकनीक द्वारा पूर्णतया समतल करना अति आवश्यक है, जिससे उत्पादन कारकों का वितरण पूरे खेत में समान तरीके से हो सके, इससे 15–20 प्रतिशत पानी की बचत भी होती है।
- इसके बाद खेत में हल्का पलेवा करके 2–3 दिन बाद 2 जुताई करके इसमें पाटा लगा देवें। इसके बाद ड्रील से बीज की बिजाई करें। इसके लिए सामान्यतया कतार से कतार की दूरी 20 सेंमी. रखें तथा बीज को जमीन में 2–3 सेंमी. गहराई पर बिजाई करें। इस बात का विशेष ध्यान

रखना चाहिये अन्यथा ज्यादा गहरी बिजाई से फसल का जमाव कम होता है।

- एक हैक्टर में ड्रील द्वारा बिजाई के लिए 25–30 किलोग्राम बीज का उपयोग करना चाहिए।
- पोषक तत्वों के प्रबंधन के लिए बिजाई के साथ नाइट्रोजन की आधी मात्रा (60 किलोग्राम), फॉस्फोरस की पूरी मात्रा (50 किलोग्राम) एवं पोटाश की पूरी मात्रा (40–50 किलोग्राम) डाल दें।
- पोषक तत्वों का इस्तेमाल जमीन की पोषक तत्व क्षमता के अनुसार ही करना चाहिए। अधिक एवं अनावश्यक मात्रा में रासायनिक खादों का इस्तेमाल नहीं करना चाहिए, इससे मृदा के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।
- आधी बची नाइट्रोजन की मात्रा को दो बराबर भागों में बांटकर 25 दिन एवं 40–50 दिन बाद सीधे फसल में छिड़काव करें।
- बिजाई के बाद सिफारिश की गई खरपतवारनाशी की मात्रा को फसल की सही अवस्था पर उपयोग करें।
- मृदा परीक्षण रिपोर्ट के अनुसार सूक्ष्म पोषक तत्व जैसे लौहा एवं जिंक की सिफारिश की गई मात्रा का इस्तेमाल करें। सामान्यतया 10–15 किलोग्राम जिंक सल्फेट एवं आयरन सल्फेट प्रति हैक्टर बुवाई क साथ डालें।
- आयरन सल्फेट को प्रारम्भिक अवस्था में इस्तेमाल नहीं करके बिजाई के 25–30 दिन बाद 0.5 प्रतिशत आयरन सल्फेट का एक या दो बार पत्तियों पर छिड़काव भी किया जा सकता है। पत्तियों पर छिड़काव की विधि ज्यादा असरकारक होती है।

धान की सीधी बिजाई का खेत स्तर पर परीक्षण

तालिका 1: सीधी बिजाई के लिए उपयुक्त धान की किस्में

धान की किस्म	अवधि (दिन)	उत्पादन (कु./है.)
सी आर धान 100 (सत्यभामा), सी आर धान 200 (प्यारी), सी आर धान 201, सी आर धान 203, सी आर धान 205, सी आर धान 206	105–110	42–47
सी आर धान 101	110–115	40–42
नरेंद्र 2, नरेंद्र 80	105–110	40–45
नरेंद्र 97, नरेंद्र 117	110–115	35–40
एन डी आर 2026, एन डी आर 20264	110–115	40–45
पुसा सुगंध 3, पुसा सुगंध 4, पुसा सुगंध 5	125–130	35–40
पी एम के 3, पी एम के 26, पी एम के 946–1	120–125	35–40
पुसा बासमती 1509,	110–115	35–40
पुसा 1121	130–140	40–45
मसुरी, स्वर्णा मसुरी, सेंटेड टी 3, कस्तुरी	120–125	35–40
पुसा बासमती 1, हरियाणा बासमती 1, बासमती 370, तरावड़ी बासमती	120–125	30–35

- जैविक उर्वरक के रूप में एजोटोबेक्टर का उपयोग 200 ग्राम पैकेट प्रति एकड़ बीज के साथ करें।
- सिंचाई की व्यवस्था का विशेष ध्यान रखें, जहाँ लंबे समय तक वर्षा नहीं हो रही है तो लगातार हल्की सिंचाई का प्रबंधन महत्वपूर्ण है। सामान्यतया 6–7 दिन के अंतराल पर हल्की सिंचाई आवश्यक है।
- इस विधि में मुख्यतया कम अवधि की अधिक उत्पादन वाली किस्में ही उपयोग में ली जाती है तथा इसमें किस्म की शुद्धता एवं उसकी जीवन क्षमता बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान रखती है।
- बीमारियों एवं कीड़ों का लक्षण के अनुसार एवं वैज्ञानिक सिफारिश से दवाओं का सही समय पर उपयोग करें।
- फसल उत्पादन में बीज उपचार का एक अलग ही स्थान होता है। बीजों को उपचारित करके फसल को जैविक एवं अजैविक कारको के प्रतिकूल प्रभाव से बचाकर इससे होने वाले फसल के नुकसान को कम किया जा सकता है। बीजों का उपचार कवकनाशी – कीटनाशी – जैवउर्वरक क्रम में ही करना चाहिए।
- फसल परिपक्वता के बाद वाली सभी सस्य क्रियाएं धान की रोपण विधि के समान ही होती है तथा धान का भंडारण उचित नमी अवस्था (8–10 प्रतिशत) में ही करना चाहिए।

तालिका 2: धान की सीधी बिजाई एवं रोपित विधि का विभिन्न कारकों पर प्रभाव

कारक (घटक)	सीधी बिजाई	रोपित विधि
पानी की आवश्यकता (मि.मी./है.)	935–1000	1650–3000
लागत (रुपये प्रति हैक्टर)	35000	48000
उत्पादन (कुण्टल प्रति हैक्टर)	35–40	55–60
लाभ : लागत अनुपात	1.75	1.50

धान की सीधी बिजाई की कम लोकप्रियता के कारण

धान की सीधी बिजाई के रोपित विधि की अपेक्षा अनेक फायदे होते हुए भी यह विधि किसान भाईयों के बीच लोकप्रिय नहीं हो सकी, जितना इसको होना चाहिए। इसके मुख्य कारण निम्न प्रकार है।

- धान की सीधी बिजाई में धान की पैदावार रोपित विधि की तुलना में थोड़ी कम होती है।
- इस विधि में खरपतवार की समस्या ज्यादा होती है।
- धान की सीधी बिजाई के लिए अच्छी किस्मों की कमी होना।
- फसल के शुरुआती दिनों में पौषक तत्वों, मुख्यतया सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता में कमी होना।
- रोपित धान की तुलना में इसमें बीमारी एवं कीड़ों की समस्या का ज्यादा होना।
- नाइट्रोजन ऑक्साइड का ज्यादा उत्सर्जन होना।

निष्कर्ष

बदलते पर्यावरण परिवेश एवं सीमित प्राकृतिक संसाधनों के दौर में धान उत्पादन की सीधी बिजाई विधि जैसी वैज्ञानिक तकनीकियों का देश की खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण योगदान होगा। इस तरह की तकनीक अपनाकर हम अपने प्राकृतिक संसाधानों का विवेकपूर्ण उपयोग कर भविष्य के लिए इन्हें सुरक्षित भी किया जा सकता है। साथ ही बदलते पर्यावरण परिवेश में उत्पादन का वर्तमान स्तर भी बनाए रखने में अहम भूमिका प्रदान की जा सकती है।

समाप्त

किसानों की आस–देसी कपास

इन्दीवर प्रसाद, अनिल आर॰ चिंचमलातपुरे, श्रवण कुमार, डेविड कैमस एवं सागर विभुते
भाकृअनुप–केन्द्रीय मुदा लवणता अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, भरूच (गुजरात)
E-mail : indivar234@gmail.com

भारत प्राचीनकाल से ही कपास और इससे जुड़े उद्योगों का पारंपरिक स्थान रहा है। कपास जिसे रेशों का राजा, सफेद सोना भी कहा जाता है, मानव सभ्यता के विकास में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। भारत में कपास का क्षेत्रफल विश्व में सबसे अधिक (20 प्रतिशत) है तथा यह 70 लाख लोगों को प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार प्रदान करती है। क्षेत्रफल और उत्पादन की दृष्टि से भारत का कपास उत्पादन में विश्व में प्रथम स्थान है। नवीनतम अनुमानों के अनुसार 2016–17 के दौरान भारत में कुल 105 लाख हैक्टर भूमि में 351 लाख कपास की गांठों (एक गांठ 170 किलोग्राम) का उत्पादन हुआ। इस दौरान कपास की उत्पादकता 568 किलोग्राम कपास प्रति हैक्टर रही। गुजरात में सालाना 101–108 लाख कपास की गांठों का उत्पादन होता है जो पूरे भारतवर्ष में सर्वाधिक है। कपास के क्षेत्रफल की दृष्टि से गुजरात का महाराष्ट्र के बाद दूसरा स्थान है तथा उत्पादकता लगभग 700 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर है।

भारत में कपास विभिन्न परिस्थितियों में उगाया जाता है। भारत में कपास की अधिकतम खेती वर्षा पर आधारित है जोकि कुल क्षेत्रफल का लगभग 60 प्रतिशत है। विश्व में केवल भारत ही ऐसा देश है जहाँ कपास की चारों प्रजातियाँ गोसीपियम आरबोरीयम, गोसीपियम हरबेसियम (देसी कपास), गोसीपियम हिरसुटम तथा गोसीपियम बारबाडेन्स (अमेरिकन-इजिप्सियन कपास) की व्यवसायिक खेती होती है।

भारत में कपास "सफेद सोना" के नाम से भी प्रसिद्ध है लेकिन विगत दो वर्षों में उत्तर भारत के कुछ राज्यों जैसे पंजाब और हरियाणा में सफेद मक्खी का काफी प्रकोप हुआ था। बीज तथा कीटनाशक कंपनियों के लाख वादों के बावजूद सफेद मक्खी के प्रकोप को अनेक तरह के कीटनाशक भी नहीं रोक पाए। इस समस्या के कारण किसानों के लिए यह सफेद सोना "खोटा सोना" बन गया और किसानों को भारी नुकसान हुआ। परिणामस्वरूप सरकार को करोड़ों रुपये मुआवजे के तौर पर किसानों को देने पड़े थे। इस गंभीर समस्या का एक मुख्य कारण बीटी–कपास ही रहा जो कि सफेद मक्खी के प्रति सहनशील नहीं रहा। इसके अलावा बहुत बड़े क्षेत्रफल में एक ही प्रजाति के अमेरिकन संकर कपास की खेती के कारण फसलों का आनुवांशिक स्तर सीमित हो गया। जैव विविधता के अभाव में यह समस्या और भी विकराल हो गयी।

इन सभी समस्याओं का निराकरण देसी कपास हो सकता है जिसके साथ भारत के किसान परंपरागत रूप से हजारों वर्षों से जुड़े हुए हैं। विभिन्न जैविक तथा अजैविक तनाव (स्ट्रेस) के प्रति रोधक क्षमता, सूखा तथा लवणता के प्रति सहनशीलता एवं अनोखे पादप गुणों के कारण वर्तमान समय में भी भारत के कई क्षेत्रों में देसी कपास की खेती की जाती है। कुछ किसानों द्वारा अभी भी देसी कपास की खेती करने का मुख्य कारण कम लागत तथा कम वर्षा में भी अच्छा उत्पादन है। इसके अलावा खास बात यह है कि देसी कपास लंबी अवधि की फसल होने के कारण मौसम बदलाव के प्रति कम संवेदनशील होती है। कम वर्षा वाले क्षेत्रों के किसान बीटी कपास से अधिक उपज तो प्राप्त कर सकते है परन्तु इस तरह कि खेती में अधिक लागत के कारण मुनाफा कम होता है। सीमान्त एवं लघु किसानों के लिए यह खेती आर्थिक रूप से फायदेमंद नहीं होती है। वर्तमान समय में तकरीबन 35 बीज कंपनियां जो कपास की लगभग 200 बीटी संकर किस्मों की बिक्री के बाजार में है, उनकी सबसे बड़ी खामी तो कपास का पतला रेशा है, जिनमें बुनियादी तौर पर तीन जीन होते हैं जिनके गुणधर्म सीमित होते है।

अभी हाल ही में ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय से आये हुए विशेषज्ञों द्वारा किये गए अध्ययन अनुसार वर्षा आधारित कृषि में देसी कपास की खेती बीटी कपास के समान ही लाभदायक होती है। इन विशेषज्ञों का यह विचार था कि किसानों में देसी कपास की तुलना में बीटी कपास का प्रचलन अधिक होने का मुख्य कारण

देसी कपास की लहलहाती फसल

यह अपेक्षा थी कि बीटी कपास में अधिक उत्पादन के साथ–साथ गुलाबी सुंडी के प्रति रोधक क्षमता अधिक होती है। लेकिन हाल में बीटी कपास की फसल में कीटों से हुए नुकसान ने किसानों के इस भरोसे पर एक बड़ा प्रश्नचिन्ह लगा दिया है। एक रोचक तथ्य यह भी उभर कर सामने आया कि देसी कपास के अच्छे बीज की अनुपलब्धता भी इसके कम प्रचलित होने का एक मुख्य कारण है। भारत में 2002 के पश्चात बीटी कपास के उद्भव के कारण देसी कपास के क्षेत्रफल में भारी कमी आई जिसका मुख्य कारण यह था कि देसी कपास में टिंडे (बॉल) का आकार छोटा होता है तथा उपज क्षमता संकर किस्मों की तुलना में कम होती है। देसी कपास के साथ अमेरिकन कपास का तुलनात्मक विवरण तालिका 1 में किया गया है।

परंतु वर्तमान समय में डेनिम इंडस्ट्री एवं सर्जिकल कपास के निर्माण में छोटी लंबाई वाले रेशेदार कपास की मांग ज्यादा हो गई है, और मांग के अनुसार उत्पादन कम है और इसे विदेशों से आयात किया जा रहा है। इस आयात के कारण भारत की बहुमूल्य विदेशी मुद्रा का नुकसान हो रहा है। किसानों का देसी कपास की खेती से मोह भंग होने के भी अनेक कारण है जिनमें से कई समस्याओं का निराकरण उचित शोध एवं नीति निर्धारण से हो सकता है। इनमें से कुछ कारण निम्नलिखित हैं।

- अमेरिकन कपास के मुकाबले देसी कपास की कीमत कम मिलने की वजह से देश के किसानों का देसी कपास की खेती से मोह पूरी तरह भंग होता जा रहा है।
- घरों में सूत की कताई कर कपड़े बुनने का रुझान भी कम होने की वजह से किसानों ने देसी कपास से दूरी बना ली है।
- सबसे बड़ा कारण अमेरिकन कपास के मुकाबले इसकी प्रति एकड़ उपज का कम होना माना जा रहा है।
- तेज हवा के प्रभाव से इसकी रुई नीचे गिरने से इसकी बार–बार चुगाई की समस्या भी किसानों को परेशान करती है। इस कारण वे इस फसल से दूरी बनाए रखने में ही भलाई समझते है।
- देश में न्यूनतम समर्थन मूल्य गुणवत्ता और जरूरत के आधार पर नहीं रेशे की लम्बाई के आधार पर तय होता है। जाहिर है देसी कपास का रेशा अमेरिकन और बीटी कपास के रेशे से छोटा होता है, इसलिए इसकी कीमत भी कम मिलती है।

तालिका 1: देसी कपास के साथ अमेरिकन कपास की तुलना

विवरण	देसी कपास	अमेरिकन कपास (बीटी कपास)
क्षेत्रफल	2 प्रतिशत	98 प्रतिशत
संसाधनों का उपयोग	नगण्य	अधिक
चुसनें वाले कीड़ों के प्रति	सहनशील	असहनशील
लीफ कर्ल	प्रतिरोधक	असहनशील
बॉल वर्म	अधिक सहनशील	असहनशील
रेशे के गुण	मोटा और छोटा	पतला और लम्बा
वर्षा आधारित खेती के लिए	ज्यादा उपयुक्त	कम उपयुक्त
खेती की लागत	कम	ज्यादा
अच्छे बीज की उपलब्धता	कठिन	आसान
शोध कार्य की दशा	नगण्य	अधिक
संबंधित सामाजिक समस्या	जानकारी में नहीं	बहुत ज्यादा

भाकृअनुप–केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान नागपुर के कपास वैज्ञानिक एवं भूतपूर्व निदेशक डा. के.आर. क्रांति ने अपने लेख "लॉन्ग लिव स्वदेशी कपास" में बताया है कि "यद्यपि इस तथ्य को स्वीकार करना बहुत ही कठिन है देसी कपास की खेती भरोसेमंद और आर्थिक रूप से लाभदायक है, परन्तु अगर हम कुछ वर्तमान परिस्थितियों पर आधारित ठोस तथ्यों का विश्लेषण करें तो पाएंगे कि भारत में कपास की खेती का भविष्य देसी कपास पर ही निर्भर है। वर्तमान समय में रासायनिक खादों के बढ़ते हुए मूल्य तथा श्रमिकों की कमी के कारण कपास की खेती भरोसेमंद और लाभदायक नहीं रही। आने वाले समय में हमें दूरदृष्टि के साथ कपास की खेती को लाभदायक एवं सतत बनाने का प्रयास करना होगा। देसी कपास की खेती इस समस्या से निपटने का एक संभावित हल है, परन्तु इसके लिए गहन अध्ययन एवं उचित योजना बनाने की जरूरत पड़ेगी। इसके लिए निकट भविष्य में दो पहलुओं पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

- देसी कपास के रेशे के गुणों में सुधार।
- देसी कपास के गैर पारंपरिक उपयोग वाले उद्योगों जैसे सर्जिकल कपास, सेनेटरी नैपकिन इत्यादि को बढ़ावा देना।

उत्तर भारत में देसी कपास की तरफ किसानों का झुकाव

विगत वर्षों में पहली बार कपास की बुवाई–पट्टी वाले देश के उत्तरी राज्यों में 70000 हैक्टर से ज्यादा क्षेत्रफल में देसी कपास की बुवाई हुई। पंजाब, हरियाणा और उत्तरी राजस्थान के किसानों ने 2016–17 में नॉन–बीटी देसी कपास की किस्मों और संकरों को पहले की तुलना में तीन गुना से भी ज्यादा क्षेत्रफल में लगाया है। इस बदलाव का मुख्य कारण वर्ष 2015 में सफेद मक्खी का आक्रमण और पत्तियाँ मुरझाने का (लीफ कर्ल) रोग था, जो इन कीड़ों के माध्यम से फैलता है। सफेद मक्खी के भयानक प्रकोप के कारण इन क्षेत्रो में कपास के क्षेत्रफल में भी कमी आई। 2016 में उत्तर–पश्चिम भारत के कुल 72280 हैक्टर क्षेत्र पर बड़े पैमाने में सिंचित कपास के बेल्ट में देसी गैर–बीटी किस्मों और संकर किस्मों की खेती की गयी। इसमें हरियाणा में 36932 हैक्टर, उत्तर राजस्थान के श्री गंगानगर और हनुमानगढ़ जिलों में 21924 हैक्टर और पंजाब में 13424 हैक्टर शामिल है। जबकि पिछले साल (2015–16), हरियाणा में देसी कपास केवल 9000 हैक्टर, राजस्थान में 9000–10000 हैक्टर और पंजाब में केवल 4000 हैक्टर में बोया गया था। यदि देसी बीजों की समुचित आपूर्ति हो जाती, तो यह बुवाई क्षेत्रफल और भी बढ़ सकता था।

देसी कपास की खेती आधुनिक एवं वैज्ञानिक तरीके से करने पर लाभप्रद भी होती है। देसी कपास की स्थानीय किस्में कम लागत पर भी अच्छा उत्पादन दे सकती है। उत्तरी भारत की स्थानीय किस्म में रेशे का फाइबर छोटा होता है जिसका उपयोग कताई के बजाय गद्दे, डेनिम, दैनिक और चिकित्सकीय उपयोग में आने वाली रुई में होता है। इसलिये इसका बाजार सीमित है। हालाँकि देसी और गैर–बीटी कपास के बुवाई क्षेत्र में वृद्धि कम है, लेकिन पिछले कई सालों में एक बदलाव का संकेत मिला है। आने वाले कुछ वर्षों में देसी कपास की खेती में एक बड़े तथा सार्थक बदलाव की उम्मीद की जा रही है।

देसी कपास की लवणीय मृदा एवं जल के प्रति सहनशीलता

सभी फसलों को अपने जीवनकाल के दौरान विभिन्न प्रकार के पर्यावरणीय तनावों (स्ट्रेस) का सामना करना पड़ता है। पर्यावरणीय तनाव दो प्रकार के होते हैं; जैविक तनाव और अजैविक तनाव। जैविक तनाव रोगों, कीटों और कीड़ों जैसे जीवों के कारण होते हैं, जबकि अजैविक तनाव पारिस्थितिकी तंत्र के अवयव जैसे मृदा एवं जल की लवणता, सूखा, गर्मी, ठंडा, जल जमाव, पोषक तत्व की कमी, धातु विषाक्तता, गैसीय प्रदूषण और पराबैंगनी विकिरण इत्यादि कारणों से होते हैं। पूरे विश्व में सूखा और लवणता फसल हानि के दो मुख्य कारण हैं। पूरे भारतवर्ष में मृदा एवं जल की लवणता कृषि के लिए एक गंभीर समस्या है। पूरे भारत वर्ष में कुल 6.74 मिलियन हैक्टर भूमि लवणता की समस्या से ग्रसित है, जिसका 32 प्रतिशत भाग अथवा 2.2 मिलियन हैक्टर क्षेत्रफल गुजरात राज्य में फैला हुआ है। गुजरात राज्य में पिछले वर्ष की तुलना में 2016 में कपास के क्षेत्रफल में सार्थक कमी पाई गई जिसका मुख्य कारण रेशे का कम भाव, जैविक तथा अजैविक तनाव (स्ट्रेस) के कारण फसल को हानि तथा अन्य व्यापारिक फसलों के क्षेत्रफल में वृद्धि है। लवणीय मृदाओं में फसलों की सहनशीलता में काफी भिन्नता पाई जाती है इसलिए मृदा की लवणता के अनुसार फसलों का चयन काफी महत्वपूर्ण हो जाता है। लवणीय मृदाओं में फसल उत्पादन में वृद्धि हेतु निम्नलिखित तरीके अपनाए जा सकते हैं।

- फसल की आवश्यकता के अनुसार मृदा में सुधार करना अथवा
- मृदा की लवणता के अनुसार फसलों का चयन करना।

हालाँकि कपास को लवण सहनशील फसलों की श्रेणी में शामिल किया गया है परन्तु उच्च लवणता के स्तरों पर इसकी पौध वृद्धि और उत्पादन में भारी कमी होती है।

भरूच केन्द्र पर कपास का प्रयोग

आरकेवीवाई परियोजना के अंतर्गत 2011 से 2012 तक केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान के क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, भरुच पर कपास की देसी तथा अमेरिकन संकर प्रजातियों पर लवणता के प्रभाव हेतु अनेक शोध किए गए। इन शोधों से यह पता चला कि लवणीय काली मृदाओं में अमेरिकन संकर प्रजातियों की तुलना में देसी कपास की प्रजातियों की लवण सहनशीलता अधिक होती है। देसी कपास की प्रजातियां 10.4 डेसीसीमन प्रति मीटर लवणता के स्तर पर भी अच्छा उत्पादन देती हैं जबकि इन उच्च लवणता के स्तरों पर बीटी संकर तथा अमेरिकन प्रजातियों की उपज में भारी कमी होती है।

उच्च लवणता के स्तरों पर बीटी संकर तथा अमेरिकन प्रजातियों में क्लोरोफिल की मात्रा कम होने के कारण ऊतकों में सोडियम आयन की सहनशीलता कम हो जाती है जो इन प्रजातियों में कम जैव भार तथा उपज का मुख्य कारण होता है। यद्यपि देसी कपास की प्रजातियों में सोडियम की मात्रा तने में अमेरिकन प्रजातियों की तुलना में कम पाई गई लेकिन अधिक मात्रा में

भरूच केन्द्र पर कपास का प्रयोग

पोटेशियम आयन के अवशोषण के कारण देसी कपास की प्रजातियों में सोडियम पोटेशियम का अनुपात कम होता है जिसके कारण देसी प्रजातियां लवण सहनशील होती है। उच्च लवणता वाले क्षेत्रों में किसानों के खेतों पर किए गए प्रयोगों में समान परिणाम पाए गए। इससे यह पता चलता है कि लवणीय क्षेत्रों में देसी कपास के विस्तार की अपार संभावनाएं हैं। आरबोरियम तथा हरबेसियम प्रजातियों की जल उत्पादकता भी अधिक होती है जिसके कारण यह कम पानी अथवा वर्षा आधारित खेती के लिए उपयुक्त होती है। क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, भरुच द्वारा देसी कपास की खेती को बढ़ावा देने को लिए विगत वर्षों में कई कार्यक्रम किये गए हैं। यहाँ पर अखिल भारतीय कपास सुधार परियोजना, कोयम्बटूर के सहयोग से देसी कपास की लवण सहनशील किस्मों के चयन हेतु अनुसंधान किये जा रहे है। इस केन्द्र द्वारा 2016–17 में चयनित लवण सहनशील देसी किस्मों की सूची निम्नलिखित है।

तालिका 2: लवण सहनशील देसी कपास की नवीन प्रजातियाँ

गोसीपियम आरबोरीयम	गोसीपियम हरबेसियम
आर. जी. –804	ए. एन. जी. एच. –1602
पी. ए. –828	जी. एस. एच. वी. –362/12
एफ. डी. के. –272	आर. ए. एच. एस. –803
सी. आई. एस. ए. –333	जी. एस. एच. वी. –385/12
डी. डब्ल्यू. डी. ए. –1602	डी. डब्ल्यू. डी. एच. –1602

देसी कपास के प्रोत्साहन की आवश्यकता एवं पहल

बीटी जीन को केवल मध्यम और लंबे रेशे वाली और ऊंची उत्पादकता वाली कपास में ही शामिल किया गया है। बीटी कपास से पहले कपास उत्पादन के साथ–साथ कपास निर्यात में छोटे रेशे वाली देसी कपास की भारी हिस्सेदारी थी क्योंकि ऐसी कपास भारत और पाकिस्तान को छोड़कर शायद ही दुनिया के किसी देश में उगाई जाती थी। देसी कपास की अच्छी किस्मों के विकास से किसानों को बड़ी मदद मिलेगी और बीटी–संकर को जरूरी प्रतिस्पर्धा मिलेगी जिसकी वजह से किसान हर साल नए बीज खरीदने पर मजबूर होते हैं। अस्पतालों में शल्य चिकित्सा एवं घरों में तकियों और अन्य काम में आने वाली छोटे रेशे वाली कपास की किल्लत को रोकने के लिए भी यह कदम आवश्यक है क्योंकि भारत में छोटे रेशे वाली कपास की मांग पूरी करने के लिए इसे आयात करना पड़ रहा है।

देश में केवल सर्जिकल रूई बनाने में ही सालाना करीब 20 लाख गांठ देसी कपास की खपत होती है। एक अच्छी खबर यह है कि भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के अधीन काम करने वाला केन्द्रीय कपास अनुसंधान संस्थान, नागपुर उद्योगों में देसी कपास की खपत बढ़ाने के लिए निजी कंपनियों से गठजोड़ कर रहा है। डॉ. के.आर. क्रांति के अनुसार कई रुई निर्माता कंपनियों से बातचीत के बाद कुछ कंपनियां किसानों को देसी कपास का 4000 रुपये प्रति कुण्टल का भाव देने को तैयार हो गयी है।

भारत सरकार भी देसी कपास को बढ़ावा देने की दिशा में पूरी तरह से प्रयासरत है। सरकार को उम्मीद है कि वह जल्द से जल्द देसी कपास की नई किस्में तैयार कर लेगी और नए बीज किसानों को उपलब्ध करा दिए जाएंगे। ज्यादा उपज देने वाले इन बीजों की लागत कम पड़ेगी और इनसे तैयार होने वाली फसल पर सफेद मक्खी, पिंक बॉलवर्म और लीफ कर्ल वायरस जैसी बीमारियों और कीटाणुओं का असर नहीं होगा। कपास की नई लंबी देसी किस्म का परीक्षण विभिन्न एग्रो–इको जोन के केंद्रों पर किया जा चुका है। इन नई देसी किस्मों के उपयोग से कीड़ों से बेहतर बचाव भी होगा। इन बीजों को किसान दोबारा उपयोग कर सकते हैं और बीटी संकर कपास के बीज की 2000 रुपये किलो के मुकाबले ये 150–200 रुपये किलो के भाव पर मिलेंगे। वैज्ञानिकों का दावा है कि देसी किस्मों में सफेद मक्खी के खिलाफ ज्यादा प्रतिरोधक क्षमता है और इन पर कॉटन लीफ कर्ल वायरस का असर नहीं होता, जो हरियाणा, राजस्थान और पंजाब सहित उत्तर भारत में प्रमुख समस्या है। इन इलाकों में 15 लाख हैक्टर से ज्यादा क्षेत्रफल में कपास की खेती होती है।

पिछले वर्ष कपास की कुल 19 प्रजातियों एवं संकर किस्मों को विभिन्न क्षेत्र के लिए नोटिफाई किया गया जिसमें देसी कपास की 2 प्रजातियां भी सम्मिलित है। देसी कपास की यह किस्में कम पानी में भी अच्छी बढ़त देती है। इन किस्मों में बड़ा टिंडा होता है और रस चूसक कीटों का हमला कम होता है. यह लीफकर्ल बीमारी के प्रति सहनशील है।

देशी कपास की कुछ उन्नत प्रजातियाँ इस प्रकार है – जी कॉट 23, जी कॉट 25, जी कॉट डीएच–7, जी कॉट डीएच–9, डीएस – 5, एचडी – 107, आरजी – 8, जी. – 27, श्यामली, लोहित, एलडी– 230, एलडी–327, एलडी–133, डीएस–21, एलडी–491 है। इनके रेशे और संबंधित गुणधर्म सर्जिकल कपास के लिए एकदम उपयुक्त है।

देसी कपास के अधिक उत्पादन के लिए बीज की अच्छी किस्म से लेकर बिजाई के खास तरीके और समय–समय पर जानकारों से सलाह अति आवश्यक है। कृषि विशेषज्ञों का मानना है कि देसी कपास की अच्छी पैदावार के लिए खेत में प्रति हैक्टर पौधों की सही संख्या और पोषक तत्वों का सही मात्रा में उपलब्धता होना जरूरी है। कपास के पौधों की सही संख्या के बाद पौधों के लिए सही मात्रा में खाद व पानी की आवश्यकता होती है।

आज जरूरत इस बात की है कि सार्वजनिक क्षेत्र में अनुसंधान के लिए निवेश को बढ़ावा मिले ताकि देसी कपास की ऐसी किस्मों का विकास किया जा सके जो कई कीटों के प्रति सुरक्षा तंत्र मुहैया कराने के साथ–साथ सूखा, अधिकाधिक पोषक तत्व उपयोग में दक्ष हो और कम फसल चक्र में तैयार हो सके। इसके साथ ही ऐसी किस्मों का विकास हो जिनके बीजों से दोबारा बुवाई की जा सके। इन सब प्रयासों से ही देश में कपास के किसानों के लिए एक नए युग का प्रारंभ होगा और वे भी देश के विकास में बराबर के भागीदार होंगे।

समाप्त

उत्साह, प्रयास की जननी है, तथा इसके बिना आज तक कोई महान उपलब्धि हासिल नहीं की गई है।

उपसतही जलनिकास – लवणीय काली मृदा में सुधार हेतु कारगर तकनीक

अनिल आर॰ चिंचमलातपुरे, सागर विभुते, संजय कड एवं एस॰के॰ कामरा
भाकृअनुप–केन्द्रीय मुदा लवणता अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, भरूच (गुजरात)
E-mail : rcanil2014@gmail.com

मृदा एवं जल मानव जीवन को बेहतर बनाने एवं कृषि के विकास के लिए अत्यंत आवश्यक नैसर्गिक संसाधन है। वैज्ञानिक, योजनाकार, प्रशासक और किसानों के आगे वर्तमान तथा भविष्य की पीढ़ियों के लिए भोजन, पानी और पर्यावरण की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए मृदा और जल संसाधन का कुशल प्रबंधन एक बडी चुनौती है। अपने भारत देश को खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भर बनाने के लिए कृषि में सिंचाई का काफी अहम योगदान रहा है। देश में काफी बडे क्षेत्र पर सिंचाई की सुविधा उपलब्ध कराने के इरादे से नहरों का विस्तृत जाल बिछाया गया लेकिन यह करते समय सिंचाई के साथ–साथ जलनिकासी को महत्त्व न दिए जाने के कारण नहर से सटे क्षेत्रों में जलभराव एवं मृदा लवणता की समस्या उत्पन्न हो रही है। इन क्षेत्रों में इसका असर भूमि की उत्पादकता पर पडने से कृषि उत्पादन प्रभावित हो रहा है और छोटे एवं सीमांत किसानों की आजीविका की सुरक्षा में खतरा पैदा हो रहा है। देश में पायी जाने वाली काली मृदाओं के क्षेत्र में से करीब 1 लाख हैक्टर से अधिक क्षेत्र की जमीन नमी की कमी एवं लवणता की समस्या से ग्रसित है और इस समस्या का निराकरण करने के लिए उचित तकनीक उपलब्ध कराने की जरूरत है। उपसतही जलनिकास तकनीकी का उपयोग इन समस्याग्रस्त काली मृदाओं के क्षेत्र में करने से लाभ हो सकता है। यह तकनीकी हरियाणा, राजस्थान जैसे रेतीली मृदा के क्षेत्रों में काफी सफल रही है लेकिन जब बात काली मृदा की आती है तो अभी तक इस तकनीकी को बड़े पैमाने पर लागू नहीं किया गया है। इन मुद्दों को ध्यान में रखते हुए गुजरात के सुरत जिले के मुलद गाँव में लवणता और जलभराव की समस्या से ग्रसित 45 हैक्टर क्षेत्र पर लगाए गए उपसतही जलनिकास तकनीकी का अध्ययन किया गया। इस गाँव की काली मृदा में नहर के पानी का सिंचाई में उपयोग कर गन्ने की खेती की जाती है। लेकिन पिछले दस वर्षों से मृदा लवणता एवं जलभराव की समस्या की वजह से गन्ने की उत्पादकता पर काफी असर पड़ा है।

मुलद गाँव की जलनिकासी पूर्व की स्थिति

अध्ययन क्षेत्र की काली मृदा में लवणता और जलभराव की समस्या को निरंतर गन्ने की खेती, सिंचाई जल का असंतुलित उपयोग, मृदा की कम द्रवचालीत प्रवाहिता इत्यादि कारणों से जोडा जा सकता है। इस समस्या की वजह से क्षेत्र में गन्ना उत्पादन में 30 से 50 प्रतिशत तक कमी पायी गयी है और इसका असर किसानों की घटती आमदनी पर देखा जा सकता है। इस क्षेत्र की लवणता की स्थिति का ब्यौरा लेने के लिए भूजल के

मृदा लवणता एंव जलभराव की समस्या

नमुने एकत्रित करके प्रयोगशाला में विश्लेषण किया गया और जांच में (तालिका 1) भूजल की वैद्युत चालकता 1.36 से 4.86 डेसीसीमंस प्रति मीटर पायी गयी जोकि अनुमानित मात्रा से अधिक है। सभी पानी के नमुनों का पीएच मान 7.6 से 8.3 तक था जोकि सामान्य सीमा के भीतर है। सोडियम अधिशोशण अनुपात की मात्रा 2.2 से 31.1 तक पायी गयी जिसमें पांच पानी के नमुनों में मात्रा की सीमा से अधिक थी। सोडियम अधिशोषण अनुपात की मात्रा 10 से अधिक होने से मृदा क्षारीयता की

तालिका 1: उपसतही जलनिकास परियोजना से पूर्व मुलद गाँव के पानी का विश्लेषण

सर्वे नंबर	पीएच मान	वैद्युत चालकता (डेसीसिमंस प्रति मीटर)	सोडियम अधिशोषण अनुपात
122	7.6	4.86	28.2
125	8.0	2.24	31.1
80	8.1	1.95	25.4
123	8.2	1.50	2.2
120	7.8	2.94	7.6
64	8.3	1.36	15.0
66	8.0	3.00	13.4
78	8.1	3.28	5.9

समस्या होने की संभावना होती है और मृदा का सोडियम विनिमय प्रतिशत बढ़ता है। इस तरह के ज्यादा सोडियम अधिशोषण वाले पानी का उपयोग काली मृदा में करने से अधिक गंभीर समस्या का निर्माण हो सकता है। इस काली मृदा में मृत्तिका की मात्रा 50–60 प्रतिशत पायी गयी एवं फुलने–सिकुड़ने वाला खनिज होने से क्षारीयता की समस्या बढ़ सकती है।

उपसतही जलनिकास को कार्यान्वित होने से पूर्व मृदा के नमुने हर 30 सेंमी. के अंतराल में 120 सेंमी. की गहराई तक एकत्रित किए गए नमुनों का प्रयोगशाला में विश्लेषण किया गया। उसमें मृदा की वैद्युत चालकता 1.2 से 7.3 डेसीसिमंस प्रति मीटर तक पायी गयी (तालिका 2)। सतह की मृदा में लवणता की मात्रा ज्यादा पायी गयी जिसकी वजह से मृदा में स्थित जल का परासरण दबाव बढ़ता है और इससे पौधे पानी को उतनी आसानी से नहीं खिंच पाते जितनी आसानी से वे

तालिका 2: उपसतही जलनिकास परियोजना से पूर्व मुलद गाँव के मृदा नमुनों का विश्लेषण

सर्वे नंबर	गहराई (सेंमी.)	पीएच मान	वैद्युत चालकता (डेसीसिमंस प्रति मीटर)	सोडियम अधिशोषण अनुपात	विनिमय योग्य सोडियम प्रतिशतता
122	0–30	7.7	3.4	4.0	3.2
	30–60	7.4	7.3	26.2	69.7
	60–90	7.6	4.2	9.5	11.3
	90–120	7.7	4.5	22.3	24.0
125	0–30	7.9	3.2	4.8	3.7
	30–60	7.9	1.5	5.8	4.6
	60–90	7.9	2.1	4.0	3.2
	90–120	8.3	2.1	37.0	45.3
80	0–30	7.9	2.5	4.9	4.1
	30–60	8.1	2.0	4.2	3.3
	60–90	8.2	1.4	2.9	2.4
123	0–30	8.1	1.5	1.9	1.4
	30–60	8.1	1.5	1.4	10.0
	60–90	8.4	1.5	3.0	2.5
120	0–30	7.9	2.3	2.6	2.0
	30–60	7.5	5.0	18.0	20.2
	60–90	7.9	1.5	2.1	10.0
64	0–30	8.2	1.2	3.4	2.8
	30–60	8.2	1.2	1.2	0.4
	60–90	8.5	1.5	4.0	3.2
66	0–30	8.0	4.4	4.2	3.3
	30–60	8.1	2.9	5.1	3.8
	60–90	8.3	2.4	2.1	1.6
78	0–30	8.1	4.4	5.6	4.1
	30–60	8.2	2.4	5.8	4.2
	60–90	8.1	2.9	6.2	4.4

अलवणीय/सामान्य मृदा से खिंच सकते हैं। इस वजह से मृदा में पानी मौजूद होने के बावजुद भी वो पौधे की पहुँच से बाहर हो जाता है। मृदा नमुने का पीएच मान 7.4 से 8.5 तक पाया गया जोकि सामान्य सीमा के भीतर है। विनिमय योग्य सोडियम की मात्रा कुछ क्षेत्रों में 15 से ज्यादा पायी गयी, जोकि मृदा क्षारीयता से प्रभावित होने का संकेत है और सोडियम अधिशोषण की अधिक मात्रा इसकी पुष्टि करता है।

उपसतही जलनिकास परियोजना की विशेषताएं

शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्रों में सतही सिंचाई प्रणाली के फलस्वरूप भूमिगत जल का स्तर बढना निश्चित है जो धीरे–धीरे पौधों के जड क्षेत्र में प्रवेश करता है। जिन क्षेत्रों में भूजल मीठा होता है वहाँ किसान नलकुप लगाकर भूजल का कृषि में प्रयोग करना शुरु कर देते हैं। लेकिन जिन क्षेत्रों में भूजल लवणीय/क्षारीय होता है, किसान इस प्रकार के पानी का कृषि में प्रयोग करने से कतराते हैं फलस्वरूप इन क्षेत्रों में जलस्तर उपर उठता रहता है। इस वजह से उथले जलस्तर से पानी भूमि की सतह पर आ जाता है। वहाँ से पानी वाष्पन क्रिया द्वारा उड जाता है लेकिन क्षार जड क्षेत्र में ही रह जाते हैं। यह क्रिया धीर–धीरे भूमि को लवणीय बना देती है।

यही कारण है कि जलभराव व लवणीता को जुडवा समस्याओं की संज्ञा दी जाती है। इस प्रकार की समस्या के निदान के लिये जलनिकास को सुदृढ़ करना एक आवश्यक कदम है। भाकृअनुप–केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान द्वारा क्षारीय मृदाओं की तरह ही इस प्रकार की लवणीय मृदाओं में सुधार के लिये एक तकनीक, भूमिगत/उपसतही जलनिकास प्रणाली बनाई गयी है, जिससे जलग्रस्त लवणीय मृदाओं में सुधार आता है। उपसतही जलनिकास तंत्र की योजना को सफलतापूर्वक कार्यान्वित होने के लिए निम्नलिखित मुख्य मुद्धों पर विचार किया जाना जरूरी है।

उपसतही जलनिकासी से निकला हुआ पानी

- जलनिकास गुणांक,
- पार्श्व नालियों की गहराई, अंतराल व व्यास,
- संग्राहक नलियों की वहन क्षमता, व्यास और ढाल,
- निकास के पानी को निकालने के लिए हौदी।

अध्ययन क्षेत्र में लगायी गयी जलनिकास पद्धति में पार्श्व नालियों की गहराई 1.3 से 1.5 मीटर रखी गई और अंतराल 30 मीटर रखा गया। पार्श्व नालियों का व्यास 80 मिलीमीटर एवं संग्राहक नालियों का व्यास अलग–अलग ब्लॉक में 100 से 250 मि.मी. तक रखा गया। जमीन के ढाल के अनुसार एक से ज्यादा संग्राहक नालियों को रखा गया जिसमें पार्श्व नालियों में से निकासी का पानी जमा होता है। संभावित पानी की मात्रा को देखते हुये 7 होदी (ए से जी तक) इस अध्ययन क्षेत्र में बनाये हैं जिसमें परियोजना क्षेत्र का जलनिकासी का पानी गुरूत्वाकर्षण (बिना किसी पम्पिंग) से संग्रहित होता है और वहाँ से बिना छिद्रित 250 मि.मी. व्यास के उपसतही पाईप से लगभग 450 मीटर दुरी पर स्थित सतही नाली प्रवाह में छोडा जाता हैं। मूलद परियोजना के क्षेत्र में ढलान उत्तर पश्चिम दिशा (ब्लॉक जी) से दक्षिण पूर्व (ब्लॉक ए) की ओर है और अंतर 550 मीटर का है। विभिन्न ब्लॉक में पार्श्वनालियों एवं संग्राहक नालियों की लंबाई का विवरण तालिका 3 में दिया गया है। इस परियोजना में मानक बीआईएस प्रमाणित छिद्रित और गैर छिद्रित पाईप का इस्तेमाल किया गया है। पार्श्वनालियों के चारों ओर लपेटी जाने वाली फिल्टर सामग्री 2.5–3.0 मि.मी. मोटे, सिंथेटिक नॉनवोवन फेब्रिक से बना है। पार्श्व क्षेत्र के कुछ हिस्सों मे 0.08 से 0.1 प्रतिशत की औसत ढलान पर और कुछ हिस्सो में 0.05 से 0.08% ढलान पर स्थापित किया गया। कलेक्टर का ढलान ज्यादातर हिस्सों मे 0.1 प्रतिशत के करीब है और कुछ हिस्सो में कम से कम 0.06 से 0.1 प्रतिशत और अधिक से अधिक 0.16 प्रतिशत है (तालिका 4)। स्थापित उपसतही जलनिकास का ढलान 0.8 प्रतिशत रखा गया है जिससे जलनिकासी से पुरे क्षेत्र का पानी खुली नाली में चला जायेगा। इस पुरे क्षेत्र में उपसतही जलनिकासी योजना के लिए रुपये 38 लाख की लागत आयी है जो रुपये 84500 प्रति हैक्टर है।

तालिका 3: पार्श्वनालियों एवं संग्राहक नालियों का ब्लॉक अनुसार विवरण

ब्लॉक	सर्वे नंबर	संग्राहक नालियों की लंबाई (मीटर)	पार्श्वनालियों की लंबाई (मीटर)	कुल क्षेत्र (हैक्टर)
ए	63, 68	85, 160, 170 (185) 185 (250)	1045 (80)	5.8
बी	64, 65, 67	200, 220, 210 (100) 235 (200)	2305 (80)	9.0
सी	66, 73, 78	130, 185, 190 (100) 40, 140, 260 (160)	270 (200)	3105 (80)10.6
डी	79, 80	120, 140 (100)140 (160)	1465 (80)	4.8
इ	122, 123	190 (100)280 (160)	1865 (80)	5.2
एफ	120, 121	120 (100) 270 (160)	1200 (80)	4.8
जी	125, 126	140 (100)	1110 (80)	4.8
कुल		2260 मी. (100)1130 मी.(160) 505 मी. (200) 185 मी. (250)	12095	45

कोष्ठक में आंकड़े पार्श्व या कलेक्टर पाइप के व्यास को दर्शाते हैं।

तालिका 4: संग्राहक नालियों तथा खुली नाली की ऊंचाई एवं ढलान

स्थान	पुरानी ऊंचाई (मीटर)	ऊंचाई (मीटर)	दो स्थानों के बीच की दूरी (मीटर)	ऊंचाई में फर्क (मीटर)	ढलान (प्रतिशत)
खुली नाली	49.54	46.93	453	2.61	0.58
ए	47.64	47.45	185	0.19	0.10
बी	47.86	47.64	235	0.22	0.09
सी	48.15	47.86	270	0.29	0.11
डी	48.29	48.15	140	0.14	0.10
इ	48.30	48.28	30	0.02	0.06
एफ	48.57	48.29	280	0.28	0.10
जी	48.79	48.57	140	0.22	0.16

उपसतही जलनिकासी परियोजना का मूल्यांकन

यह परियोजना वर्ष 2012 में पूर्ण रूप से कार्यान्वित की गई और किसानों ने इस क्षेत्र में गन्ने की फसल लेना शुरू कर दिया है। साल 2016 में भाकृअनुप–केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, भरुच ने इस परियोजना का मुल्यांकन किया। किसानों के खेतों से मिट्टी एवं पानी के नमुने लेकर इनका प्रयोगशाला में परीक्षण किया गया। फसल के उत्पादन और आर्थिक प्रभाव के आंकडे किसानों से लिये गये। इन सभी जानकारी का एकत्रित एवं संश्लेषित अध्ययन किया गया।

मृदा एवं जल के गुणधर्म

मृदा के गुणधर्म पर उपसतही जलनिकास तकनीक का प्रभाव देखने के लिये मृदा के नमुने 30 सेंमी. के अंतराल में 90 सेंमी. की गहराई तक लिये गये। पीएच मान, वैद्युत चालकता, संतृप्त सार में धुलनशील आयन तथा संबंधित गुणवत्ता मानकों का विश्लेषण किया गया। तालिका 5 के आंकडों के आधार पर पता चलता है कि 17 अलग–अलग जगह से ली गई मृदा में लवणता की मात्रा 0.47 से 3.9 डेसीसिमंस प्रति मीटर आंकी गयी जोकि उपसतही जलनिकास परियोजना पूर्व की मात्रा से काफी कम है। मृदा की लवणता सतह की परत पर प्रभावित जड क्षेत्र के हिस्से में मृदा के निचले स्तर की तुलना में कम पायी गयी जिसका अनुमान यह लगाया जाता है कि सभी क्षेत्रों में लवण निक्षालन प्रभावी रूप से हुआ है।

इसी तरह निकासित जल की लवणता भी कम हुई, जो कि 1.3 से 4.4 डेसीसिमंस प्रति मीटर पायी गयी (तालिका 6) और आने वाले समय में और भी कम होने की उम्मीद है। यह जल फिर से सिंचाई हेतु उपयोग में लाया जा सकता है। हालांकि जलनिकासी के पानी की रासायनिक संरचना यह बताती है कि अभी सोडियम कार्बोनेट एवं सोडियम क्लोराईड की मात्रा ज्यादा है और क्षारीयता की ओर इंगीत करती है जिसका अनुमान सोडियम अधिशोषण अनुपात 10 से अधिक होने एवं अवशिष्ट सोडियम कार्बोनेट 2.5 मिलीतुल्यांक प्रति लीटर से अधिक होने से लगता है। लेकिन दिन प्रति दिन लवणों के निक्षालन से इसमें

कमी आने की उम्मीद है। जल का पीएच मान स्वीकार्य सीमा के भीतर पाया गया है और उपसतही जलनिकास परियोजना लगाने के बाद इन घटकों की मात्रा में कमी आने की उम्मीद है। मृदा के गुणधर्म जैसे वैधुत चालकता, पीएच मान, सोडियम अधिशोषण अनुपात, विनिमय योग्य सोडियम का अलग–अलग ब्लॉक में उपसतही जलनिकास परियोजना के पूर्व एवं बाद की स्थिति में आया हुआ बदलाव इस परियोजना का प्रभाव दर्शाता है।

फसल की उत्पादकता

उपसतही जलनिकास के पूर्व मुलद गाँव के किसान गन्ना एवं धान की फसल लेते थे। लेकिन उपसतही जलनिकास लगाने के बाद किसान केवल गन्ने की फसल ले रहे हैं, क्योंकि गन्ने की फसल की खेती किसानों को लाभदायक हो रही है। उपसतही जलनिकास लगने के पूर्व तथा पश्चात गन्ने की उत्पादकता में काफी वृद्वि हुई है, जिसका

तालिका 5: उपसतही जलनिकास परियोजना लगने के बाद मृदा के गुणधर्म

सर्वे नंबर	गहराई (सेंमी.)	पीएच मान	वैद्युत चालकता*	घुलनशील तत्व (मिली तुल्य प्रति लीटर)							सोडियम अधिशोषण अनुपात
				सोडियम	पोटेशियम	कैल्शियम	मैग्नीशियम	कार्बोनेट	बाई–कार्बोनेट	क्लोराइड	
125	0–30	7.55	1.19	7.20	0.04	3.00	3.00	9.0	0.0	12.5	4.16
	30–60	7.51	1.50	11.50	0.05	3.50	3.00	13.0	0.0	12.5	6.38
	60–90	7.58	1.61	11.18	0.02	2.50	3.50	11.0	0.0	12.5	6.45
123	0–30	7.45	1.23	5.90	0.05	3.50	3.50	8.0	1.5	15.0	3.15
	30–60	7.6	1.44	9.50	0.03	3.50	3.50	15.0	0.0	15.0	5.08
	60–90	7.58	1.57	8.60	0.02	4.00	2.00	9.0	0.0	17.5	4.97
122	0–30	7.41	2.60	9.35	0.01	10.0	6.00	8.0	0.0	10.0	3.31
	30–60	7.59	1.98	12.00	0.05	5.00	3.50	7.0	0.0	15.0	5.82
	60–90	7.63	1.77	11.60	1.05	3.50	4.00	5.0	0.0	17.5	5.99
120	0–30	7.49	0.59	2.32	0.02	2.00	2.50	11.0	0.0	10.0	1.55
	30–60	7.53	0.51	2.57	0.03	2.00	2.00	11.0	0.0	10.0	1.82
	60–90	7.52	0.83	2.66	0.10	4.00	2.00	10.0	0.0	15.0	1.54
80	0–30	7.41	1.08	6.26	0.04	2.00	3.50	6.0	0.0	15.0	3.77
	30–60	7.44	1.29	8.69	0.04	2.50	3.00	4.0	5.5	15.0	5.24
	60–90	7.53	2.2	16.78	0.06	2.50	4.00	11.0	0.0	30.0	9.31
78	0–30	7.58	0.82	4.71	0.56	2.00	5.50	6.0	2.0	15.0	2.43
	30–60	7.77	1.18	8.07	0.02	3.50	1.50	8.0	0.0	17.5	5.10
	60–90	7.64	3.40	20.05	0.01	9.50	9.00	12.0	0	32.5	6.59
66	0–30	7.29	1.17	6.53	0.07	3.00	5.00	10.0	0	15.0	3.27
	30–60	7.62	1.74	7.72	0.16	4.50	7.00	11.0	0	22.5	3.22
	60–90	7.59	2.10	6.96	0.39	8.00	8.50	6.0	0	17.5	2.42
64	0–30	7.56	0.54	2.01	0.05	2.00	4.50	5.0	0	12.5	1.11
	30–60	7.57	0.47	2.197	0.04	1.50	3.00	6.0	0	12.5	1.46
	60–90	7.65	0.50	2.14	0.05	2.00	2.00	6.0	0	7.5	1.51

*डेसी सिमंस प्रति मीटर

तालिका 6 : उपसतही जलनिकास परियोजना के लिए जल की रासायनिक संरचना

सर्वे नंबर	पीएच मान	वैद्युत चालकता	घुलनशील तत्व (मिलीतुल्य प्रति लीटर)							सोडियम अधिशोषण अनुपात	अवशिष्ट सोडियम कार्बोनेट
			कैल्शियम	मैग्नीशियम	सोडियम	पोटेशियम	क्लोराइड	कार्बोनेट	बाई–कार्बोनेट		
122	7.45	2.7	3.0	9.0	32.6	0.16	17.5	6.0	0	13.30	..
125	7.75	2.6	4.5	3.5	27.7	0.14	20.0	11.0	0	13.85	3.0
80	7.10	1.3	2.5	2.5	8.50	0.19	12.5	9.0	0	5.37	4.0
66	7.83	4.4	5.0	3.5	49.34	0.12	27.5	13.0	0	23.95	4.5
64	7.57	4.2	3.5	5.5	37.24	0.12	27.5	18.0	0	17.56	9.0

*डेसी सिमंस प्रति मीटर

विवरण तालिका 7 में दिया गया है। उपसतही जलनिकास के बाद गन्ने की फसल का उत्पादन 78 से 115 टन प्रति हैक्टर रहा जोकि पहले 38 से 45 टन प्रति हैक्टर था। यह उत्पादन वृद्वि 202 प्रतिशत तक बढ गई है। गन्ने की फसल की पैदावर में उल्लेखनीय बढोत्तरी का प्रमुख कारण उपसतही जलनिकास का कार्यान्वित होना है, जिसकी वजह से पौधों के जड क्षेत्र में से लवणों का निक्षालन हो रहा है और पौधों को पोषक तत्वों की उपलब्धता अच्छी तरह हो रही है।

उपसतही जलनिकास परियोजना क्षेत्र में गन्ना खेती का आर्थिक एवं लाभ लागत विश्लेषण

प्राथमिक एवं द्वितीयक आंकडे जोकि विभिन्न स्त्रोत से लिए गये, पर आधारित आर्थिक विश्लेषण किया गया। विभिन्न सवालों की एक अनुसूची बनायी गयी और व्यक्तिगत साक्षातकार किया गया जिसमें 13 किसानों ने भाग लिया। अतिरिक्त आंकडे जैसे किसानों की आर्थिक स्थिति संबंधित, कृषि में लगने वाली लागत साम्रगी एवं मुख्य फसलों की पैदावार के आंकडे भी एकत्रित किये गये (तालिका 8)। गन्ने की खेती के कार्य जैसे जुताई, बीज साम्रगी, सिंचाई, उर्वरक एवं खाद के लागत मुल्यों को जोडकर गन्ने की खेती की कुल लागत निर्धारित की गयी जो रुपये 78270 प्रति हैक्टर एवं 81698 प्रति हैक्टर क्रमशः एसएसडी के पूर्व एवं बाद की स्थिति में निकाली गई। एसएसडी के बाद गन्ने की खेती की लागत में 12 प्रतिशत की वृद्वि पायी गयी। एसएसडी के पूर्व किसानों की गन्ने की खेती से वार्षिक सकल आय रुपये 80460 जोकि एसएसडी लगने के बाद रुपये 191840 प्राप्त की गई। जलनिकास पूर्व किसानों की शुद्व आय रुपये 2190

तालिका 7: उपसतही जलनिकास परियोजना लगने के पूर्व एवं पश्चात गन्ने की उत्पादकता

किसान का नाम	उत्पादकता (टन प्रति हैक्टर)		वृद्धि प्रतिशत
	पूर्व (2011)	पश्चात (2013)	
मुकेशभाई नथुभाई पटेल	43	98	127.91
वासुदेव नथुभाई पटेल	38	115	202.63
कांतिबाई नागिनबाई पटेल	45	98	117.78
नटवरभाई केशव पटेल	40	90	125.00
विनोद ईश्वरभाई पटेल	39	78	100.00
ईश्वरभाई विट्ठलभाई पटेल	42	113	169.05
बलवंतभाई केशरभाई पटेल	40	105	162.50
मुकेशभाई ठाकोर	35	95	171.43
किशोरभाई गोपालजी पटेल	22	93	190.63
विरेंद्रभाई शांतिलाल पटेल	33	97	193.64
जयंतीभाई केशव पटेल	42	90	114.29
विनोदभाई वल्लभभाई पटेल	38	90	136.84
संदीपभाई हसमुखभाई पटेल	40	85	112.50

तालिका 8: उपसतही जलनिकास परियोजना के पूर्व एवं पश्चात गन्ना खेती का लाभःलागत अनुपात

विवरण	उपसतही जलनिकास पूर्व	उपसतही जलनिकास पश्चात	बदलाव (प्रतिशत)
उत्पन्न (टन/हैक्टर)	40.23	95.92	138.4
सकल आय (रुपये/हैक्टर)	80460	191840	138.4
खेती की लागत (रुपये/हैक्टर)	78270	87698	12.05
निवल आय (रुपये/हैक्टर)	2190	104142	.
लाभःलागत अनुपात	1.03	2.19	112.62

प्रति हैक्टर थी जबकि जलनिकास के बाद 104142 रुपये प्रति हैक्टर मिली। उपसतही जलनिकास तकनीक का उपयोग करने से फसल की पैदावार में वृद्धि हुयी जिसकी वजह से किसानों की आय में वृद्धि और लाभःलागत अनुपात 1.03 से 2.19 तक बढा है, जोकि 112 प्रतिशत की वृद्धि दर्शाता है।

निष्कर्ष

उपसतही जलनिकास एक प्रभावी तकनीकी है जिसे भारत के विभिन्न राज्यों में लगभग 60000 हैक्टर क्षेत्र में लगाया जा चुका है और जलग्रस्त लवणीय मृदा में सुधार हुआ है। मुलद गाँव की गहरी काली मृदा में 13 किसानों के खेतों में उपसतही जलनिकास योजना लगभग 45 हैक्टर में कार्यान्वित करने के बाद गन्ने की पैदावार में वृद्धि हुई है। काली मृदा के भौतिक एवं रासायनिक गुणधर्म में सुधार हुआ है। इस उपसतही जलनिकास की नालियां 30 मीटर के अंतराल में 1.3 से 1.5 मीटर की गहराई में लगाई गयी और इस योजना का परिणाम बहुत ही उत्साहजनक रहा, जिससे निकासी पूर्व औसतन 40 टन प्रति हैक्टर गन्ने का उत्पादन बढकर 96 टन प्रति हैक्टर हुआ। इस तरह उपसतही जलनिकास तकनीक न केवल तकनीकी रूप से कुशल है बल्कि आर्थिक रूप से भी स्वीकार्य है। उपसतही जलनिकास परियोजना की डिजाईन और रूपरेखा को स्वीकृति देने के साथ–साथ न्यूनतम पर्यावरणीय बंधन सुनिश्चित करने तथा ऐसी परियोजनाओं की निगरानी और प्रभाव आंकलन के लिये केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान की सहभागिता आवश्यक है।

समाप्त

महत्त्व इस बात का नहीं है कि आप कितने अच्छे हैं।
महत्त्व इस बात का है कि आप कितना अच्छा बनना चाहते हैं।

यू टी एफ आई तकनीक द्वारा भूजल पुनर्भरण एवं इसका प्रभाव

विनय कुमार मिश्र, छेदी लाल वर्मा, सुनील कुमार झा, मनीष पाण्डेय, नवनीत शर्मा एवं [1]पाल पेल्बिक

भाकृअनुप–केन्द्रीय मुदा लवणता अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, लखनऊ (उत्तर प्रदेश)
[1]अंतर्राष्ट्रीय जल प्रबंधन संस्थान, भारत/लावो पीडीआर
E-mail : vkmishra_63@yahoo.com

भूजल स्तर का तेजी से गिरना आज देश एवं प्रदेश के लिये चुनौती बना हुआ है। देश में लगभग 70 प्रतिशत सिंचाई एवं पीने का पानी भूजल पर निर्भर है। यदि इसी गति से भूजल का उपयोग होता रहा, तो भविष्य में स्तर इतना नीचे चला जाएगा कि इसका उपयोग करने हेतु ऊपर लाना आर्थिक रूप से लाभदायी नहीं रहेगा। वर्तमान सरकार ने प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना के तहत हर खेत को पानी उपलब्ध कराने का लक्ष्य रखा है। इस मिशन में सफलता तभी प्राप्त होगी जब वर्षा के पानी को भूजल के रूप में संचित करके वैज्ञानिक विधि से इसका सही उपयोग किया जाए।

यदि वर्षा जल की उपलब्धता का आंकलन किया जाये तो वर्श में औसतन 100 दिनों में 800 से 1000 मि.मी. पानी केवल 15 से 20 दिनों में प्राप्त होता है। अधिकांश पानी की मात्रा नदियों द्वारा समुद्र में चली जाती है तथा बाढ़ के रूप में जनधन का भारी नुकसान होता है। विश्व में 1980 से 2013 तक की अवधि में, बाढ़ से लगभग 5,000 लोग मारे गए, एवं 52 लाख लोगों का जीवन प्रभावित हुआ है। हर वर्ष 16 बिलियन अमरीकी डॉलर का नुकसान होता है। इसी तरह सूखे से 17,000 लोग मारे गए एवं 76 मिलियन लोग प्रभावित हुए और हर वर्श 3.5 बिलियन अमरीकी डॉलर का नुकसान हुआ है।

बाढ़ एवं सूखे की स्थिति से निपटने के लिए अंतर्राष्ट्रीय जल प्रबंधन संस्थान द्वारा अंडरग्राउंड टेमिंग ऑफ फ्लड्स फॉर इरीगेशन (यूटीएफआई) तकनीक विकसित की गयी है। यूटीएफआई में बाढ़ के पानी को नहरों के द्वारा अतिदोहित क्षेत्रों के गाँवों के तालाबों में लाकर रिचार्ज साफ्ट द्वारा भूजल भण्डारण किया जाता है। वैसे तो गाँवों के तालाबों द्वारा भी भूजल पुर्नभरण होता है लेकिन वर्तमान समय में जिस दर से हम भूजल को निकाल रहे हैं उस दर से भूजल का पुर्नभरण नहीं हो पाता है, ऐसी स्थिति में यूटीएफआई तकनीक द्वारा भूजल पुर्नभरण दर को बढ़ाकर कुछ सीमा तक भूजल की मात्रा तथा स्तर को बढ़ाया जा सकता है जिससे बाढ़ एवं सूखा के प्रभाव से बचने में भी मदद मिल सकती है।

यूटीएफआई की परिकल्पना

यूटीएफआई का प्रथम परीक्षण अंतरराष्ट्रीय जल प्रबंधन संस्थान के वैज्ञानिक डा. पॉल पेल्बिक के द्वारा थाइलैंड की नदी चाओ फ्राया में वर्ष 2012 में किया गया। चाओ फ्राया नदी थाइलैंड की प्रमुख नदियों में से एक है जिसका योगदान थाइलैंड के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण है। आंकलन के अनुसार 28 प्रतिशत वर्षा का पानी जोकि थाइलैंड की खाड़ी में जाता है, भूजल स्तर बढ़ाने के काम में लाया जाता है। परीक्षण के बाद के आंकड़ों के अनुसार वर्षा का पानी जो बाढ़ का खतरा पैदा करता था, इसको आसानी से रिचार्ज कुओं के द्वारा पुर्नभरण किया गया और 0.1 प्रतिशत तक के जलबहाव को आसानी से भूजल के रूप में नदी के आस–पास के इलाकों में यूटीएफआई की संरचनाएँ बनाकर संचित किया गया।

यूटीएफआई से प्रमुख लाभ

- बाढ, सूखा और गिरते भूजल स्तर जैसी समस्याओं से निपटने में सहायक।
- हर खेत को पानी उपलब्ध कराने में सहायक।
- खाद्य सुरक्षा, कृषि उत्पादन, रोजगार और किसान आय में वृद्धि।
- बाढ व सूखे के कारण शहरों की ओर लोगों के पलायन में भी कमी आती है।
- चल रहे पंपों की लागत में कमी और कम कार्बन डाईऑक्साइड उत्सर्जन होता है।
- गाँव एवं शहरों के पोखर एवं तालाब को पुर्नजीवित करने में सहायक।
- नदियों और झीलों के लिए शुष्क मौसम के आधार प्रवाह में वृद्धि।

यूटीएफआई को लाभकारी बनाने का उपाय

यूटीएफआई की उपुयक्तता निम्नलिखित तीन परिस्थितियों पर निर्भर रहती है:

- **आपूर्ति** : बाढ और उसके प्रभाव।
- **माँग** : पानी का उपयोग, सूखा और भूजल उपलब्धता।
- **प्रौद्योगिकी** : यूटीएफआई बनाने के लिए जमीन की उपलब्धता और उपयुक्तता।

आपूर्ति के दृष्टिकोण से जिन क्षेत्रों में यूटीएफआई को लगााना हो वहाँ नियमित रूप से बाढ आनी चाहिए और इसका प्रभाव हफ्तों या फिर महीनों तक होना चाहिये। आस–पास बाढ़ के पानी को भण्डारण करने की क्षमता हो जिससे स्थानीय स्तर पर बाढ के प्रभाव को कम किया जा सके और साथ ही साथ भूजल की माँग को भी स्थानीय स्तर पर पूरा किया जा सके।

भूजल की माँग ऐसी होनी चाहिए जो मौजूदा संग्रहीत पानी की उत्पादकता को बढ़ा सके। शहर एवं फसल सघनता, जहाँ पानी की माँग अधिक हो, यूटीएफआई का प्रयोग लाभकारी एवं सफल होगा। यूटीएफआई एक ऐसी तकनीक है जो उपयुक्त भूमि की सतह और उपसतह की पहचान करने और परिस्थितियों के लिए उपयुक्त डिजाइनों को लागू करने पर निर्भर करता है। भंडारण के लिए लक्षित जलभृत आमतौर पर लगभग 50 मीटर की गहराई तक होते हैं। यूटीएफआई तकनीक की सफलता उपयुक्त भूमि चुनाव के साथ–साथ, प्रयुक्त होने वाले डिजाइनों पर निर्भर करती है। जहाँ तक सम्भव हो लवण ग्रस्त भूजल वाले क्षेत्रों में इस तकनीक का प्रयोग नहीं करना चाहिए। यदि ऊपर की सतह की मिट्टी 3 से 4 मीटर चिकनी होती है तो ऐसी स्थिति में कुओं की संरचनाओं का निर्माण किया जाता है ताकि रिचार्ज की दर को तेजी से किया जा सके।

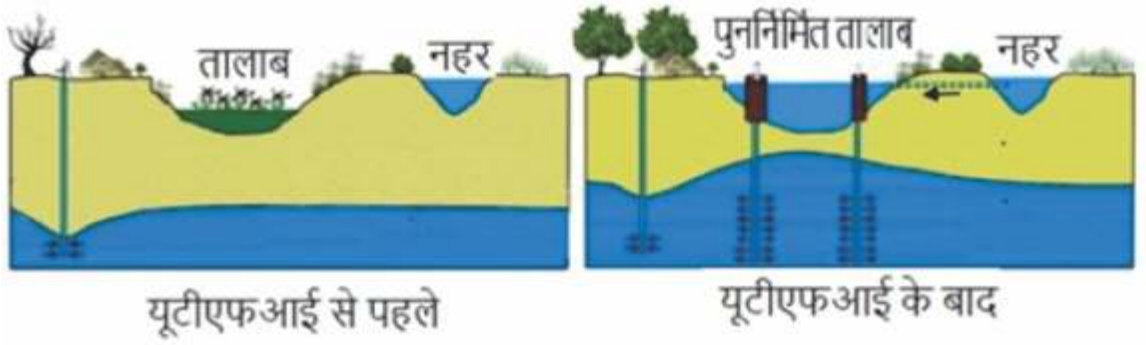

तालिका 1: यूटीएफआई कार्यान्वयन हेतु उपयुक्त स्थिति

जलभृत	सामान्य रूप से उथले गहराई 50 मीटर से कम अर्द्धसीमित जलभृत उपलब्ध हों।
कार्यक्षेत्र का चयन	नियमित बाढ/सूखा और भूजल स्तर का लगातार गिरने वाला क्षेत्र होना चाहिए।
रिचार्ज विधि	रिचार्ज विधि में तालाब के द्वारा रिचार्ज करने के लिए बलुई मिट्टी होनी चाहिए। यदि 4–5 मीटर तक मिट्टी चिकनी हो तो फिर संरचना बनाकर रिचार्ज करना उचित होता है।
डिजाइन	सरल एवं उपयोगी संरचना का चुनाव होना चाहिए। फिल्टर की डिजाइन ऐसी हो कि स्थानीय समुदाय द्वारा आसानी से प्रबंधन किया जा सके।
संचालन की आवृत्ति	अतिरिक्त प्रवाहों को रोकने में सक्षम हो।
संचालन और रखरखाव	स्थानीय समुदाय के लोगों एवं अधिकारियों की आपस में साझेदारी से कार्य हो।

तालिका 2: रिचार्ज कूप बनाने की औसत लागत

तालाब खोदने का विवरण	घनमीटर प्रति इकाई (मूल्य)	व्यक्ति के लिए आवश्यक दिन प्रति इकाई	मनरेगा के माध्यम से 30 मीटर गहराई के कुँआ के लिए लागत
ड्रिलिंग–प्रति मीटर	500	30	15000
कुओं को विकसित करना	2000	1	2000
पीवीसी पाइप 150 मिमी (6 किग्रा/वर्ग मीटर/मीटर)	500	30	15000
ईंट संरचना 3 मीटर व्यास, 1 मीटर ऊंचाई	15,000	1	15000
बजरी	150 प्रति कुण्टल	25 कुण्टल	3750
		कुल लागत	50750

यूटीएफआई का प्रभाव

यदि यूटीएफआई के 10 संरचनाओं का निर्माण गाँवों के तालाब में लगाया जाए तथा लगातार 80 से 85 दिनों तक रिचार्ज हेतु पानी की उपलब्धता बनी रहे तो प्रयोगों द्वारा देखा गया कि सूखे के दिनों में भूजल द्वारा 8 हैक्टर अतिरिक्त क्षेत्र में सिंचाई की जा सकती है। यदि वृहद स्थल पर गाँवों के तालाबों में इस प्रकार की तकनीक का प्रयोग किया जाये तो संभवतः बाढ़ एवं सूखे की हानि से बचने में सहायक हो सकता है तथा शहरों और अधिक माँग वाले क्षेत्रों में भूजल के गिरते स्तर को भी रोका जा सकता है।

समाप्त

हमें सीमित मात्रा में निराशा को स्वीकार करना चाहिए,
लेकिन असीमित आशा को नहीं छोडना चाहिए।

हरियाणा में उपसतही जलनिकास प्रणाली के माध्यम से लवणीय मृदा के सुधार का आर्थिक विश्लेषण

राजू आर., थिम्मप्पा के., प्रवीण कुमार, सत्येन्द्र कुमार, असलम पठान एवं कैलाश प्रजापत
भाकृअनुप–केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा)
E-mail : r.raju@icar.gov.in

भारतीय कृषि में मृदा लवणता एक प्रमुख समस्या है जो कृषि भूमि की उत्पादकता पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है। भारत में लवणग्रस्त मृदाओं का क्षेत्रफल 2.95 मिलियन हैक्टर है, जो मुख्यतः 12 राज्यों और अंडमान एवं निकोबार में फैला हुआ है। जिसमें हरियाणा राज्य का 49157 हैक्टर क्षेत्र लवणता से प्रभावित है। इन लवणता प्रभावित क्षेत्रों में कृषि उत्पादकता बढ़ाने के लिए विशेषज्ञों द्वारा उपसतही जलनिकास प्रणाली और बेहतर सिंचाई प्रबंधन की सिफारिश की गयी है। उपसतही जलनिकासी के माध्यम से फसलों को अत्यधिक जलभराव की स्थिति से सुरक्षित किया जाता है और ऊपरी मिट्टी में लवणता को नियंत्रित किया जा सकता है।

जलनिकासी का प्रभाव खरीफ ऋतु (जून से अक्टूबर) की तुलना में रबी ऋतु (अक्टूबर से अप्रैल) में ज्यादा होता है। अंतर या तो सिंचाई के पानी की कमी या मानसून वर्षा से बाढ़ की स्थिति या दोनों के कारण होता है। लवणीय मृदा के सुधार हेतु उपसतही जलनिकास प्रणाली की स्थापना के लिए अधिक लागत की आवश्यकता है और इसलिए छोटे पैमाने पर/व्यक्तिगत किसान स्तर पर अपनाना बहुत मुश्किल है। यह तकनीक सरकार या अन्य वित्तपोषण एजेंसी के समर्थन से बड़े पैमाने पर लागू की जा सकती है। हरियाणा ऑपरेशनल पायलट प्रोजेक्ट (एचओपीपी) हरियाणा में उपसतही जलनिकास तकनीक स्थापित करने में एक प्रमुख भूमिका निभा रही है। वर्तमान अध्ययन उपसतही जलनिकास प्रौद्योगिकी की वित्तीय व्यवहार्यता को पूरा करने का प्रयास है।

अध्ययन क्षेत्र

हरियाणा के फतेहाबाद जिले में स्थित उपसतही जलनिकास प्रणाली अध्ययन किया गया। इस उपसतही जलनिकास परियोजना का कुल क्षेत्र 277 हैक्टर है जो लगभग 152 किसान परिवारों को लाभ पहुँचाता है। इस परियोजना को दस खण्डों के तहत विभाजित किया गया है, एक खण्ड का क्षेत्रफल 23 से 52 हैक्टर तक है जिसकी औसत 25 हैक्टर आती है। प्रत्येक खण्ड में लाभकारी किसानों की संख्या 15 से 30 तक थी और प्रत्येक किसान के पास औसतन 1.5 हैक्टर क्षेत्रफल था। दस जल निकासी ब्लॉकों में से, विस्तृत जांच के लिए केवल एक ब्लॉक (संख्या 3) का चयन किया गया, जहाँ उचित पंपिंग कार्य किया जा रहा था। कृषि उपज और किसानों की आय पर उपसतही जलनिकास तकनीक के प्रभाव का अध्ययन करने के लिए, लाभार्थी किसानों से व्यक्तिगत रूप से मुलाकात की गयी। खरीफ और रबी फसलों में 2011–14 के दौरान 3 वर्षों में लगी लागत और होने वाले लाभ को अनुमानित किया गया।

लवणीय मृदा के सुधार के लिए उपसतही जलनिकास प्रणाली पर निवेश की आर्थिक व्यवहार्यता का आंकलन करने के लिए, चार प्रमुख मापदंडों का उपयोग किया गया। वह, लागत लौटाने की अवधि (पीबीपी), शुद्ध वर्तमान मूल्य (एनपीडब्ल्यू), लाभ–लागत अनुपात (बी–सी अनुपात) और आंतरिक वापसी दर (आईआरआर) थे। वर्तमान विश्लेषण निम्नलिखित दो मान्यताओं पर आधारित है जैसे, ब्याज की बाजार दर प्रतिवर्ष 12 प्रतिशत के बराबर है और उपसतही जलनिकास परियोजना की अवधि 30 वर्ष तक की होती है।

आर्थिक विवेचना

उपसतही जलनिकास परियोजना की वित्तीय व्यवहार्यता का विश्लेषण करने हेतु हरियाणा की जलनिकास परियोजना में लाभ और लागत से जुड़े आंकड़ों का उपयोग किया गया। इस अध्ययन के लिए चार प्रमुख फसल चक्रों पर विचार किया गया। धान–गेहूँ, धान–सरसों, कपास–गेहूँ और कपास–सरसों (तालिका 1)। अध्ययन से पता चलता है कि सभी फसल चक्रों के लिए बी–सी अनुपात एक से अधिक है और सकारात्मक एनपीडब्ल्यू, आईआरआर के उच्च मूल्य और कम लौटाने की

अवधि है, जो लवणीय मृदा के सुधार के लिए उपसतही जलनिकास व्यवस्था पर निवेश की आर्थिक व्यवहार्यता को दर्शाता है। हालांकि, इससे पता चलता है कि धान और गेहूँ की फसल में बी–सी अनुपात सबसे ज्यादा था। चावल और गेहूँ की फसल में उपसतही जलनिकास पर निवेश किए गए प्रत्येक रुपए से लाभ रु. 2.71 होगा, यदि निकास प्रणाली का जीवन 30 साल माना जाता है। चावल–सरसों, कपास–गेहूँ और कपास–सरसों की फसल का बी–सी अनुपात क्रमशः 2.37, 1.53 और 1.20 था। एनपीडब्ल्यू चावल–गेहूँ फसल चक्र के लिए सबसे अधिक रु. 1,12,862 था, जहाँ कपास–सरसों फसल चक्र में रु. 13,083 का निम्न एनपीडब्ल्यू पाया गया। सभी फसल चक्रों के लिए आईआरआर 15 से 39 प्रतिशत के बीच रहा जोकि काफी अच्छा माना जाता है। उपसतही जलनिकास की लागत की वापसी अवधि 3 से 5 साल के बीच होती है और यह फसल चक्र पर आधारित होती है। चावल–गेहूँ फसल चक्र तीन साल के भीतर जलनिकास पर किए गए निवेश को लौटा देता है, उसके बाद चावल–सरसों, कपास–गेहूँ और कपास–सरसों का क्रमशः 3, 4 और 5 वर्ष का पीबीपी होता है। सामान्य तौर पर, सभी फसल चक्रों को रिटर्न के संदर्भ में बेहतर पाया गया है। उच्च उत्पादन क्षमता वाले क्षेत्रों और उन क्षेत्रों में जहाँ उच्च उत्पादन तकनीक का उपयोग किया जाता है, जलग्रस्त लवणीय मृदा के सुधार से बेहतर आर्थिक परिणामों की उम्मीद की जा सकती है।

तालिका 1: हरियाणा में भू जलनिकास पद्धति को स्थापित करने के संभाव्य

फसल चक्र	लाभः लागत अनुपात	एन.पी.डब्ल्यू. (रुपये)	आई आर आर (घटक)	पीबीपी (वर्ष)
क. वास्तविक लागत व लाभ पर आधारित				
धान–गेहूँ	2.71	112862	39.64	2
धान–सरसों	2.37	90852	34.34	3
कपास– गेहूँ	1.53	35093	20.83	4
कपास–सरसों	1.20	13083	15.38	5
ख. लागत 5 प्रतिशत अधिक व लाभ 10 प्रतिशत कम होने पर आधारित				
धान– गेहूँ	2.38	93532	35.01	3
धान–सरसों	2.09	73723	30.21	3
कपास– गेहूँ	1.35	23540	17.98	5
कपास–सरसों	1.06	3732	12.98	6
ग. लागत 5 प्रतिशत अधिक व लाभ 20 प्रतिशत कम होने पर आधारित				
धान– गेहूँ	2.12	75635	30.32	3
धान–सरसों	1.86	58027	26.06	3
कपास–गेहूँ	1.20	13420	15.10	5
कपास–सरसों	0.94	.4188	10.52	7

भविष्य में होने वाली प्राकृतिक आपदाओं जैसे कीट प्रकोप अनिश्चित मौसम परिस्थितियाँ आदि के कारण पैदावार में कमी के साथ–साथ महंगाई के कारण लागत में वृद्धि और लाभ में कमी तथा परियोजना के अन्तर अर्थशास्त्र की संवेदनशीलता कितनी है, का निर्धारण करने की प्रवृत्ति कृषि परियोजना में पाई जाती है। इससे केवल परियोजना को स्थापित करने या न करने के निर्णय में सहायता प्राप्त होती है अपितु विस्तार सेवाओं को अच्छी तरह से प्रयोग करने पर भी बल मिलता है। इसलिये लागत व लाभ के परिवर्तन के कारण आर्थिक कारक किस तरह बदलते हैं इन दो बिन्दुओं को लेकर संवेदनशील विश्लेषण किया गया है। संवेदनशील विश्लेषण के लिये संचालन व रखरखाव की लागत ली गई है। जबकि जलनिकास की स्थापना की लागत को स्थिर लागत के रूप में लेकर गणना की गई है।

साध्यता विश्लेषण (तालिका 1) 5 प्रतिशत लागत में बढ़ोतरी और लाभ में 10 प्रतिशत कमी, यह दर्शाता है कि लाभ–लागत दर सभी चक्रों में एक से अधिक और 1.06 –2.38 के मध्य पाई गई। इस विश्लेषण में आई आर आर 12 प्रतिशत से अधिक (पूंजी प्रयोग की लागत) रही। सभी फसल चक्रों में एन.पी.डब्ल्यू. धनात्मक रहा। लाभ में 20 प्रतिशत की कमी का साध्यता अध्ययन

भी सभी फसल चक्रों में एन.पी.डब्ल्यू. धनात्मक तथा सभी तीन मामलों में एक से अधिक दर्शाता है। एन.पी.डब्ल्यू और आई आर आर अधिक पाई गई जबकि कपास–सरसों फसल चक्र में ये सभी कम पाई गई। ऋणात्मक एन.पी.डब्ल्यू. और लाभ लागत का एक से कम होना दर्शाता है कि भूजल निकास पद्धति की स्थापना की लागत को पूरा करने में कपास–सरसों फसल चक्र का लाभः सक्षम नहीं है और इसलिये जहाँ मृदाएं लवणग्रस्त है, वहाँ इस फसल चक्र का सुझाव नहीं दिया जा सकता है।

निष्कर्ष

इस अध्ययन और पिछले अध्ययनों में भी लवणीय भूमि के सुधार में भूजल निकास तकनीकियों के लाभों को देखा गया है इसके मुख्य लाभ हैंः भूजल स्तर की गहराई और मृदा तथा जल की लवणता में कमी। अंततः यह प्रणाली फसल चक्र में वृद्धि तथा फसल में सघनता के साथ–साथ फसल की उपज में भी वृद्धि करती है। चार विकल्पीय फसल चक्रों के आर्थिक विश्लेषण में पाया गया कि धान–गेहूँ फसल प्रणाली सर्वाधिक लाभ रुपये 1,12,862 देती है और इसकी लागत वापसी की आन्तरिक दर 39.64 प्रतिशत तक है तथा लाभःलागत अनुपात 2.71 पाया गया। इस प्रकार हरियाणा की जलाक्रांत मृदाओं में भूजल निकास पद्धति साध्य, आर्थिक और सामाजिक रूप से लाभप्रद पाई गई है।

समाप्त

⌘ हमारी खुशी का स्त्रोत हमारे ही भीतर है,
यह स्त्रोत दूसरों के प्रति संवेदना से पनपता है। ⌘

मीठी मक्का की खेती की उत्पादन तकनीक

दिव्या चौहान, दिलीप सिंह एवं एस.एस. शर्मा

राजस्थान कृषि महाविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान)

E-mail : dilipagron@gmail.com

मक्का को विश्व में खाद्यान्न फसलों की रानी कहा जाता है क्योंकि इसकी उत्पादन क्षमता खाद्यान्न फसलों में सबसे अधिक है। मक्का एक महत्वपूर्ण फसल है तथा आदिवासी एवं गरीब किसान का प्रमुख भोजन है। वर्तमान में 24 प्रतिशत मक्का का उपयोग मानव आहार के रूप में होता है। इसका प्रमुख कारण वैज्ञानिकों द्वारा एकल क्रास किस्मों को बनाना एवं किसानों द्वारा इन किस्मों का वृहद् स्तर पर प्रयोग करना है। प्रायः यह देखा गया है कि शहरों के आसपास काफी मात्रा में सामान्य प्रचलित देशी किस्मों की अगेती बुवाई कर उसका उपयोग हरे भुट्टों एवं हरे चारे के लिए किया जाता है। मक्का का हरा चारा पशुओं के लिए सूखे चारे की अपेक्षा अधिक पौष्टिक, पाचक व स्वादिष्ट होता है। इसमें प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, कैल्शियम, फॉस्फोरस तथा खनिज लवण प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। सूखने के बाद मक्का की कड़बी में लिग्निन की मात्रा बढ़ जाती है जो अपचनीय होता है तथा चारे की पौष्टिकता कम करता है। मक्का के हरे चारे में हाइड्रोसायनिक अम्ल (चारे में पाये जाने वाला विषैला पदार्थ) की मात्रा नहीं होती है इसलिए इसे बिना किसी भय के किसी भी अवस्था में पशुओं को खिलाया जा सकता है।

वर्तमान में वैज्ञानिकों द्वारा मीठी मक्का की कई प्रजातियाँ विकसित करने से मीठी मक्का की खेती को काफी पहचान मिल चुकी है। इन किस्मों के भुट्टों के दाने मीठे, मलाईदार, मुलायम एवं खाने पर छिलका रहित मालूम होते हैं। मीठी मक्का के भुट्टे बाजार में काफी महंगे बिकते हैं अतः किसान इसकी खेती कर अधिक मुनाफा एवं पौष्टिक हरा चारा प्राप्त कर सकता है। शहरों के आसपास के किसान इसकी खेती कर अधिक मुनाफा कमा सकते हैं। राजस्थान के दक्षिणी भाग में जहाँ सिंचाई की व्यवस्था हो तो मीठी मक्का को प्रमुख व्यवसायिक फसल के रूप में उगा सकते है। मीठी मक्का की खेती को बढ़ावा देने से रोजगार सृजन, अल्प समय में धनोपार्जन, मूल्य संवर्धन एवं निर्यात की संभावनाएं बढती है। वर्श भर उगाई जाने वाली एवं विविधतापूर्ण मक्का फसल की खेती उन्नत तकनीक से करके किसान अधिक उत्पादन व लाभ कमा सकते हैं।

मीठी मक्का के संकर बीजों को बोने के पश्चात् इनसे प्राप्त उत्पाद को अगले वर्ष संकर मक्का के रूप में प्रयोग नहीं करें। संकर मक्का का बीज हर वर्ष नया लाना आवश्यक होता है।

उन्नत सस्य क्रियाएँ

भूमि का चयन एवं जाँच : मक्का की प्रारम्भिक अवस्था में खेत में पानी भरा रहने से इसकी बढ़वार नहीं होती है अतः उचित जलनिकास वाला खेत जिसमें मिट्टी का पीएच मान 6.5 से 7.5 के बीच हो, मक्का की खेती के लिए उपयुक्त रहता है। मोथा एवं दूब जैसे खरपतवारों के नियंत्रण एवं कीटों, बीमारियों की रोकथाम हेतु ग्रीष्मकालीन जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करें एवं फिर वर्षा आने पर हैरो एवं कल्टीवेटर पाटा चला खेत को समतल कर मक्का की बुवाई करें।

मक्का की प्रमुख किस्में

मीठी मक्का की संकर किस्म जो इसकी खेती के लिए उपयुक्त पायी गयी।

मीठी मक्का	दाना	:	पीला
सुगर– 75 संकर किस्म	पकने की अवधि	:	हरे भुट्टे 70 से 75 दिनों में तोड़ने लायक
	पौधों की ऊंचाई	:	205–215 सेंमी.
	उपज	:	हरे भुट्टों की उपज 80 से 100 कुण्टल प्रति हैक्टर हरा चारा 250–275 कुण्टल प्रति हैक्टर
	विशेष	:	हरे भुट्टे देरी से सेवन करने पर शर्करा प्रतिशत में कमी नहीं होती।
	उपयुक्त क्षेत्र	:	असिंचित एवं सिंचित दोनों क्षेत्रों हेतु उपयुक्त

वर्ष में कम से कम एक बार मिट्टी की जाँच अवश्य करावें। जाँच हेतु 10–15 सेंमी. गहराई तक खेत के विभिन्न हिस्सों से मिट्टी के नमूने लेवें। नमूनों की मिट्टी को मिलाकर छाने एवं चार भागों में बाँट लेवें और तीन भागों को फेंक दें और अन्त में 500 ग्राम तक का नमूना प्लास्टिक की थैली में लें। मिट्टी की उचित जाँच कराएं एवं सिफारिश के आधार पर उर्वरक इत्यादि प्रयोग करें। मिट्टी के नमूने सिंचाई की नालियों, खाद के ढ़ेरों के आसपास, तत्काल उर्वरक डाले गये क्षेत्र एवं खेत की मेड़ों से नहीं लेना चाहिए।

बीज उपचारः संकर बीज उचित कवकनाशकों से उपचारित होता है। अतः अतिरिक्त उपचार की ज़रूरत नहीं होती है। संकुल किस्मों के अनुपचारित बीजों को रोग एवं कीट प्रबंधन में सुझाए कवकनाशी एवं कीटनाशी से उपचारित करें। इसके अतिरिक्त बीजों को जीवाणु खाद से एजोटोबेक्टर एवं पी.एस.बी. से उपचारित करें। एजोटोबेक्टर जीवाणु हवा में मौजूद नत्रजन को पौधों को उपलब्ध कराने में सहायक होते हैं। भूमि में दिया गया या उपलब्ध फॉस्फोरस पौधों को पूरी तरह से उपलग्ध नहीं हो पाता है। इसके लिए फॉस्फोरस घोलक बैक्टीरिया (पी.एस.बी) का उपयोग किया जाता है। 250–300 ग्राम गुड 1.5 लीटर पानी में घोलकर ठण्डा करें एवं 600 ग्राम दोनों जीवाणु कल्चर अलग से घोल में मिलावें। घोल को बीजों पर डाल कर हाथ से मसलें एवं छाया में सुखा कर 12 घंटे के अन्दर बुवाई करें।

बीज दर, पौध ज्यामिती एवं बुवाईः मीठी मक्का की किस्मों में शर्करा प्रतिशत अधिक होने से इसका दाना सिकुड़ा एवं हल्का होता है। इसी कारण इसकी बीज दर 6–8 कि.ग्रा./हैक्टर रखें। इसकी बुवाई कतार से कतार की दूरी 60 सेंमी. एवं पौधे से पौधे की दूरी 20 सेंमी. रखते हुए करें। मक्का की बुवाई 15 जून के पश्चात् वर्षा आते ही कर देनी चाहिए। प्रथम वर्षा 40–50 मि.मी. से कम हो तो बुवाई नहीं करनी चाहिए अन्यथा जून माह की तेज गर्मी से तपी भूमि में बनी वाष्प से बीज खराब हो जाते हैं एवं उनका अंकुरण नहीं हो पाता है। मीठी मक्का की नियत बीज दर प्रयोग करें, एवं अतिरिक्त पौधों को 15 दिनों तक निकाल लें।

खरपतवार नियंत्रण एवं निराई–गुडाईः मीठी मक्का को प्रथम 40–45 दिनों तक खरपतवार मुक्त रखना ज़रूरी है। खरीफ में मुख्य रूप से फसल को सामा घास, दूब, करजना, साटा, बोकना, काँटेदार चौलाई, लटजीरा, काँटी, गाजर घास, हिरणखुरी एवं मौथा नुकसान पहुँचाते हैं। इनके प्रभावी नियंत्रण हेतु 0.5 कि.ग्रा. एट्राजिन + 1.5 कि.ग्रा. एलाक्लोर को 600 लीटर पानी में घोलकर अंकुरण पूर्व छिड़काव करें। 25 से 30 दिनों की अवस्था पर एक निराई–गुड़ाई करें। इससे निंदानाशी से बचे खरपतवार नष्ट हो जाते हैं, भूमि में वायु संचार बढ़ता है, नमी जड़ों के पास संचयित रहती है एवं पौधों की जड़ों का विकास अच्छा होता है। मक्का के घुटनों तक की अवस्था से पूर्व कुलफा लगाकर या कुदाली से पौधों के पास मिट्टी चढ़ावें। इससे पकने पर फसल आड़ी नहीं गिरती है।

अंतः शस्यावर्तनः मीठी मक्का के साथ उड़द, मूंग, ग्वार या सोयाबीन का अंतः शस्यावर्तन करें। मक्का की दो कतारों के बाद उड़द, मूंग, ग्वार या सोयाबीन की दो कतारों की बुवाई 30 सेंमी. की दूरी रखते हुए करें।

पौषक तत्व प्रबंधन : मीठी मक्का में नत्रजन, फॉस्फोरस एवं जस्ते की जरूरत होती है। मक्का की खेती वाले क्षेत्रों में भूमि में पोटाश की पर्याप्त मात्रा होने से इसकी जरूरत नहीं होती है। 90 कि.ग्रा. नत्रजन + 40 कि.ग्रा. फॉस्फोरस + 25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट/हैक्टर प्रयोग करें। सम्पूर्ण फॉस्फोरस एवं जिंक सल्फेट को बुवाई के समय दें जबकि नत्रजन फसल की आवश्यकतानुसार विभिन्न तीन चरणों में प्रथम एक तिहाई बुवाई के समय, एक तिहाई घुटनों तक की अवस्था पर तथा एक तिहाई मांजरे आने पर दें। इसके अलावा वर्ष में बुवाई से पूर्व 10–12 टन/हैक्टर सड़ी गोबर की खाद या 3 से 4 टन/हैक्टर वर्मीकम्पोस्ट खेत में डालें।

सिंचाईः भूमि में उचित नमी होने पर बुवाई करें। एक बार उगने के पश्चात् यदि प्रथम 15–20 दिनों तक का सूखा भी आ जाए तो सिंचाई नहीं करें। इस समय मक्का में सूखा आने से जड़ों में वृद्धि आगे फसल की बढ़वार अच्छी होती है। घुटनों तक की अवस्था एवं मांजरे निकलने के वक्त सूखा होने पर किसान सिंचाई अवश्य करें। देर से पकने वाली किस्मों में अगर वर्षा जल्दी समाप्त हो जाए तो मांजरे निकलने एवं परिपक्वता की अवस्था पर सिंचाई अवश्य करें। ग्रीष्मकालीन एवं शरदकालीन फसलों में आवश्यकतानुसार सिंचाई करे। अगर ड्रिप पद्धति की सुविधा हो तो इसका प्रयोग शरद एवं ग्रीष्मकालीन फसलों में कर मीठी मक्का की खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है।

फसल कटाई: आम हरे भूट्टों की तरह जब मीठी मक्का के दाने दुधिया अवस्था में हों तब उन्हें तोड़ लेना चाहिए एवं खाने में प्रयोग करें। इसके भूट्टों को सेक कर, नमक के पानी में उबाल कर खा सकते हैं। हरे दानों का जूस जाजरियों, सूप, सब्जी, हलवा आदि बना कर सेवन करे। हरे भूट्टों की तुड़ाई के तुरन्त पश्चात् फसल को हरे चारे के लिए काटे एवं जानवरों को खिलाने में प्रयोग करें।

भण्डारण: यदि मीठी मक्का के भूट्टे एक साथ परिपक्व हो जाए तो उन्हें उचित अवस्था पर तोड़कर शीत संग्रहण केन्द्रों पर भण्डारण किया जा सकता है। इस तरह के भण्डारण से इनकी गुणवत्ता एवं मिठास पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पडता है। अगर भण्डारण की उचित अवस्था न हो तो फसल की बुवाई विभिन्न चरणों में करें। इससे हरे भूट्टों की तुड़ाई एवं हरे चारे की कटाई एक साथ नहीं आयेगी।

प्रमुख कीट एवं प्रबंधन: मीठी मक्का की फसल पर बुवाई से फसल की कटाई तक कई प्रकार के कीटों का प्रकोप होता है, जो मीठी मक्का उगाने वाले किसानों को न केवल आर्थिक नुकसान पहुँचाते हैं बल्कि मीठी मक्का की गुणवत्ता को भी कम करते हैं। फसल के प्रमुख कीट एवं इनका उपचार निम्न है।

दीमक: दीमक फसल को बुवाई से कटाई तक नुकसान पहुँचाती है। खेत में सूखा आने की अवस्था में इसका प्रकोप ज्यादा होता है। दीमक रेतीली मिट्टी में ज्यादा लगती है।

तना भेदक: मक्का का प्रमुख कीट है। इसका प्रकोप आरम्भ में होता है। पत्तियों पर सर्पिलाकार छेद बन जाते हैं एवं मृत केन्द्रक बन जाता है जिससे पौधे की बढ़वार प्रायः रुक जाती है एवं कल्लों का फूटान प्रारम्भ हो जाता है ।

सफेद लट: सफेद लट जड़ों को नष्ट करती है। जिससे पौधा सूख जाता है।

मोयला : मोयला का प्रकोप मांजरे निकलने के समय होता है। इसके अधिक प्रकोप से परागकण विसर्जन सामान्य नहीं हो पाता है और भूट्टों में दाना कम होने की संभावना बनी रहती है।

फड़का: फड़का पत्तियों को किनारे से खाता है। इसका प्रकोप अगस्त से सितम्बर माह में होता है।

भूट्टा भेदक लट: इस कीट का प्रकोप मुख्यतः भूट्टों में पाया जाता है।

पत्ती मोड़क कीट: फसल की प्रारम्भिक अवस्था पर पत्ती मोड़क कीट फसल की पत्तियों को ऊपर से बांध देता है। इसलिए पौधे की नई पत्तियाँ बाहर नहीं निकल पाती एवं पौधा तिरछा वृद्धि करता है।

सूंडी, भृंग: सफेद रंग की सूंडी, भृंग कीट भी पत्तियों को किनारे से खाता है।

प्रबंधन :

- गहरी जुताई करें, कचरे को नष्ट करें एवं खेत को सूखने न दें।
- बीजों को क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. 4 मि.ली./कि.ग्रा. की दर से उपचारित कर बोयें।
- खड़ी फसल में दीमक का प्रकोप होने से इसी कीटनाशी को 1.25 लीटर/हैक्टर की दर से सिचाई के साथ दें।
- सड़ी हुई गोबर की खाद का प्रयोग करें।
- कचरे को इकट्ठा कर जलाएं एवं नष्ट करें।
- 8–10 ट्राइकोकार्ड/हैक्टर पत्तियों की निचली सतह पर अंकुरण के 7–14 दिनों के अन्तराल पर पिन से चिपकाएं
- खेत की अन्तिम जुताई के समय 25 कि.ग्रा./हैक्टर मिथाईल पैराथियान 2 प्रतिशत चूर्ण का भुरकाव करें।
- पत्तियों के पर्णगुच्छ में कार्बोफ्यूरान के दाने डालें।
- सफेद लट का ज्यादा प्रकोप होने पर फोरेट 10 जी. 10–12 कि.ग्रा./हैक्टर की दर से बुवाई के समय खेत में डालें।
- मोयला प्रबंधन मिथाईल डिमेटोन 25 ई.सी. एक लीटर 500–600 लीटर अन्यथा इमिडाक्लोप्रिड 10 ई.सी. 0.7 लीटर/हैक्टर की दर से पानी में घोलकर छिडकाव करें।
- फड़का का नियंत्रण आसपास के किसान मिलकर एक साथ करें तभी प्रभावी होगा। साइपरमेथ्रिन 10 ई.सी. 0.7 लीटर/हैक्टर की दर से छिडकाव करें। खेतों में प्रकाश पाश का इस्तेमाल करें एवं इकट्ठा हुए फड़कों को नश्ट करें। खेत की पालियों पर खरपतवार नष्ट करें। पालियों पर मिथाईल पैराथियान 2 प्रतिशत चूर्ण का भुरकाव करें। जून माह में गहरी जुताई करें।

प्रमुख रोग एवं प्रबंधन

मीठी मक्का की फसल पर बुवाई से फसल की कटाई तक कई प्रकार के रोगों का प्रकोप होता है, जो मक्का उगाने वाले किसानों को न केवल आर्थिक नुकसान पहुँचाते हैं बल्कि मीठी मक्का की गुणवत्ता को भी प्रभावित करते हैं। इनमें प्रमुख रोग, इनकी पहचान एवं नियंत्रण निम्न प्रकार हैः

राजस्थान मृदुरोमिल आसिता रोगः यह रोग फसल की पौध अवस्था से प्रारम्भ हो जाता है। इसमें पत्तियों का पीला पड़ना एवं रोग की अधिक उग्रता में पौधा 35–40 दिन बाद सूखना प्रारम्भ हो जाता है तथा पौधा मर जाता है। मेटालक्सिल (63:) 4 ग्राम + इप्कोनाजोल 3 मि.ली./कि.ग्रा. बीज की दर से बीजों को उपचारित कर बुवाई करें।

तना विगलन रोगः रोगग्रसित पौधे की पत्तियां नीचे से सूखना प्रारम्भ होती है। पत्तियों का गहरा हरा रंग पीला पड़ने लगता है। नीचे वाला तना सिकुड़ना प्रारम्भ हो जाता है तथा कमजोर हो जाता है। भुट्टा नीचे की ओर झुक जाता है तथा भूट्टों में दाने कम बनते हैं या उग्र अवस्था में बनते ही नहीं। तने के अन्दर का भाग सिकुड़ जाता है। बीजों को 4 ग्राम बाविस्टिन एवं 20 ग्राम ट्राईकोडरमा विरिडी पाउडर से उपचारित कर बोयें।

कर्वुलेरिया पत्ती धब्बा रोग : रोगग्रस्त पौधों की पत्तियों पर छोटे–छोटे गोल सफेद–भूरे धब्बे छल्लेनुमा आकार के बनते हैं एवं परिणामस्वरूप पत्तियाँ सूखने लगती है। बीजों को थाइरम या इण्डोफिल एम.जेड. 3 ग्राम/कि.ग्रा. या साफ 4 ग्राम/कि.ग्रा. की दर से उपचारित कर बुवाई करें। फफूंदनाशी साफ 0.2 प्रतिशत या मेन्कोजेब 0.2 प्रतिशत का 35 एवं 55 दिन पश्चात् सायंकाल में छिड़काव करें।

धारीदार पर्ण एवं पर्णच्छद अंगमारी रोगः इस रोग के मुख्य लक्षण पत्ती के तने से जुड़ाव स्थान के समीप धारीदार बड़े आकार के धब्बे बनने लगते हैं एवं धीरे–धीरे पूरी पत्ती एवं तने तक फैल जाते हैं एवं काले रंग के स्क्लेरोशिया रोगग्रस्त पत्तियों एवं भुट्टे पर जम जाते हैं। देशी खाद के साथ 2.5 कुण्टल/हैक्टर की दर से नीम की खली का उपयोग करें। बीजों को जैव नियंत्रक ट्राइकोडर्मा विरिडी (टी वी–3) 20 ग्राम/कि.ग्रा. + स्यूडोमोनास फ्लोरिसेन्स की पीट युक्त उत्पाद से 16 ग्राम/कि.ग्रा. की दर से उपचारित कर बुवाई करें।

मेडिस पत्ती झुलसा रोग : यह रोग बुवाई के 30 दिन पश्चात् उग्र रूप धारण कर लेता है। पत्तियों पर आयताकार बड़े–बड़े धब्बे बनते हैं और पूरी पत्तियाँ झुलसी हुई प्रतीत होती है। इसकी रोकथाम के लिए 25 दिन की मक्का पर साफ फफूंदनाशी का 2 ग्राम प्रति लीटर पानी के हिसाब से छिड़काव करें और इसे 45 दिन की फसल होने पर पुनः दोहराएं।

सूत्रकृमि रोग एवं प्रबंधन

रोगग्रस्त फसल का चप्पेदार व कमजोर रह जाना, पत्तियों का पीला पड़ना, पौधों का आसानी से उखड़ जाना, मांजरे व भुट्टों का छोटा रह जाना, जड़ों पर गुच्छेदार व भूरे रंग की गांठों का होना सूत्रकृमि रोग के प्रमुख लक्षण हैं। सूत्रकृमियों के प्रबंधन हेतु मीठी मक्का के बीजों को नीम, करंज, अरण्डी, सरसों, महुआ एवं रतनजोत के 10 प्रतिशत बीज गिरी के चूर्ण से उपचारित करने व साथ ही मृदा संसाधन के रूप में इनकी रवल एवं पत्ती पाउडर 2 से 5 कुण्टल/हैक्टर की दर से प्रयोग में लेना काफी लाभदायक पाया गया है

समाप्त

जब तक हम अपने आप से सुलह नहीं कर लेते
तब तक हम दुनिया से भी सुलह नहीं कर सकते।

गन्ने की फसल और सूखा तनाव – प्रभाव एवं बचाव हेतु तकनीकियाँ

पूजा[1], रविंदर कुमार[1], मेहर चंद[2], अश्वनी कुमार[3] एवं नीरज कुलश्रेष्ठ[1]
[1]भाकृअनुप–गन्ना प्रजनन संस्थान, क्षेत्रीय केन्द्र, करनाल (हरियाणा)
[2]चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, उचानी, करनाल (हरियाणा)
[3]भाकृअनुप–केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा)
E-mail : poojadhansu@gmail.com

गन्ना (सैकेरम प्रजाति के जटिल संकर) दुनिया की महत्वपूर्ण व्यवसायिक फसलों में से एक है। आधुनिक गन्ने की किस्में जटिल संकर होती है जो बड़े पैमाने पर सैकेरम ऑफिसिनेरम एल. (2एन=80) और जंगली प्रजाति सैकेरम स्पॉन्टेनियम एल. (2एन=40.128) के संकरण से उत्पन्न हुई है। गन्ना एक बहुत ही लाभदायक फसल है। विश्व के कुल चीनी उत्पादन में लगभग 80 प्रतिशत आपूर्ति गन्ने से निर्मित चीनी से होती है। गन्ना एक सी4 पौधा है, तथा प्रकाश ऊर्जा को सबसे अधिक दक्षता से जैव ऊर्जा में परिवर्तित करने वाली फसल है। लंबी अवधि की फसल होने व उच्च बायोमास का उत्पादन करने के कारण यह अधिक मात्रा में पानी, पोषक तत्वों, कार्बन डाईऑक्साईड और सौर ऊर्जा का उपयोग करता है। राष्ट्रीय सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में गन्ने का महत्वपूर्ण योगदान (1.1 प्रतिशत) है जोकि इस बात को ध्यान में रखते हुए महत्वपूर्ण है कि गन्ना केवल सकल फसली क्षेत्र के मात्र 2.57 प्रतिशत भाग पर उगाई जाती है। देश में लगभग 6 लाख किसान गन्ने की खेती करते हैं और बड़ी संख्या में ग्रामीण क्षेत्रों के कृषि मजदूर गन्ने की खेती से रोजगार एवं आय प्राप्त करते हैं। भारत में लगभग 7.5 प्रतिशत ग्रामीण आबादी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अपनी आजीविका हेतु चीनी उधोग पर निर्भर है।

विश्व में ब्राजील के बाद भारत चीनी का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक देश है। वर्ष 2014–15 में भारत का विश्व चीनी उत्पादन में लगभग 17 प्रतिशत योगदान था। आर्थिक रूप से, गन्ना चीनी के अतिरिक्त संबंधित उद्योगों जैसे एल्कोहल, एसिटिक अम्ल, ब्यूटिनोल, पेपर, प्लाईवुड, औद्योगिक एंजाइम, पशु चारा आदि के उत्पादन हेतु एक महत्वपूर्ण औद्योगिक कच्चा पदार्थ है। भारत में गन्ना न केवल चीनी उत्पादन के लिए उगाया जाता है, बल्कि इसकी उच्च बायोमास उत्पादन क्षमता के कारण इसका प्रयोग जैव–ऊर्जा फसल के रूप में भी बढ़ रहा है। गन्ना एक अनूठी फसल है जिसमें शर्करा जमा करने की क्षमता डंठल के 50 प्रतिशत सूखे वजन तक पहुंच सकती है। खाद्य एवं कृषि संगठन (एफएओ) के अनुसार वर्ष 2011–12 में पूरे विश्व में लगभग 18.6 मिलियन हैक्टर क्षेत्र में गन्ने की खेती की गई और 2165.2 मिलियन टन कुल गन्ना उत्पादन हुआ। इस अवधि में गन्ने की औसत उत्पादकता 68.4 टन/हैक्टर थी और 90 से अधिक देशों में चीनी का कुल उत्पादन 175.7 मिलियन टन था। भारत में लगभग 5.14 मिलियन हैक्टर क्षेत्र में गन्ने की खेती की जा रही है, जिसकी औसत उत्पादकता 69.9 टन/हैक्टर और चीनी उत्पादन 28.31 मिलियन टन है। देश में चीनी की वर्तमान आवश्यकता 23.0 मिलियन टन है, जोकि दुनिया में सबसे ज्यादा है। अनुमान है कि 2030 तक भारत को 36.0 मिलियन टन चीनी की आवश्यकता होगी। इस लक्ष्य को हासिल करने के लिए, गन्ने का उत्पादन मौजूदा 350 मिलियन टन से लगभग 500 मिलियन टन करने का प्रयास करना होगा। इसके लिए यह आवश्यक है कि सालाना 7–8 मिलियन टन का उत्पादन बढ़े। गन्ने की खेती के अंतर्गत आने वाले क्षेत्र में विस्तार संभव नहीं है इसलिए उत्पादन को बढ़ाने हेतु गन्ने की उत्पादकता को बढ़ाना (110 टन/हैक्टर) और व्यवसायिक प्रजातियों में चीनी की औसत मात्रा (10.75 प्रतिशत) में वृद्धि ही प्रभावी विकल्प प्रतीत होते हैं।

भारत में गन्ने की खेती बड़े पैमाने पर उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्र में की जाती है। उष्णकटिबंधीय क्षेत्र में आंध्र प्रदेश, छत्तीसगढ़, गोवा, गुजरात, कर्नाटक, केरल, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, ओडिशा, पुडुचेरी और तमिलनाडु राज्य शामिल हैं जबकि उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्र में बिहार, झारखंड, हरियाणा, पश्चिम बंगाल, पंजाब, राजस्थान, उत्तर प्रदेश और उत्तराखंड प्रदेश शामिल हैं। उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में जलवायु विभिनन्ता के कारण गन्ने की वृद्धि, विकास और गुणवत्ता में बहुत अंतर आता है। उपोष्ण क्षेत्रों की तुलना में गन्ने की उत्पादकता उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में अधिक है। गन्ने की उत्पादकता, उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में सबसे अधिक तमिलनाडु

(104.6 टन/हैक्टर), उसके बाद कर्नाटक (89.3 टन/हैक्टर) तथा उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में सबसे अधिक हरियाणा (72.5 टन/हैक्टर), उसके बाद पंजाब (69.45 टन/हैक्टर) और उत्तर प्रदेश (66 टन/हैक्टर) है (अर्थशास्त्र व सांख्यिकी निदेशालय, कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, 2015–16)। उपोष्ण क्षेत्रों में कम उत्पादकता का कारण फसल विकास की अवधि के दौरान प्रतिकूल जलवायु होती है।

गन्ने की फसल पर सूखा तनाव का प्रभाव

जलवायु और मृदा गुण गन्ने की फसल की वृद्धि दर को प्रभावित करते हैं। अजैविक तनाव जैसे सूखा, लवणता, उच्च तापमान और निम्न तापमान कम फसल विकास और निम्न उत्पादकता के प्राथमिक कारण है। इनमें से सूखा तनाव दुनिया भर में गन्ने के उत्पादन को सीमित करने वाले सबसे महत्वपूर्ण पर्यावरणीय तनावों में से एक है क्योंकि गन्ने का मुख्य घटक पानी है। एक टन गन्ना उत्पादन के लिए 200 से 250 टन पानी की आवश्यकता होती है। वर्षा सिंचित कृषि पारिस्थितिकी भारत के कुल खेती वाले क्षेत्र का लगभग 55 प्रतिशत हिस्सा है और देश में व्यापक रूप से वितरित है। देश में कुल खाद्य उत्पादन में से लगभग 44 प्रतिशत वर्षा सिंचित खेती से प्राप्त होती है जिससे लगभग 40 प्रतिशत जनसंख्या का भरण पोषण होता है। हालांकि, दुनिया के कई हिस्सों में पानी पहले से ही एक दुर्लभ वस्तु है और जलवायु परिवर्तन से भविष्य में स्थिति और खराब हो सकती है। वर्षा की मात्रा और आवृत्ति में कमी के अलावा, तापमान में वृद्धि, वाष्पन–विकास के माध्यम से जल हानि और बढ़ सकती है। फसल विकास की जरूरतों को पूरा करने के लिए जरूरी पानी से भूजल कम होने की उम्मीद है। लगभग 2.97 लाख हैक्टर गन्ने का क्षेत्र भारत में सूखा से ग्रस्त है जोकि विकास के एक या अन्य चरण में फसल को प्रभावित करते हैं।

उपोष्ण क्षेत्रों में गन्ने की फसल के प्रारंभिक चरण (अप्रैल से जून) के दौरान उच्च तापमान और शुष्क हवाओं के साथ वाष्पीकरण की उच्च दर से पानी की कमी की समस्या बहुत उत्पन्न होती है। पानी की आवश्यकता को पूरा करने के लिए पूर्व मानसून अवधि (अप्रैल से जून) के दौरान अधिक सिंचाई करनी पड़ती है। हरियाणा में हर साल गन्ने की फसल में 1200–1400 मिमी पानी की आवश्यकता होती है और राज्य में उच्चतम औसत वार्षिक वर्षा केवल 700 मिमी है। इससे यह स्पष्ट है कि शेष पानी की आवश्यकता सिंचाई द्वारा पूरी की जाती है जिससे उत्पादन लागत में वृद्धि होती है। गन्ने की खेती में सीमित सिंचाई सुविधाओं के कारण हरियाणा के बड़े क्षेत्रों में सिंचाई के जरिए पानी देना कठिन है। वर्ष 2015 के दौरान हरियाणा प्रदेश में गन्ने की खेती 1.01 लाख हैक्टर क्षेत्र में की गई और औसत उत्पादन 75.7 टन प्रति हैक्टर रहा जबकि गन्ने में चीनी की औसत मात्रा 9.94 प्रतिशत प्राप्त हुई। वार्षिक वर्षा और इसका वितरण गन्ना फसल की सिंचाई आवश्यकता को प्रभावित करने में प्रमुख भूमिका निभाते हैं। कल्ले निकलने से लेकर, पोर का बढ़ना तथा मुख्य विकास अवधि, ऐसे चरण हैं जहाँ फसल को सिंचाई के जरिये पर्याप्त जल उपलब्ध होना चाहिए। अगर बारिश फसल की जल माँग को पूरा नहीं करती है तो सिंचाई अति आवश्यक होती है। सामान्य कृत्रिम चरण (रोपण के 40–120 दिन) जल की माँग की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण अवधि है। इस चरण के दौरान किसी भी स्तर पर पानी की कमी से गन्ने के विकास और उच्च बायोमास संचय पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

गन्ने में चार अलग–अलग विकास चरण (अंकुरण, टिलरिंग, उच्च विकास स्थिति (ग्रैंड ग्रोथ स्टेज, और परिपक्वता) देखे जाते हैं। टिलरिंग और उच्च विकास स्थिति (ग्रैंड ग्रोथ स्टेज), गन्ने के प्रारम्भिक चरण के रूप में जाने जाते हैं जिसमें पानी की बहुत अधिक आवश्यकता होती है। प्रारंभिक चरण (टिलरिंग) के दौरान जल तनाव का विकास और उपज पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इसका मुख्य कारण यह है कि इस चरण के दौरान 70–80 प्रतिशत गन्ना उपज का उत्पादन होता है। सूखे तनाव की स्थिति में गन्ने पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है जिसमें कल्लों की उच्च मृत्यु दर, कम विकास दर, ऊँचाई और वजन घटना, गन्ने की उपज, रस की मात्रा तथा गुणों में कमी, पत्तियों में आयन संचय, प्रत्यावर्तन दर, रंध्र प्रवाह, रंध्र के आकार, क्लोरोफिल में कमी, जड़ क्रियाओं और मिट्टी में पोषक तत्वों की आपूर्ति या पौधों में पोषक तत्वों के संचय आदि प्रभावित होते हैं। यदि ये सभी मापदंड एक साथ प्रभावित हो तो गन्ना विकास या गन्ना उपज पर बहुत दुष्प्रभाव पड़ता है। इसके अलावा, विभिन्न प्रक्रियाओं में शामिल विशिष्ट एंजाइमों की गतिविधियां भी कम हो जाती है। सूखा तनाव पौधों के शारीरिक और जैव रासायनिक तंत्र को भी बाधित करता है जोकि अंततः गन्ना विकास, रस की गुणवत्ता और उपज को प्रभावित करता है। प्रतिकूल पर्यावरणीय परिस्थितियों से निपटने के लिए पौधों ने विभिन्न अनुकूलन रणनीतियों का विकास किया है। इसमें अकार्बनिक आयनों की अधिक सांद्रता या कम आणविक वजन वाले कार्बनिक विलेय,

प्रसरणी अनुकूल ओस्मोलाइट्स, और एंटीऑक्सीडेंट एंजाइमों का संश्लेषण शामिल है।

उच्च जल मांग वाली फसल होने के कारण गन्ने के उत्पादन को बनाए रखने के लिए सूखा सहनशील किस्मों को विकसित करने की आवश्यकता है। गन्ना क्षेत्र, गन्ना उत्पादन, चीनी उत्पादन और चीनी मिलों की संख्या के विस्तार में उच्च उपज और उच्च शर्करा वाली किस्मों ने एक प्रमुख भूमिका निभाई है। उच्च उपज देने वाली किस्मों के कारण औसत उत्पादकता में 50–75 प्रतिशत वृद्धि हुई है। गन्ना उत्पादकता बढ़ाने के लिए प्रजाति विकास सबसे सस्ती तकनीक है। हालांकि गन्ने की उपज और गुणवत्ता कई मात्रात्मक विरासत वर्णों पर निर्भर है, जो स्वयं भी पर्यावरण से प्रभावित होते हैं। इसलिए, प्रारंभिक चरण में सूखा तनाव, सूखा–सहिष्णु प्रजातियों की पहचान करने में उपयोगी है, क्योंकि किस्मों ने अलग–अलग मिट्टी और कृषि–जलवायु परिस्थितियों में अलग–अलग व्यवहार किया है जोकि सिंचित और असिंचित स्थितियों में पूरी तरह से अलग है। पानी के तनाव की स्थितियों में, गन्ने की विभिन्न किस्मों के विकास के व्यवहार और पैदावार क्षमता में भिन्नता होती है। जल तनाव के प्रतिकूल प्रभावों से निपटने हेतु सहिष्णु प्रजातियों को विकसित करना आवश्यक है। पौधों की वृद्धि और विकास के लिए आवश्यक कई शारीरिक और जैव रासायनिक प्रक्रियाएं पानी के घाटे की स्थिति से प्रभावित है और आणविक, कोशिकीय और पूरे पौधे के स्तरों पर पौधों के सूखा तनाव के खिलाफ विभिन्न रक्षा तंत्र का प्रदर्शन करते हैं।

गन्ने में सूखा तनाव से बचाव हेतु तकनीकियां

सूखा तनाव से गन्ने के विकास, शर्करा संचय तथा शर्करा की मात्रा पर पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभाव को निम्न कृषि तकनीकों से कम किया जा सकता है (तालिका 1):

- संतृप्त चूने के घोल में 2 घंटे भिगोने के बाद गन्ना सेट्स लगाने चाहिए। यह तकनीक सूखे के प्रति रोधकता में वृद्धि

तालिका 1: विभिन्न मानसून की स्थिति के तहत प्रस्तावित आकस्मिक उपाय

मानसून	अनुमोदित प्रजातियों के लिए समग्र सिफारिशें
मानसून की शुरुआत में देरी	
2 सप्ताह की देरी	हर दूसरी हल रेखा में पानी चलाएं समय समय पर फसल की निराई करें तथा जंगली घास न होने दें पूर्व–मानसून (8–10 दिनों) के अनुसार सिंचाई को जारी रखें और इसके बाद अंतर–खेती करें सफेद मक्खी, फीता घुन और जड़ भेदक से फसल का बचाव करें
3.5 सप्ताह की देरी	ऊपर दी गई सावधानियों के अनुसार
6.8 सप्ताह की देरी	दस दिन के अंतराल पर संरक्षी सिंचाई करें सफेद मक्खी, फीता घुन और जड़ भेदक से फसल का बचाव करें लौह तत्व की कमी हो सकती है, इस दौरान 1 प्रतिशत फेरस सलफेट, 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट तथा 2 प्रतिशत यूरिया का छिड़काव करें
मानसून की शुरुआत के बाद लम्बे समय तक सूखा पड़ने की स्थिति में	
2.5 सप्ताह की देरी	सामान्य सिफारिशें
3.5 सप्ताह की देरी	दस से पंद्रह दिन के अंतराल पर सिंचाई करें हर दूसरी हल रेखा में पानी चलाएं सफेद मक्खी, फीता घुन और जड़ भेदक से फसल का बचाव करें लौह तत्व की कमी हो सकती है, इस दौरान 1 प्रतिशत फेरस सल्फेट, 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट तथा 2 प्रतिशत यूरिया का छिड़काव करें
मानसून की जल्द वापसी की स्थिति में	15 से 20 दिन के अंतराल पर सिंचाई करें सफेद मक्खी, फीता घुन और जड़ भेदक से फसल का बचाव करें भारी मानसून के कारण बाढ़ की स्थिति में
प्रारंभिक चरण में	ज्यादा समय तक पानी खड़ा न होने दें पानी निकलने के बाद 25 किलोग्राम/एकड़ यूरिया डालें और यदि संभव हो तो 3 प्रतिशत यूरिया का छिड़काव करें चूसने वाले कीट और डंठल और तना भेदक को नियंत्रित करें

तालिका 2: गन्ने की सूखा सहिष्णु किस्में

क्र.स.	प्रजाति का नाम	जारी करने का वर्ष	पकने का समय	उत्पादकता (टन/हैक्टर)	चीनी की मात्रा	रोगों और कीटों के प्रति रोधकता	अजैविक तनावों से प्रतिक्रिया	खेती के अनुशंसित क्षेत्र
1	को. 8371 (भीमा)	2000	मध्यम–देरी	117.7	18.6	स्मट कवक के लिए प्रतिरोधी	जल भराव, सूखा और लवण सहिष्णु	महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, गुजरात, कर्नाटक, आंतरिक आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, केरल
2	को. 86032 (नयन)	2000	मध्यम–देरी	102.0	20.1	लाल सड़ांध और स्मट कवक के लिए प्रतिरोधी	सूखा सहिष्णु	गुजरात, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, कर्नाटक, आंतरिक आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, केरल
3	को. 87025 (कल्याणी)	2000	मध्यम–देरी	98.2	18.3	स्मट कवक के लिए प्रतिरोधी	ए लाल सड़ांध के लिए अति संवेदनशील	सूखा सहिष्णु गुजरात, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, कर्नाटक, आंतरिक आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, केरल
4	को. 87044 (उत्तरा)	2000	मध्यम–देरी	101.0	18.3	स्मट कवक के लिए मध्यम प्रतिरोधी	सूखा सहिष्णु	गुजरात, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, कर्नाटक, आंतरिक आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, केरल
5	को. 91010 (धनुष)	2000	मध्यम–देरी	116.0	19.1	स्मट कवक के लिए प्रतिरोधी	सूखा सहिष्णु	पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल और पूर्वोत्तर में उत्तरी मध्य और पूर्वी क्षेत्र
6	को.89029 (गंडक)	2001	जल्दी	70.6	16.3	लाल सड़ांध और स्मट कवक के लिए मध्यम प्रतिरोधी	जल भराव और सूखा सहिष्णु	गुजरात, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, कर्नाटक, आंतरिक आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, केरल
7	को. 94008 (श्यामा)	2004	जल्दी	119.8	18.3	लाल सड़ांध और स्मट कवक के लिए प्रतिरोधी	सूखा और लवण सहिष्णु	गुजरात, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, कर्नाटक, आंतरिक आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, केरल
8	को. 98014 (करण–1)	2007	जल्दी	76.3	17.6	लाल सड़ांध और शिथिलन रोग के लिए प्रतिरोधी	सूखा सहिष्णु	पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, उत्तराखंड, पश्चिमी और मध्य उत्तर प्रदेश
9	को. 99004 (दामोदर)	2007	मध्यम–देरी	115.5	19.5	लाल सड़ांध के लिए मध्यम प्रतिरोधी	सूखा और लवण सहिष्णु	गुजरात, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, कर्नाटक, आंतरिक आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, केरल
10	को. 94012	2009	मध्यम–देरी	92.8	19.8	लाल सड़ांध के लिए अतिसंवेदनशील	सूखा सहिष्णु	महाराष्ट्र, कर्नाटक
11	को. 2001–13 (सुलभ)	2009	मध्यम–देरी	108.6	19.0	लाल सड़ांध और स्मट कवक के लिए मध्यम प्रतिरोधी	सूखा सहिष्णु	गुजरात, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, कर्नाटक, आंतरिक आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, केरल
12	को. 2001–15	2009	मध्यम–देरी	108.2	18.9	लाल सड़ांध के लिए मध्यम प्रतिरोधी	सूखा सहिष्णु	गुजरात, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, कर्नाटक, आंतरिक आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, केरल
13	को. 0118 (करण–2)	2009	जल्दी	78.2	18.6	लाल सड़ांध के लिए प्रतिरोधी	सूखा और जल भराव सहिष्णु	पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, उत्तराखंड, पश्चिमी और मध्य उत्तर प्रदेश
14	को. 0238 (करण–4)	2009	जल्दी	81.1	18.0	लाल सड़ांध के लिए प्रतिरोधी	कम तापमान, सूखा और जल भराव सहिष्णु	पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, उत्तराखंड, पश्चिमी और मध्य उत्तर प्रदेश

15	को. 0239 (करण–6)	2010	जल्दी	79.2	18.6	लाल सड़ांध के लिए मध्यम प्रतिरोधी	सूखा और जल भराव सहिष्णु	पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, उत्तराखंड, पश्चिमी और मध्य उत्तर प्रदेश
16	को. 0218	2010	मध्यम–देरी	104.5	20.6	लाल सड़ांध और स्मट कवक के लिए प्रतिरोधी	सूखा सहिष्णु	गुजरात, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, कर्नाटक, आंतरिक आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, केरल
17	को. 0237	2012	जल्दी	71.3	18.8	लाल सड़ांध के लिए प्रतिरोधी	कम तापमान, सूखा और जल भराव सहिष्णु	पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, उत्तराखंड, पश्चिमी और मध्य उत्तर प्रदेश
18	को. 0403	2012	जल्दी	101.5	18.2	लाल सड़ांध और स्मट कवक के लिए प्रतिरोधी	सूखा सहिष्णु	गुजरात, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, कर्नाटक, आंतरिक आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, केरल
19	को. 06027	2013	मध्यम–देरी	110	19.3	लाल सड़ांध के लिए प्रतिरोधी	सूखा और लवण सहिष्णु	गुजरात, महाराष्ट्र, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, केरल

लाती है जिससे गन्ना उत्पादन में 7 से 8 प्रतिशत की बढ़ोतरी हो सकती है। यदि संतृप्त चूने का घोल अनुपलब्ध हो तो, गन्ना सेट्स को 24 घंटे पानी में भिगोकर लगाना चाहिए जिससे सूखा तनाव की स्थिति में अंकुरण में सुधार होता है।

- शीर्ष आधे भाग से अपरिपक्व या परिपक्व गन्ना सेट्स सूखे तनाव की स्थिति में सबसे अच्छी बीज सामग्री है।
- खेती के लिए सूखा सहिष्णु किस्मों का चयन करें (तालिका 2)।
- कार्बनिक खाद तथा उर्वरकों के संतुलित प्रयोग से सूखे तनाव के प्रतिकूल प्रभाव को कम करने में मदद मिलती है।
- जल प्रयोग दक्ष प्रजातियों की खेती करनी चाहिए।
- 2.5 प्रतिशत यूरिया के साथ 2.5 प्रतिशत पोटेशियम क्लोराइड या म्यूरेट ऑफ पोटाश का छिड़काव करें।

उष्ण कटिबंधीय भारत के लिए सूखा सहनशील प्रमुख गन्ना प्रजातियाँ

गन्ने की निम्न प्रजातियाँ को. 86032, को. 99004, को. 2001–13, को. 2001–15, को. 0403, को. 0212 व को. 09004 प्रायद्विपीय भारत के लिए सूखे के प्रति सहनशील पाई गई है। इस क्षेत्र में महाराष्ट्र का मराठवाडा क्षेत्र, तमिलनाडु व कर्नाटक के कुछ हिस्से अक्सर कम वर्षा होने के कारण सूखे की चपेट में आते है। उपरोक्त प्रजातियों की खेती तथा सूखी पत्तियों व अन्य कार्बनिक पदार्थों की मल्चिंग, ड्रिप सिंचाई विधि अपनाकर सूखे से वाले फसल नुकसान को कम किया जा सकता है।

उपोष्ण कटिबंधीय भारत के लिए सूखा सहनशील प्रमुख गन्ना प्रजातियाँ

को. 98014, को. 0238, को. 0239, गन्ना प्रजातियाँ हरियाणा, पंजाब, उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड राज्यों में सूखे के हालात को सहने की क्षमता रखती है।

समाप्त

इंसान जितना अपने मन को मना सकता है,
वह उतना ही खुश रह सकता है।

लवण सहिष्णुता में द्वितीयक चयापचयों (सेकण्डरी मेटाबोलाइट्स) की भूमिका

चारुलता, गुरप्रीत कौर, अनीता मान, अश्वनी कुमार, जोगेंद्र सिंह, अरविंद कुमार एवं सतीश कुमार सनवाल

भाकृअनुप–केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा)

E-mail : charusharmabiotech@gmail.com

निम्न गुणवत्ता जल के बढ़ते प्रयोग के कारण विश्व के सिंचित क्षेत्रों में लवण तनाव व्यवसायिक खेती के समक्ष एक बड़ी समस्या के रूप में उत्पन्न हुआ है। मृदा में लवणों की अधिकता से पौधों की बढ़वार और उत्पादकता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। लवणीय मृदाओं में पादप अनुकूलन व सहिष्णुता में जटिल क्रियात्मक चयापचय तथा आणविक प्रसार सम्मिलित होते हैं, जिनका विस्तृत अध्ययन लवण सहिष्णु प्रजातियों के विकास के लिए आवश्यक है। यद्यपि हाल ही में किये गए कुछ अध्ययनों से कोशिकीय, चयापचय तथा क्रियात्मक स्तरों पर लवण तनाव के अनुकूलन में होने वाली प्रतिक्रियाओं का ज्ञान प्राप्त हुआ है लेकिन अभी भी लवण सहिष्णुता हेतु उत्तरदायी विभिन्न क्रियाओं का गहन अध्ययन आवश्यक है। इस लेख के माध्यम से हम लवण तनाव तथा अनुकूलन की स्थिति में विभिन्न चयापचयी पदार्थों की भूमिका पर प्रकाश डालने का प्रयास कर रहे हैं। उच्च वर्गीय पौधों में इन चयापचयों को संचय करने की विशिष्ट क्षमता होती है। इन चयापचयों को प्राथमिक और द्वितीयक (माध्यमिक) श्रेणियों में वर्गीकृत किया जाता है। प्राथमिक चयापचय वो यौगिक हैं जिनका निर्माण प्रायः सभी पौधों में होता है और पादप वृद्धि और विकास में इनका महत्वपूर्ण योगदान होता है। शर्करा, प्रोटीन, नाभिकीय अम्ल और वसा पौधों में पाए जाने वाले मुख्य प्राथमिक चयापचय हैं। प्राथमिक चयापचयों के कार्य निम्नलिखित हैं:

- प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया में पौधे, ए. टी. पी. व एन. ए. डी. पी. एच. का उपयोग ऊर्जा के रूप में करते हैं और एमिनो अम्लों का निर्माण करते हैं।
- बीजों में प्रोटीन ऊर्जा भंडारण और पौधों के प्रारम्भिक विकास में पोषण के स्रोत के रूप में कार्य करती है। उदाहरणतः मक्का के बीज में जेईन नामक भंडारण प्रोटीन का उत्पादन होता है।
- द्वितीय अथवा माध्यमिक चयापचय वे यौगिक होते हैं जो पौधों की सामान्य वृद्धि व पादप कोशिकाओं के विकास के लिए आवश्यक नहीं होते हैं। द्वितीया चयापचयों के कुछ विशिष्ट उदाहरण, मॉर्फिन, कैफीन, निकोटीन, मेन्थॉल और रबर। द्वितीयक चयापचय रासायनिक चयापचयों से बनते हैं, तथा जो पौधों में अति सूक्ष्म मात्रा में पाए जाते हैं और सामान्य वृद्धि क्रियाओं में इनकी कोई विशिष्ट भूमिका नहीं होती है। कुछ विषैले यौगिक जो निकोटीन जैसे द्वितीय चयापचयों से उत्पन्न होते हैं, पौधों को जीवाणुओं और अन्य जैविक तनावों से बचाते हैं।
- पॉलिसेकेराइड मुख्य रूप से पौधों को कोशिकीय सहायता प्रदान करते हैं और पौधों के पुनःउपयोग के लिए ऊर्जा भी संग्रहीत करते हैं।
- प्रोटीन पादप कोशिकाओं में जैव–भार का निर्माण करता है।

द्वितीयक चयापचय रासायनिक जटिलता और जैविक कार्यों में एक दूसरे से भिन्न होते हैं। लवण सहिष्णुता में अमीनो अम्ल जैसे प्रोलाइन, मैनिटोल और सोर्बिटोल, डायमिथाइलसल्फोनियम यौगिक, ग्लाइसीन बिटेन, शर्करा, ट्रीहेलोज और फ्रक्टेन्स जैसी शर्करा ओस्मोलॉइट या ओस्मोप्रोटेक्टेंट के रूप में कार्य करती है। लवण तनाव उत्पन्न होने पर पौधे इन ओस्मोलाइट के संचय में वृद्धि दर्शाते हैं।

1. विलयकों (ओस्मोलाईट्) का संचय

ओस्मोलाईट् विभिन्न प्रकार के कार्बनिक यौगिकों का एक समूह है जो बिना चार्ज के और पानी में घुलनशील प्रकृति के होते हैं तथा उच्च सांद्रता पर भी कोशिकीय क्रियाओं को बाधित नहीं करते हैं। इनमें मुख्य रूप से प्रोलीन, ग्लाइसीन बिटेन, शर्करा और पॉलीओल्स हैं। ओस्मोलाईट् संचय की दर विभिन्न पौध प्रजातियों में अलग–अलग मात्रा में होती है। कोशिकाओं में संगत ओस्मोलाइटों की मात्रा का स्तर या तो यौगिकों के अपरिवर्तनीय संश्लेषण द्वारा या संश्लेषण और गिरावट के

संयोजन से संतुलित होता है। इन ओस्मोलाईट्स का प्रमुख कार्य कोशिकीय संरचना की रक्षा करना और निरंतर जल प्रवाह के जरिये कोशिका के भीतर परासरणी संतुलन बनाए रखना है। विभिन्न ओस्मोलाईट् और उनकी विशिष्ट भूमिका की संक्षिप्त चर्चा निम्नलिखित है:

1.1 एमिनो एसिड–लवणीय तनाव की स्थिति में अमीनो एसिड जैसे सिस्टीन, आर्जिनिन और मिथियोनीन, जो कुल अमीनो एसिड का लगभग 55 प्रतिशत होते हैं, घट जाते हैं, जबकि प्रोलीन की मात्रा बढ़ जाती है। तनाव के दौरान कोशिकाओं में आंतरिक प्रोलीन जमा हो जाता है, जो न केवल तनाव के प्रति सहिष्णुता प्रदान करता है, बल्कि तनाव के दौरान कार्बनिक नाइट्रोजन आरक्षित भी करता है। प्रोलीन ग्लूटामेट या ऑर्निथिन से संश्लेषित किया जाता है। परासरणी तनाव के दौरान कोशिकाओं में सर्वप्रथम ग्लूटामेट बनने लगता है। इसके बाद दो प्रमुख किण्वकों (पाइरोलिन कार्बोक्जिलिक एसिड सिंथेटेज और पाइरोलिन कार्बोक्जिलिक एसिड रिडक्टेज) द्वारा पौधों में प्रोलीन का निर्माण किया जाता है। तम्बाकू में किये गए शोध से पता लगाया गया है कि प्रोलीन उत्पादन में शामिल एंजाइमों की गतिविधि में वृद्धि से पौधे की लवण सहिष्णुता बढ़ जाती है। कुछ अध्ययनों में धान के बीजों को 1 मिलीमोल प्रोलीन से उपचारित करने पर भी लवण सहिष्णुता में सुधार देखा गया है।

1.2 ग्लाइसीन बिटेन–ग्लाइसीन बिटेन एक अम्लीय अमोनियम यौगिक है जो सभी सूक्ष्मजीवों, उच्चतर पौधों और पशुओं में पाया जाता है। यह विस्तृत पीएच श्रृंखला तक उदासीन बना रहता है। ग्लाइसिन बीटेन एक कोशिकीय ओस्मोलाईट् है जो तनाव की अवधि के दौरान कोशिकीय परासरिता को बढ़ाता है और कोशिका के लिए विषैला भी नहीं होता है। इस प्रकार यह तनाव को कम करने में महत्वपूर्ण कार्य करता है। ग्लाइसिन बिटेन ऑस्मोटिक समायोजन द्वारा कोशिका की रक्षा करता है, प्रोटीन को स्थिर करता है एवं तनाव संबंधी क्षति से प्रतिक्रियाशील ऑक्सीजन प्रजातियों की कमी से प्रकाश संश्लेषण उपकरण को भी बचाता है। ग्लाइसिन बिटेन का संचय पौधों के बहुत से वर्गों में होता है। ग्लाइसीन बिटेन कोशिका के भीतर कोलीन या ग्लाइसीन से संश्लेषित किया जाता है। कोलीन से ग्लाइसीन बिटेन के संश्लेषण में दो या अधिक एंजाइमों से संबंधित दो चरण होते हैं। पहले चरण में कोलीन से ऑक्सीकरण प्रक्रिया द्वारा बीटेन एल्डिहाइड और इसके बाद फिर से अगले चरण में ऑक्सीकृत होकर ग्लाइसिन बीटेन बनता है। उच्चतर पौधों में पहली प्रक्रिया में एंजाइम कोलिन मोनो–ओक्सिजनेज जबकि अगले चरण में बिटेन एल्डिहाइड डिहाइड्रोजनेज प्रयुक्त होता है। लवण सहिष्णु पौधों में केवल एक प्रक्रिया में ही ग्लाइसिन से ग्लाइसिन बिटेन का निर्माण होता है। यहाँ ग्लाइसीन बिटेन को तीन लगातार एन–मिथाइलेशन द्वारा संश्लेषित किया गया है तथा प्रतिक्रियाओं को दो एस–एडेनोसिल मेथियोनीन द्वारा मिथाइल ट्रांसफेरेस, ग्लाइसीन सारकोसीन एन–मिथाइल ट्रांसफेरेस, और सैर्कोसीन डायमिथाइलग्लाइसिन एन–मिथाइल ट्रांसफेरेस द्वारा उत्प्रेरित किया जाता है। इन दो एंजाइमों का अतिच्छादित कार्य होता है क्योंकि ग्लाइसीन सोरकोसिन एन–मिथाइल ट्रांसफेरेज पहले और दूसरे चरण को उत्प्रेरित करते हैं जबकि सैर्कोसिन डाइमेथाइलग्लिसिन एन–मिथाइल ट्रांसफेरेज दूसरे और तीसरे चरण को उत्प्रेरित करता है। तनावग्रस्त स्थिति (150 मिली मोलर सोडियम क्लोराइड) में बीजों की अंदरूनी संरचना में कई दुष्प्रभाव दिखाई देते हैं जैसे कि थाईलाकोइड् सूजन, ग्रेना का विघटन एवं अंतर ग्रेनल और माइट्रोकोनड्रिया का विघटन। परन्तु जब बीजों को ग्लाइसीन बिटेन से उपचारित किया गया तो इन क्षतियों में काफी कमी पाई गयी। तनावग्रस्त स्थिति में ग्लाइसिन बीटेन को एक पत्ते पर छिड़का जाता है, तथा यह वर्णक स्थिरीकरण और प्रकाश संश्लेषण दर एवं विकास में वृद्धि करता है।

1.3 पोलिओल्स–पोलिओल्स वे यौगिक हैं जिनमें कार्बनिक प्रतिक्रियाओं के लिए उपलब्ध एकाधिक हाइड्रॉक्सिल कार्यात्मक समूह होते हैं। पोलिओल्स एक शर्करा अल्कोहॉल है जो कि कम आणविक भार वाले चेपरोन तथा संगत विलेय के रूप में प्रतिक्रियाशील ऑक्सीजन प्रजातियों और ओस्मोलाईट् की तरह कार्य करते हैं। इन्हें चक्रीय (उदाहरणतः पिनिटोल) और अचक्रीय (जैसे मैनिटोल) श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है। पौधों में तनावग्रस्त स्थिति में मैनिटोल का निर्माण एन.ए.डी. पी.एच. पर निर्भर मैनोस–6–फॉस्फेट रिडक्टेस के माध्यम से होता है। ये संगत विलय कोशिकाओं की अंदरूनी झिल्ली सरंचनाओं और एन्जाइमों को निर्जलीकरण और आयनों से क्षतिग्रत होने से बचाते हैं। अत्यधिक लवणीय तनाव की स्थिति में अरेबिडोप्सिस और तम्बाकू (निकोटियाना टोबेकम) में पाया

गया कि पादप रूपांतरण के दौरान जीवाणु एमएलटीएडी जीन से मैनिटोल–1–फॉस्फेट डिहाइड्रोजनेज का निर्माण होता है जोकि लवण सहिष्णुता प्रदान करता है, एवं सामान्य वृद्धि और विकास को बनाये रखता है। जब पौधों को लवण तनाव दिया जाता है, तो कोशिकाओं के अंदर पिनिटोल जमा हो जाता है। इसके निर्माण में दो प्रमुख क्रियाएं होती है। पहली, मायो–इनॉसिटॉल का मिथाइलेशन, जिसके परिणामस्वरूप एक मध्यवर्ती यौगिक, ओनोनिटॉल का निर्माण होता है। दूसरे चरण में एपिमेराइजेशन प्रक्रिया द्वारा ओनोनिटॉल पिनिटोल में परिवर्तित हो जाता है। आईएमटी जीन के द्वारा इनोसिटोल मिथाइल ट्रांसरेज एंजाइम का निर्माण होता है जो पिनिटोल के संश्लेषण में प्रमुख भूमिका निभाता है। पौधों में आईएमटी जीन के ट्रांसफॉर्मेशन के नतीजे एमएलटीएडी जीन के जैसे पाए गए हैं। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि पिनिटोल तनाव उन्मूलन में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। पेलीओल्स का संचय पौधों की कई प्रजातियों में पोलीओल्स वितरण पर आधारित होता है, या सीधे श्रृंखला चयापचयों जैसे मैनिटोल और सोर्बिटोल या चक्रीय पोलीओल्स जैसे मायो–इनॉसिटोल और मिथाइलीकृत यौगिक से होता है, जो सूखे और लवणता तनाव के साथ सहसम्बद्ध होते हैं।

1.4 कार्बोहाइड्रेट्स–लवण तनाव में पौधों में कार्बोहाइड्रेट जैसे शर्करा (ग्लूकोज, फ्रक्टोज, फ्रेंकटेन्स और ट्रीहैलोज) और स्टार्च का संचय होता है। तनाव निवारण में इन कार्बोहाइड्रेट द्वारा निभाई गई प्रमुख भूमिकाओं में ओस्मोप्रोटेक्शन, कार्बन का भंडारण, और प्रतिक्रियाशील ऑक्सीजन प्रजातियों का संयोजन शामिल है। यह देखा गया कि लवण तनाव के दौरान विभिन्न पौधों की प्रजातियों में कोशिका के भीतर शर्करा (सुक्रोज और फ्रेंकटेन्स) का स्तर बढ़ जाता है। आरक्षित कार्बोहाइड्रेट होने के अलावा, ट्रीहैलोज संचय से कई भौतिक और रासायनिक तनावों के प्रति जीवों की सुरक्षा होती है, जिसमें लवण तनाव भी शामिल है। ये पौधों की क्रियात्मक प्रतिक्रियाओं में एक सुरक्षात्मक भूमिका निभाते हैं। टमाटर (सोलेनम लाइकोपर्सिकम) के लवणग्रस्त पौधों में लवणता के तहत सुक्रोज फॉस्फेट सिंथेसिस एन्जाइम की मात्रा में वृद्धि होती है जिसके कारण सुक्रोज के संचय में भी वृद्धि होती है। धान के पौधों में शर्करा की मात्रा लवण तनाव के दौरान बढ़ या घट सकती है। यह देखा गया है कि लवणग्रस्त धान की जड़ों में स्टार्च की मात्रा में कमी आती है, जबकि तनों में कोई ज्यादा फर्क नहीं देखा गया।

2. लवण सहिष्णुता में ऑक्सीकरण रोधियों की भूमिका

2.1 गैर एंजाइमेटिक ऑक्सीकरण रोधी–ऑक्सीजन प्रजातियाँ जैसे सुपरऑक्साइड (O_2^-), हाइड्रोजन पराक्साइड (H_2O_2), हाइड्रॉक्सील कण (OH), और ऑयन ऑक्साइड ($^1O_2$) सामान्य वातापेक्षी चयापचय के दौरान उत्पन्न होते हैं और अन्य ऑक्सीजन ग्राहियों की अनुपस्थिति में माइटोकॉन्ड्रिया और हरितलवक में इलेक्ट्रोन ट्रांसपोर्ट चेन से इलेक्ट्रोन लीक हो जाते हैं। हालांकि, पौधों में आमतौर पर सुपरऑक्साइड डिसम्युटेस (एसओडी) एंजाइम की मदद से सुपरऑक्साइड रेडिकल को खत्म करने की क्षमता होती है, जो सुपरऑक्साइड को हाइड्रोजन पराक्साइड और ऑक्सीजन में परवर्तित कर देता है, और धातु आयनों में कमी को रोक कर हाइड्रॉक्सिल रेडिकल का संश्लेषण करता है। एस्कॉर्बेट परॉक्सीडेज थैलाकॉयड झिल्ली में स्थित होता है एवं हाइड्रोजन पराक्साइड को समाप्त कर देता है। यह पाया गया है कि पौधों में विभिन्न पर्यावरणीय तनावों जैसे लवणता, सूखा, जल भराव, उच्च तापमान, उच्च प्रकाश तीव्रता, तृणनाशक या खनिज पोषक तत्व की कमी के कारण सक्रिय ऑक्सीजन प्रजातियों का उत्पादन बढ़ता है। पौधों में ऑक्सीकरण–रोधी तत्व उच्च मात्रा में होते हैं जो कि ऑक्सीकरण से उत्पन्न होने वाली सक्रिय ऑक्सीजन प्रजातियों से होने वाली क्षति के लिए अधिक प्रतिरोध दर्शाते हैं। लवणीय तनाव में धान की लवण सहिष्णु और लवण संवेदनशील किस्मों पर किये गए अध्धयन में पाया गया कि सहिष्णु पौधों की तुलना में संवेदनशील किस्मों (हितंबोर और आईआर–28) में ऑक्सीकरण रोधी उत्पादन प्रणाली की गतिविधि में गिरावट और परॉक्साइड गतिविधि में वृद्धि होती है। लवण तनाव के समय इन संवेदनशील किस्मों में लिपिड पेरोक्सीडेशन और इलेक्ट्रोलाइट रिसाव के साथ–साथ पत्तियों में सोडियम संचय में भी वृद्धि होती है। इसके विपरीत लवण सहिष्णु धान की किस्मों पोक्काली और बैंकट ने सक्रिय ऑक्सीजन प्रजातियों के शमन हेतु अलग–अलग सुरक्षात्मक तंत्र दिखाए। लवण तनाव में पोक्काली में सुपरऑक्साइड डिसम्यूटेज गतिविधि में थोड़ी वृद्धि हुई लेकिन पेरोक्साइड गतिविधि में थोड़ी कमी हुई, और लगभग न के बराबर लिपिड पेरोक्सीडेशन, इलेक्ट्रोलाइट रिसाव और सोडियम संचय हुआ। इसके विपरीत, बैंकट में लवण संवेदनशील किस्मों के समान पत्तियों में सोडियम का संचय और ऑक्सीडेटिव क्षति के लक्षण पाए गए।

2.2 एंजाइमेटिक ऑक्सीकरण रोधी–लवणग्रस्त पौधों की तुलना में नियंत्रण खंड में उगाये गए पौधों में एंजाइमेटिक एंटीऑक्सिडेंट (कैटालेज, पेरोक्सीडेज और पॉलीफेनोल ऑक्सीडेज) की क्रियाशीलता ज्यादा पाई जाती है। एंथोसाइनीन एक फ्लेवोनॉइड है जिसका लवणग्रस्त पौधों में बड़े पैमाने पर संचय देखा गया है। एस्कॉर्बेट कोशिका के भीतर मौजूद प्रमुख ऑक्सीकरण रोधियों में से एक है। एस्कॉर्बेट का बहिर्जात उपयोग पौधों की विभिन्न प्रजातियों में लवण तनाव के प्रतिकूल प्रभाव को कम करता है। तनाव को कम करने में एक और एंटीऑक्सीडेंट ग्लूटाथियोन भी है, जो सुपरऑक्साइड रेडिकल, हाइड्रॉक्सिल रेडिकल, और हाइड्रोजन पराक्साइड के साथ प्रतिक्रिया कर इन हानिकारक रेडिकलों का समायोजन करता है। यह एस्कॉर्बेट–ग्लुटाथियोन चक्र के माध्यम से एस्कॉर्बेट के फिर से बनने में भाग ले सकता है। लवण तनाव के दौरान एलियम पौधे में बहिर्जात ग्लुटाथियोन का प्रयोग प्लाज्मा झिल्ली की पारगम्यता और कोशिका को जीवित रखने में मदद करता है। लवण की स्थिति में ग्लुटाथियोन और एस्कॉर्बेट के प्रयोग से, शाखाओं की संख्या, ताजा और सूखे वजन की बढ़ोतरी और शर्करा, फिनॉल, जैंथोफिल वर्णक, और खनिज आयनों की मात्रा में बढ़ोतरी करने में सहायक है। जीनोटाइपों के बीच ऑक्सीकरण–रोधी गतिविधि में अंतर या तो रंध्रों के बंद होने की मात्रा या अन्य प्रक्रियाओं जैसे कार्बन डाईआक्साइड के स्थिरीकरण में अंतर अथवा फोटो–अवरोध से बचने वाली प्रतिक्रियाओं के कारण हो सकता है। हाल ही में यह तर्क दिया गया है कि पौधों में तीन मुख्य विशेषताएं हैं जो उन्हें लवण तनाव के अनुकूलन में मदद करती हैं: आयन प्रतिरोध, ऊतक सहिष्णुता और लवण सहिष्णुता। यह पाया गया है कि ऑक्सीकरण–रोधिओं की ऊतक और लवण सहिष्णुता तंत्र में महत्वपूर्ण भूमिका है।

3. लवण सहिष्णुता में पॉलीमाइनों की भूमिका

पॉलीमाइन छोटे, कम आणविक भार वाले एलीफेटिक अणुओं का व्यापक समूह है जो लगभग सभी पादप समूहों में पाए जाते हैं। पॉलीमाइन सामान्य विकास की विभिन्न अवस्थाओं जैसे प्रसार, और संरचना विकास, बीजों की निष्क्रियता को तोड़ने तथा बीज अंकुरण, फूलों और फल का विकास इत्यादि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये अजैविक तनावों जैसे लवणता प्रतिरोध में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं और तनाव बढ़ने की स्थिति में निरंतर बढ़ते जाते हैं। पौधों में पाए जाने वाले मुख्य पॉलीमाइन, डाईअमाइन पुटरेस्किन, ट्राइमिनस्परमिडीन और टेट्रा–एमाइन स्परमिन है। पॉलीमाइन की निर्माण प्रक्रिया को पौधों सहित कई जीवों में अच्छी तरह से जाँचा गया है। डाईअमाइन पुटरेस्किन सबसे छोटी पॉलीमाइन है और इसका निर्माण क्रमशः एंजाइम ऑर्निथिन डिकार्बोक्सीलेस और आर्जिनिन डिकारबॉक्जिलेज द्वारा ऑर्निथिन या आर्जिनिन से किया जाता है। एन–कार्बामॉयल–प्युट्रेसेन को एंजाइम एन–कार्बामॉयल–प्युट्रेसेन एमिनोहाइड्रॉलेज द्वारा डायरीन पुटरेस्किन में बदल दिया जाता है। इस प्रकार डाईअमाइन पुटरेस्किन ही उच्च पोलीअमीनों का आधार है तथा इससे ही उच्च पोलीअमीनों का निर्माण एमिनोप्रोपाइल ग्रुप के क्रमशः ट्राइमिनस्परमिडीन और टेट्रा–एमाइन स्परमिन में जुड़ने पर स्परमिडीन सिंथेस और स्परमिन सिंथेस एन्जाइमों की सहायता से होता है। लवण तनाव के फलस्वरूप आंतरिक पॉलीमाइनों के स्तर में वृद्धि होती है। यह पाया गया है कि तनाव के दौरान बहिर्जात पॉलीमाइन का प्रयोग अंतर्जात पॉलीमाइन के स्तर को बढ़ाता है। पॉलीमाइन के सकारात्मक प्रभावों में झिल्ली के रखरखाव तथा ओस्मोटिकली–सक्रिय विलयों के संश्लेषण के लिए गुणसूत्रों की अभिव्यक्ति के विनियमन, सक्रिय ऑक्सीजन प्रजातियों के उत्पादन में कमी, और विभिन्न अंगों में सोडियम और क्लोराइड के संचय का नियंत्रण सम्मिलित है। धान, तम्बाकू और अरबिडोप्सिस में डायरीन पुटरेस्किन, ट्राइमिनस्परमिडीन और टेट्रा–एमाइन स्परमिन के अधिक उत्पादन से लवण सहिष्णुता बढ़ जाती है। यह पाया गया है कि पॉलीमाइन के बाह्य उपयोग से प्रकाश संश्लेषण दक्षता में लवण से होने वाली कमी रोकी जा सकती है, लेकिन यह प्रभाव पॉलीमाइनों की मात्रा और प्रकार और तनाव के स्तर पर निर्भर करता है। यह देखा गया है कि ट्राइमिन स्परमिडीन कैल्विन चक्र के विनियमन, प्रोटीन तह असेंबली द्वारा प्रोटिओलिसिस का निषेध करके लवण सहिष्णुता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

पिछले कुछ दशकों में, पादप प्रजनकों ने पारंपरिक चयन और प्रजनन तकनीकों के माध्यम से कुछ फसलों की लवणता सहिष्णुता में सफलतापूर्वक सुधार किया है, जिसमें पादप कार्यिकी व जैव रासायनिक पहलुओं का योगदान बहुत नहीं रहा है। ये उपलब्धियां जैव रासायनिक तंत्र के पूर्ण अध्ययन नहीं

बल्कि पौधों के फेनोटाइ पर आधारित है। ऐसा माना जाता है कि लवण सहिष्णुता हेतु पौधों के चयन के लिए विशिष्ट संकेतकों जैसे सम्पूर्ण पौधा, ऊतक या कोशिका स्तर पर जैव रासायनिक परिवर्तनों को चिन्हित करने हेतु अनुसंधान किये जाने चाहिए। लवणग्रस्त पौधों में कोशिकीय तंत्र में हो रहे परिवर्तनों को समझना बहुत आवश्यक है ताकि प्रजनकों को सार्थक सलाह दी जा सके और चयन दक्षता में वृद्धि की जा सके। पौधों की लवणता सहिष्णुता पर कई अध्ययनों के बावजूद भी चयापचय के निर्माण से पौधों को नुकसान है और लवण सहनशीलता के अनुकूली घटकों के बारे में पूर्ण जानकारी अभी भी उपलब्ध नहीं है। नतीजतन, ऐसा कोई भी ठोस सांकेतिक आधार उपलब्ध नहीं है जिसके प्रयोग द्वारा कृषि फसलों में लवणता सहिष्णुता में वांछित सुधार किया जा सके। इसलिए यह बेहतर होगा कि यदि जैव–रासायनिक संकेतक सभी प्रजातियों के लिए सामान्यीकृत होने की बजाय व्यक्तिगत प्रजातियों के लिए निर्दिष्ट किये जाए और उनका विस्तृत अध्ययन किया जाये। पहले से ज्ञात मुख्य जैव–रासायनिक संकेतकों में ऑक्सीकरण रोधी पदार्थ और कार्बनिक विलायक (ग्लाइसीन–बिटेन और प्रोलिन) अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि कुछ अध्ययन दर्शाते हैं कि ऑक्सीकरण रोधी या उपरोक्त दो कार्बनिक विलायकों की भी उच्च सांद्रता पौधों में लवणता के साथ–साथ अन्य अजैविक तनावों के लिए सहिष्णुता हेतु उत्तरदायी होती है।

समाप्त

उत्साह, प्रयास की जननी है, तथा इसके बिना आज तक कोई महान उपलब्धि हासिल नहीं की गई है।

सुधरी हुई ऊसर भूमि में धान-गेहूँ फसल प्रणाली में फव्वारा सिंचाई द्वारा पानी एवं नाइट्रोजन की बचत

रणबीर सिंह एवं राजेन्द्र कुमार यादव
भाकृअनुप–केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा)
E-mail : ranbir.singh@icar.gov.in

सिंधु–गंगा के मैदानी क्षेत्रों में धान–गेहूँ फसल प्रणाली का अत्यधिक प्रचलन होने के कारण इस क्षेत्र में भूजल स्तर में हो रही लगातार गिरावट एवं सिंचाई जल की गुणवत्ता में ह्रास के कारण भूमि, वर्षा के पानी और भूजल आदि संसाधनों के न्यायसंगत उपयोग के लिए विवश कर दिया है। इन क्षेत्रों में प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन और लगातार सघन खेती के कारण मृदा की उर्वरा शक्ति कम हो रही है। फसल उत्पादन के लिए कृषि क्रियाओं में बढ़ते हुए खर्च, फसल कटाई व बुवाई के समय मजदूरों की कमी और खाद्यान्न के लगातार घटते उत्पादन के कारण किसान कृषि व्यवसाय को छोड़ने या फसल उत्पादन तकनीक में आवश्यक परिवर्तन करने के लिए विवश हैं। विश्व उद्योग संगठन ने धान–गेहूँ उत्पादन की परंपरागत विधि को नुकसानदायक बताया और सुझाव दिया कि आज के युग में संसाधन संरक्षण तकनीकों की अत्यन्त आवश्यकता है ताकि उत्पादन लागत को कम किया जा सके। इस व्यवस्था में धान–गेहूँ की खेती में बदलाव लाना आवश्यक है। धान उत्पादन में पानी की बचत करने को लेकर चल रहे अनुसंधान के सफल परिणाम सामने आए हैं।

केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल में पाँच साल से धान की सीधी बिजाई कर फव्वारा से सिंचाई करने पर पानी की बचत के साथ पैदावार में भी वृद्धि हुई। बिजली व नाइट्रोजन की बचत के साथ ही श्रमिकों की समस्या का भी हल निकला है। देश में पानी की कमी वाले इलाके जहाँ पर धान उत्पादन किया जाता है वहाँ पानी बचाने में यह विधि उपयुक्त रहेगी। अध्ययन में पाया गया है कि खेत की हल्की जुताई करने से 50 प्रतिशत जुताई का खर्च बचाया जा सकता है। इस परियोजना में जून महीने के प्रथम सप्ताह में जीरो टिलेज मशीन से धान की सीधी बिजाई की गई। खेत में गेहूँ के 33 प्रतिशत अवशेषों का प्रबंधन होने से मृदा की उर्वराशक्ति में वृद्धि देखी गई। धान में नाइट्रोजन की मात्रा फव्वारा पद्धति से देने पर 27 प्रतिशत तक बचत हुई। सामान्यतः धान रोपाई के लिए श्रमिकों की कमी रहती है। सीधी बिजाई (डीएसआर) करने पर यह समस्या खत्म हुई। डीएसआर से पानी की बचत के साथ 40 प्रतिशत डीजल की बचत की गई। 27 प्रतिशत श्रमिकों की बचत होती है। इस प्रकार की खेती में खरपतवार नियंत्रण के लिए विशेष ध्यान रखना चाहिए। बिजाई के बाद 10 से 15 दिनों में खरपतवार का जमाव शुरू हो जाता है। इसलिए 40 दिन तक उचित देखभाल करनी चाहिये। उचित समय पर खरपतवार नियंत्रण के लिए खरपतवारनाशक रसायनों का छिड़काव करें। एक एकड़ में फव्वारा लगाने पर किसान का लगभग 50 हजार रुपये तक खर्च आता है।

फव्वारा सिंचाई के अन्तर्गत धान की सीधी बिजाई–जुताई की नई तकनीकः

बीज की बुवाई : ड्रिल मशीन से सीधी बुवाई करने की सिफारिश की जाती है।

बोने का समय : 1 से 15 जून तक बोने का समय उचित है।

बीज की मात्रा : हाइब्रिड–अराईज 6129 और पूसा 44, प्रजातियों के लिए बीज की मात्रा 6 से 8 किलोग्राम प्रति एकड़ एवं बासमती (सीएसआर 30) के लिए 5 से 6 किलोग्राम प्रति एकड़ बीज की आवश्यकता पड़ती है।

उर्वरकों की मात्रा : नत्रजन 60, फॉस्फोरस 24, पोटाश 24 कि.ग्रा. प्रति एकड़ आवश्यक होता है। डी.ए.पी. 50 कि.ग्रा. प्रति एकड़ और जिंक सल्फेट 12 कि.ग्रा. प्रति एकड़ बुवाई के समय देने की सिफारिश की जाती है। बुवाई के 25–30 दिन बाद यूरिया 50 कि.ग्रा. प्रति एकड़, 45–50 दिन बाद 50 कि.ग्रा. प्रति एकड़, और 60–65 दिन बाद 30 कि.ग्रा. यूरिया प्रति एकड़ देने की सिफारिश की जाती है।

फव्वारा सिंचाई प्रणाली के साथ नत्रजन प्रबंधन

बुवाई के बाद लीफ कलर चार्ट की सहायता से पौधों में नत्रजन की आवश्यकता का अनुमान लगाते हैं। इसके बाद फव्वारा सिंचाई विधि द्वारा 30 लीटर क्षमता वाले उर्वरक टैंक में 5 कि.ग्रा. प्रति एकड़ यूरिया डालकर सिंचाई जल के साथ देने की सिफारिश की जाती है। लीफ कलर चार्ट की सहायता से पौधों में नत्रजन की आवश्यकता का अनुमान बार–बार लगाने और जरूरत के अनुसार यूरिया की मात्रा ड़ालने की सिफारिश की जाती है।

खरपतवार नियंत्रणः धान के खेतों में खरपतवारों की विभिन्न किस्में पायी जाती है जिनके नियंत्रण के लिए निम्नलिखित रसायन प्रयोग किए जाते हैं।

कः स्टाम्प 400 मि.ली. प्रति एकड़ (पेंडीमेथीलीन) बुवाई के बाद सिंचाई करने के 2 दिन बाद खरपतवारों को जमने से रोकने हेतु छिड़काव करके प्रयोग करें।

खः सनराइज 50 ग्राम प्रति एकड़ 250 लीटर पानी में घोलकर बुवाई के 25–30 दिन बाद छिड़काव करके डीला (मोथा) खरपतवार पर नियंत्रण करें।

डीला (मोथा) खरपतवार का नियंत्रण

गः मकरा और सामक खरपतवार उगने पर व्हिप सुपर रसायन 250 मि.ली. प्रति एकड़ 200 से 250 लीटर पानी में मिलाकर बुवाई के 25–30 दिन बाद खेत में छिड़काव करें।

रोग नियंत्रण : अभासी कंड/हल्दी गांठ रोग (फाल्स स्मट) का प्रकोप धान की सीधी बिजाई में बहुत ही कम होता है। जबकि रोपाई विधि में हल्दी गांठ रोग का प्रकोप बहुत ज्यादा दिखाई पड़ता है। इसके उपचार हेतु निम्नलिखित रासायनिक उपाय किए जाते हैं।

कः कॉपर ऑक्सीक्लोराईड 50 डब्लु.पी. 500 ग्राम प्रति एकड़ 120 लीटर पानी में घोलकर फूल आने के समय छिड़काव करने से काफी हद तक नियंत्रण किया जा सकता है।

खः बीज को बाविस्टीन से 2 ग्राम प्रति कि.ग्रा. की दर से उपचारित करके बुवाई करें।

कीट नियंत्रणः कीटों का प्रकोप धान की सीधी बुवाई में बहुत ही कम होता है।

धान की सीधी बुवाई में फव्वारा विधि द्वारा सिंचाई प्रबंधनः इस विधि से धान में दो दिनों के कुल वाष्पन के बराबर सिंचाई जल की मात्रा प्रति सिंचाई की दर से दिया जाता है। अंतिम सिंचाई फसल पकने के 10 दिन पहले तक करते हैं। विस्तृत विवरण तालिका 1 में दिया गया है।

धान की सीधी बुवाई के लाभ

- सीधी बुवाई में पौध तैयार करने की आवश्यकता नहीं होती है।
- खेत की अधिक जुताई की जरूरत नहीं पड़ती है।
- जुताई खर्च की बचत होती है।

धान की सीधी बिजाई में फव्वारा विधि से सिंचाई

तालिका 1 : धान की फसल में फव्वारा सिंचाई मात्रा एवं फव्वारा चलाने का समय

महीने	दो दिन का औसत वाष्पन (मिली मीटर)	फव्वारा चलाने की अवधि (घण्टे)
जून	15.56	4.48
जुलाई	10.58	3.16
अगस्त	7.50	2.19
सितम्बर	7.08	2.11

प्रथम सिंचाई बुवाई के अगले दिन 30 मिली मीटर (9 घंटे 15 मिनट) के बराबर की जाये ताकि धान जमाव के समय मृदा में नमी उचित मात्रा में बनी रहे। उसके बाद उपरोक्त तालिका 1 के अनुसार सिंचाई करते रहें।

- सिंचाई जल की बचत होती है।
- श्रमिकों की बचत होती है।
- जमीन की उर्वराशक्ति बढ़ती है।
- रोगों से बचाव होता है।
- धान–गेहूँ फसल की पैदावार संतोषजनक होती है।
- धान की सीधी बुवाई से पर्यावरण एवं मृदा का स्वास्थ्य अच्छा बना रहता है।

धान की फव्वारा सिंचाई के साथ परिणाम

- 6.9 टन प्रति हैक्टर तक धान की पैदावार।
- 1.75 से 1.73 कि.ग्रा. दानें प्रति घनमीटर सिंचाई जल उत्पादकता।
- 36182 रुपये शुद्ध आय।
- 1.62 लागत : लाभ अनुपात।
- 58 प्रतिशत तक सिंचाई जल में बचत।
- 33 प्रतिशत तक बिजली खर्च में बचत।
- 27 प्रतिशत नाईट्रोजन की बचत (40 कि.ग्रा. यूरिया प्रति हैक्टर बचत)।

फव्वारा सिंचाई विधि के साथ शून्य जुताई में धान अवशेषों के साथ गेहूँ की नई उत्पादन तकनीक

धान के अवशेषों का प्रबंधन : धान की कटाई और दाने झाड़ने के बाद, सम्पूर्ण अवशेषों को बराबर–2 पूरे खेत में फैला दें। फव्वारा सिंचाई विधि से पलेवा करके ओट (बत्तर) आने के बाद टरबो सीड ड्रील मशीन से सीधी बुवाई करने की सिफारिश की जाती है।

गेहूँ के पौधों में नत्रजन की मात्रा निर्धारण करने हेतु लीफ कलर चार्ट का प्रयोग

बोने का समय : नवम्बर महीने के पहले पखवाड़े तक बोने का समय उचित है।

बीज की मात्रा : 40 कि.ग्रा. प्रति एकड़ बीज की आवश्यकता पड़ती है। गेहूँ की अधिक पैदावार देने वाली प्रजातियों की सिफारिश की जाती है। बीज को बाविस्टीन रसायन 2 ग्राम प्रति कि.ग्रा. की दर से उपचारित करके बुवाई करें।

उर्वरकों की मात्रा : नत्रजन 30, फॉस्फोरस 24, पोटाश 24 कि.ग्रा. प्रति एकड़ आवश्यकता होती है। डी.ए.पी. 50 किलोग्राम प्रति एकड़ और जिंक सल्फेट 12 किलोग्राम प्रति एकड़ देने की सिफारिश की जाती है। बुवाई के बाद लीफ कलर चार्ट की सहायता से पौधों में नत्रजन की आवश्यकता का अनुमान लगाते है।

इसके बाद फव्वारा सिंचाई के साथ 30 लीटर क्षमता वाले उर्वरक टैंक में 5 किलोग्राम प्रति एकड के हिसाब से यूरिया डालकर सिंचाई के दिन देना चाहिए। लीफ कलर चार्ट की सहायता से पौधों में नत्रजन आवश्यकता निर्धारण करके यूरिया की मात्रा देने की सिफारिश की जाती है ।

खरपतवार नियंत्रण: गेहूँ के खेत में खरपतवारों की विभिन्न किस्में पायी जाती है जिनके नियंत्रण के लिए निम्नलिखित रसायन प्रयोग किए जाते हैं।

कः गुल्ली डंडा या गेहूँ का मामा (फेलेरिस माईनर) –इस खरपतवार को उगने से रोकने हेतु टोपिक– 160 ग्राम 500–600 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ पहली सिंचाई के बाद छिड़काव करते हैं।

खः चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों का नियंत्रणः चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार के नियंत्रण के लिए अलग्रिप 8 ग्राम प्रति एकड़ 500–600 लीटर पानी में घोलकर पहली सिंचाई के बाद छिड़काव करें।

रोग नियंत्रण : पीला, भूरा और काला रतुआ, इनके उपचार के लिए टिल्ट (प्रोपिकोनाझोल 25 ईसी 25 मि.ली. प्रति टंकी में (15 लीटर क्षमता) डालकर छिडकाव करना चाहिए।

कीट नियंत्रण : कीटों का प्रकोप गेहूँ की फसल में बहुत ही कम होता है। चेप्पा या अल का प्रकोप कभी–2 दानों की दूध अवस्था में मिलता है। इसके उपचार हेतु इकतारा (थायोमेथोक्साम 25 प्रतिशत डब्ल्यु जी) का 6 ग्राम प्रति टंकी (15 लीटर क्षमता) में घोलकर छिडकाव करते हैं।

सिंचाई प्रबंधन

फव्वारा सिंचाई : इस विधि से गेहूँ में सात दिनों के कुल वाष्पन के बराबर सिंचाई जल की मात्रा प्रति सिंचाई की दर से मौसम वर्षा के आंकडों को सम्मिलित करने के बाद करें। अंतिम सिंचाई फसल पकने के 10 दिन पहले तक करते है। विस्तृत विवरण तालिका 2 में दिया गया है।

गेहूँ में फव्वारा सिंचाई के परिणाम

- 5.13 टन प्रति हैक्टर तक पैदावार।
- 3.51 से 3.45 किलो दानें प्रति घनमीटर सिंचाई जल उत्पादकता।
- 40,813 रूपये शुद्ध आय।
- 1.69 लागत : लाभ अनुपात।
- 35 से 48 प्रतिशत तक सिंचाई जल में बचत।
- 17.2 से 35.8 प्रतिशत तक बिजली खर्च में बचत।
- 50 प्रतिशत नाईट्रोजन की बचत (162 कि.ग्रा. यूरिया प्रति हैक्टर बचत)।

निष्कर्ष

- धान की सीधी बुवाई कर फव्वारा सिंचाई करने पर पानी की बचत होती है तथा अच्छी पैदावार भी मिलती है।
- बिजली खर्च व नाइट्रोजन की बचत के साथ ही श्रमिकों की समस्या का हल भी निकला है।
- देश में पानी की कमी वाले इलाके, जहाँ धान उत्पादन किया जाता है, वहाँ पानी बचाने में फव्वारा विधि उपयुक्त रहती है।
- इसके तहत धान की हाइब्रिड किस्म अराईज 6129 भी सफलतापूर्वक लगाई गई।
- बासमती सीएसआर 30 के उत्पादन में यह प्रयोग सफल रहा।
- खेत की हल्की जुताई करने से 50 प्रतिशत जुताई का खर्च बचा।
- जून के प्रथम सप्ताह में जीरो टिलेज मशीन से धान की सीधी बुवाई की जाती है। खेत में बचे गेहूँ के 33 प्रतिशत तक अवशेषों का प्रबंधन होने से धरती की उर्वराशक्ति बढ़ती है।
- नाइट्रोजन की खुराक फव्वारा से देने पर 27 प्रतिशत नाइट्रोजन की बचत होती है।

तालिका 2: गेहूँ की फसल में फव्वारा सिंचाई मात्रा एवं फव्वारा चलाने का समय

महीने	सात दिन का औसत वाष्पन (मिली मीटर) x पादप वृद्धि कारक	फव्वारा चलाने की अवधि (घण्टे)
नवम्बर	15.35	4.45
दिसम्बर	10.85	3.21
जनवरी	12.16	3.45
फरवरी	18.62	5.45
मार्च	24.74	7.38

प्रथम सिंचाई बुवाई के 21 दिनों बाद सी. आर. आई. अवस्था पर 30 मिली मीटर (9 घंटे 15 मिनट) के बराबर की अवधि तक फव्वारा विधि से करें। उसके बाद उपरोक्त तालिका 2 के अनुसार सिंचाई करते रहें।
फव्वारा सिंचाई से औसतन 12960 लीटर पानी प्रति घण्टा प्रति एकड़ 2.0 किलोग्राम प्रति वर्ग सें. मी. दबाव पर पानी निकलता है।

- धान रोपाई के लिए श्रमिकों की कमी रहती है। सीधी बिजाई (डीएसआर) करने पर इस समस्या का समाधान हो सकता है।
- डीएसआर से पानी की बचत के साथ 40 प्रतिशत डीजल बचता है। 27 प्रतिशत श्रमिकों की बचत होती है।
- खरपतवार नियंत्रण के लिए विशेष ध्यान रखना चाहिए। धान बुवाई के बाद 15 दिन में खरपतवार का जमाव शुरू हो जाता है। इसलिए 40 दिन तक उचित देखभाल करनी चाहिये। उचित समय पर खरपतवार नियंत्रण के लिए खरपतवार नाशकों का छिड़काव करें।
- एक एकड़ में फव्वारा लगाने पर किसान का करीब 50 हजार रुपये खर्च आता है।

तकनीकी व्यवहार्यता

- सीधी बुवाई के साथ फव्वारा सिंचाई करके धान को सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है।
- धान की सीधी बुवाई से खेती करने पर रोपाई धान की तुलना में लगभग 26–28 प्रतिशत कम सिंचाई जल की आवश्यकता होती है। फव्वारा से सिंचाई करके 50–58 प्रतिशत सिंचाई जल की बचत होती है।
- बासमती धान (सीएसआर 30) की खेती सीधी बुवाई से रोपाई की तुलना में ज्यादा लाभदायक होती है, इसके साथ–साथ सिंचाई जल उत्पादकता रोपाई की तुलना में 10 प्रतिशत से ज्यादा होती है।
- हाइब्रिड धान (अराईज 6129) की सिंचाई जल उत्पादकता सीधी बुवाई में रोपाई की तुलना में ज्यादा आंकी गयी है।
- कम जुताई के साथ जीरो टिलेज से धान की सीधी बुवाई करके संतोषजनक पैदावार ली जा सकती है।
- धान की सीधी बुवाई में सिंचाई जल की बचत, जुताई खर्च में कमी एवं रोपाई में श्रमिकों की बचत की जा सकती है।
- शुन्य जुताई में धान के 100 प्रतिशत अवशेषों का प्रबंधन टरबो सीड ड्रील द्वारा आसानी से करके गेहूँ की संतोषजनक पैदावार ली जा सकती है।
- धान की सीधी बुवाई करके खरपतवारों का नियंत्रण खरपतवारनाशक रसायनों द्वारा सफलतापूर्वक किया जा सकता है।

समाप्त

जिसके पास धैर्य है, वह जो कुछ इच्छा करता है, प्राप्त कर सकता है।

जलवायु परिवर्तन के परिदृश्य में जीवाणु खाद की भूमिका

प्रियंका चंद्रा, रिंकी[1], वनिता पांडे[1], कैलाश प्रजापत, पारुल सुन्धा, अवतार सिंह, मधु चौधरी एवं आर॰के॰ यादव

भाकृअनुप–केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा)
[1]भाकृअनुप–भारतीय गेहूँ एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा)
E-mail : priyanka.chandra921@gmail.com

जलवायु परिवर्तन का कृषि पर प्रभाव विश्व में बढ़ते हुए औद्योगीकरण से ग्रीन हाऊस गैसों के उत्सर्जन में इजाफा हुआ है। बढ़ते ग्रीन हाऊस गैसों के उत्सर्जन से वैश्विक तापमान में वृद्धि एवं जलवायु परिवर्तन हो रहा है। हाल के वर्षों में, उच्च तापमान, वर्षा का वितरण, हिमपात, ओलावृष्टि, तुफान, बाढ़ आदि में होने वाले अप्रत्याशित बदलाव जलवायु परिवर्तन के ही दुष्प्रभाव है। इंटर गवर्नमेंट पैनल ओन क्लाइमेट चेंज (आई.पी. सी.सी.) की प्रकाशित रिपोर्ट के अनुसार, जलवायु परिवर्तन के कारण एशिया में भारी वर्षा एवं गरम तरंगों की आवृति में वृद्धि हुई है। भारत के संदर्भ में जलवायु परिवर्तन इसलिए भी ज्यादा महत्वपूर्ण है क्योंकि भारतीय अर्थव्यवस्था की आधारशिला कृषि है। तापमान में वृद्धि तथा जलवायु परिवर्तन का सबसे ज्यादा प्रभाव कृषि के क्षेत्र पर पड़ रहा है, क्योंकि तापमान, वर्षा आदि में बदलाव आने से मिट्टी की उपजाऊ क्षमता में कमी हो रही है। तापमान बढ़ने से मिट्टी की नमी प्रभावित हो रही है जिसके कारण मिट्टी में लवणता बढ़ेगी और जैव विविधता घटती जाएगी। बाढ़ जैसी प्राकृतिक आपदाओं से जहाँ एक ओर मिट्टी का क्षरण अधिक हो रहा है वहीं दूसरी ओर सूखे की वजह से खेती की जमीन बंजर हो रही है।

वर्षा की अनिश्चितता के कारण विभिन्न फसलों के उत्पादन एवं उसकी उत्पादकता पर भी प्रभाव पड़ रहा है। साथ ही उच्च तापमान, कार्बन डाईऑक्साईड, मीथेन, और ओजोन की सांद्रता संभवतः फसल के विकास को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करती है। कृषि उत्पादन में कमी के कारण कृषि पदार्थों की कीमतों में भारी वृद्धि देखी जा रही है। जलवायु परिवर्तन पर अंतरशासकीय पैनल (आई.पी.सी.सी.) ने वर्ष 2020 तक भारत में 0.5 से 1.2 डिग्री सेल्सियस तक तापमान वृद्धि का पूर्वानूमान दिया था, जो 2050 तक 0.88 से 3.16 डिग्री सेल्सियस हो सकता है तथा 2080 तक यह 1.56 से 5.44 डिग्री सेल्सियस तक पहुँच सकता है। जलवायु परिवर्तन का कृषि पर प्रभाव के आंलकन के आधार पर यदि तापमान 3–5 डिग्री सेल्सियस बढ़ता है तो खाद्य पदार्थों के उत्पादन में 24 से 30 प्रतिशत तक की कमी आ सकती है, गेहूँ के उत्पादन में 10–15 प्रतिशत। चावल के उत्पादन में 6 से 7 प्रतिशत जबकि आलु के उत्पादन में 2 से 3 प्रतिशत तथा सोयाबीन के उत्पादन में 3 से 4 प्रतिशत की कमी होने का अनुमान है। एक शोध के अनुसार जलवायु परिवर्तन से न केवल फसलों की उत्पादकता प्रभावित होगी बल्कि उनकी पोष्टिकता पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। फल एवं सब्जियों वाली फसलों में फूल तो खिलेंगे लेकिन उनसे फल या तो बहुत कम बनेंगे या उनकी पोष्टिकता प्रभावित होगी और अनाज में पोषक तत्वों और प्रोटीन की कमी भी पाई जाएगी। देश का विश्व प्रसिद्ध चावल बासमती भी जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभावों से बच नहीं पाएगा, तापमान वृद्धि से इसकी खुशबू प्रभावित हो सकती है।

जलवायु परिवर्तन के कारण तापमान और कार्बन डाईऑक्साईड के स्तर में वृद्धि के फलस्वरूप फसलों पर कीटों का प्रकोप बढ़ रहा है। कीटों और रोगजनकों की आबादी मुख्यतः तापमान और आर्द्रता पर निर्भर होती है, गर्म जलवायु कीट पतंगों की प्रजनन क्षमता की वृद्धि में सहायक है तथा इन मानकों में वृद्धि उनकी जनसंख्या गतिशीलता बदल देगी, जिससे उपज में नुकसान हो सकता है।

जलवायु परिवर्तन में जैविक खेती : एक चिरस्थायी कृषि प्रणाली

जलवायु परिवर्तन से प्राकृतिक संसाधनों, वैश्विक जल आपूर्ति एवं मृदा की गुणवत्ता में गिरावट जैसे नकारात्मक प्रभाव देखने को मिल रहे हैं। साथ ही खेतों में रासायनिक खादों व कीटनाशकों के इस्तेमाल से जहाँ एक ओर मृदा की उत्पादकता घटती है वहीं दूसरी ओर इनकी मात्रा भोजन श्रृंखला के माध्यम से मानव के शरीर में पहुँच जाती है, जिससे अनेक प्रकार की बीमारियाँ होती है। रासायनिक खेती से ग्रीन हाउस गैसों के

उत्सर्जन में भी हिजाफा होता है। आई.पी.सी.सी. के अनुसार कृषि का वैश्विक ग्रीन हाउस गैसों में 10–12 प्रतिशत योगदान है जिसमें मीथेन, नाइट्रस ऑक्साइड और कार्बन डाइऑक्साइड के उत्सर्जन शामिल है। एक तिहाई कार्बन डाईऑक्साइड कृषि में भूमि उपयोग के बदलाव से आती है, ग्लोबल वार्मिंग कार्बन डाईऑक्साइड की अपेक्षा मीथेन से 21 गुना और नाइट्रस ऑक्साइड से 300 गुना होती है। ऐसी स्थिति में प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण एवं सतत् प्रयोग का काफी महत्त्व है। जलवायु परिवर्तन के परिदृश्य में, सतत् कृषि उत्पादन के लिए टिकाऊ कृषि प्रणालियों के अंगीकरण की आवश्कता है। विश्व खाद्य संगठन ने वर्ष 2016 के लिए एक संदेश जारी किया था "जलवायु परिवर्तन के साथ कृषि में बदलाव जरुरी है"। आज जलवायु परिवर्तन को देखते हुए प्राकृतिक संसाधनों का अधिक कुशलता से उपयोग करने तथा पर्यावरण के अनुकूल खेती के उपायों को अपनाने की आवश्कता है। जरूरत है खेती की पारंपरिक व आधुनिक तकनीकों के आपसी तालमेल से खेती करने की, जिससे प्राकृतिक एवं अप्राकृतिक संसाधनों का समुचित एवं न्यायसंगत प्रयोग कर उत्पादन प्रणाली को टिकाऊ बनाया जा सके। अतः हमें जैविक खेती करने की तकनीकियों पर अधिक से अधिक जोर देना चाहिए ।

जैविक खेती प्रणालीः जैविक खेती एक ऐसी कृषि प्रणाली है, जिसमें रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों और खरपतवारनाशकों के स्थान पर जीवांश खाद जैसे गोबर की खाद, कम्पोस्ट, जीवाणु खाद, हरी खाद, फसल अवशेष आदि का उपयोग किया जाता है, जिससे मृदा की उर्वराशक्ति बनी रहती है तथा फसल उत्पादन भी ज्यादा होता है। आज पूरे विश्व में जैविक खेती को रासायनिक खेती का विकल्प माना जा रहा है। साठ के दशक में हरित क्रांति के फलस्वरूप अन्न उत्पादन में देश आत्मनिर्भर हुआ परन्तु इसके दुष्परिणाम भी सामने आये जैसे मृदा में कार्बनिक पदार्थों की मात्रा में कमी, मृदा क्षारीयता, मृदा उर्वरता में गिरावट, रसायनों के अवशेष के फलस्वरूप मृदा, जल एवं वायु प्रदूषण तथा मानव स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव। इन सभी समस्याओं का जैविक खेती एक अच्छा विकल्प है। जैविक खेती पोषक तत्वों के शोषण को कम करती है और मृदा में जैविक पदार्थों को बढ़ाती है। परिणामस्वरूप जैविक खेती में जल को अवशोषित करने और भण्डारण करने के लिये पारम्परिक कृषि

राइजोबियम के नोडूल्स

की अपेक्षा अधिक शक्ति होती है। इसलिये प्रतिकूल मौसम परिस्थितियों जैसे सूखा, बाढ़ आदि में भी पैदावार की हानि कम होती है और किसानों को जलवायु परिवर्तन एवं इसकी अस्थिरता के प्रति असुरक्षित होने की दर को कम करती है। जैविक कृषि के अन्तर्गत विविध कृषि प्रणालियाँ आती है जिससे जलवायु परिवर्तन और इसकी अस्थिरता जैसे वर्षा के प्रतिमान में बदलाव आदि के प्रतिकूल प्रभावों का सामना किया जा सकता है। जैविक खेती में लागत कम आती है। अतः जोखिम कम होता है। प्रतिकूल मौसम की दशा में फसल की पैदावार कम होने पर भी किसानों को भारी क्षति नहीं होती है। इसके अलावा जैविक खेती कार्बन डाईऑक्साइड को मृदा में अवशोषित कराने में भी सहायता करती है। जैविक खेती में सूक्ष्मजीवों का एक महत्वपूर्ण स्थान है ।

जलवायु परिवर्तन तथा सूक्ष्मजीवः कृषि के क्षेत्र में लाभकारी सूक्ष्मजीवों की जलवायु परिवर्तन के दौर में एक महत्वपूर्ण वैकल्पिक तकनीक के रूप में भूमिका रहेगी। जलवायु परिवर्तन के प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रभावों से विभिन्न अजैविक तनाव उत्पन्न हो रहे हैं जिससे फसल प्रभावित हो रही है और

उत्पादकता में कमी आ रही है। सूक्ष्मजीवों तथा जैविक एवं अजैविक कारकों के बीच परस्पर जटिल क्रिया होती है और उनमें जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को कम करने की क्षमता है। हाल के अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि "वनस्पति– सूक्ष्मजीव–मिट्टी" के बीच एक त्रिकोणीय परस्पर क्रिया होती है जो तरह–तरह के तनाव को कम करने में सक्षम है। सूक्ष्मजीव विभिन्न प्रकार के तनावों के विरुद्ध, पौधों की सहनशीलता बढ़ाने में मदद करते हैं और साथ ही पौधों के विकास को बढ़ाने में सक्षम है। जिन सूक्ष्मजीवों में पौधों के विकास को बढ़ाने की क्षमता है उनको "प्लांट ग्रोथ प्रमोटिंग राइजोबैक्टीरिया" कहते हैं। ये सूक्ष्मजीव पौधों की जड़ों के आस–पास पाए जाते हैं तथा पौधों के लिए अत्यंत लाभकारी है। प्लांट ग्रोथ प्रमोटिंग राइजोबैक्टीरिया पौधों में ऐसे रासानायिक तथा भौतिक परिवर्तन लाते हैं जिसके परिणामस्वरुप पौधे अजैविक तनावों से प्रतिरक्षित हो जाते हैं। जलवायु परिवर्तन के परिदृश्य में सूक्ष्मजीवों की भूमिका निम्न है :

- कार्बनिक पदार्थों को गलाने में सहयोग करता है, कार्बनिक पदार्थ के स्तर को बनाए रखता है जिससे मिट्टी की गुणवत्ता बढ़ जाती है और उर्वरता बनी रहती है।
- उच्च तापमान, सूखा, नमक और भारी धातुओं से उत्पन होने वाले तनावों से फसलों को अधिक सहिष्णु बनाते हैं।
- बायोफिल्म बना कर, भूमि की जल धारण क्षमता को बढ़ाते हैं।
- कीटों और रोगजनकों की आबादी पर नियंत्रण करते हैं, साथ ही फसल की रोग प्रतिरोधी क्षमता को बढ़ाते हैं।
- रसायनों के अवशेष को अपने भोजन के रूप में उपयोग करके उनको तोड़ कर विषमुक्त करते हैं।
- ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को कम करने की क्षमता है, अतः पर्यावरण को लाभ पहुँचाते हैं।

जीवाणु खादः भूमि की उर्वरता को सुदृढ़ बनाए रखते हुए सतत फसल उत्पादन के लिए कृषि वैज्ञानिकों ने प्रकृति में मौजूद सूक्ष्मजीव जिनको "प्लांट ग्रोथ प्रमोटिंग राइजोबैक्टीरिया" कहते हैं, की खोज कर उनको पर्यावरण हितैषी उर्वरक के रूप में तैयार किया है। पर्यावरण हितैषी सूक्ष्मजीव उर्वरक को "जीवाणु खाद" कहते हैं। जीवाणु खाद के सूक्ष्मजीव, वायुमण्डल में मौजूद नाइट्रोजन पौधों को (अमोनिया के रूप में) सुगमता से उपलब्ध करता है तथा भूमि में उपस्थित अघुलनशील फास्फोरस आदि पोषक तत्व को घुलनशील बना कर पौधों को आसानी से उपलब्ध करता है। चूंकि जीवाणु प्राकृतिक है, इसलिए इनके प्रयोग से भूमि की उर्वराशक्ति बढ़ती है और पर्यावरण पर भी नकारात्मक असर नहीं होता। जीवाणु खाद का प्रभाव धीरे–धीरे होता है। ये सूक्ष्मजीव निम्न प्रकार के हैं।

राइजोबियम : राइजोबियम, एक मिट्टी में पाया जाने वाला बैक्टीरिया है जो दलहनी फसलों की जड़ों में सहजीवी रूप से गुलाबी रंग की गाँठे बनाकर उनमें रहते हैं तथा वायुमण्डल से नाइट्रोजन लेकर पौधों को उपलब्ध कराते हैं। इसके द्वारा मिट्टी में स्थिर की गई नाइट्रोजन की मात्रा जीवाणु का प्रकार, पौधे की किस्म, मिट्टी के गुण, वातावरण एवं शस्य क्रियाओं पर निर्भर करती है, इसके द्वारा मिट्टी में स्थिर की गई नाइट्रोजन कार्बनिक अवस्था में होती है, उसका दुष्प्रभाव बहुत कम होता है एवं पौधे अधिक कुशलतापूर्वक इसका उपयोग कर पाते हैं। यह जैव उर्वरक केवल दलहनी फसलों में ही प्रयोग होता है तथा ये फसल विशिष्ट होता है अर्थात भिन्न–भिन्न फसल के लिए अलग–अलग प्रकार के राइजोबियम की प्रजातियों का प्रयोग होता है। राइजोबियम से बीज उपचार करने पर ये जीवाणु जड़मूल रोम द्वारा पौधों की जड़ो में प्रवेश कर जड़ों पर ग्रन्थियों का निर्माण करते हैं। अधिक ग्रन्थियां होने पर पैदावार भी अधिक

होती है। राइजोबियम जीवाणु कुछ हार्मोन जैसे इण्डोल एसिटिक एसिड़, ऑक्जिन्स, जिब्रेलिक एसिड़ तथा विटामिन्स भी बनाते हैं, जिससे पौधों की पैदावार अच्छी होती है तथा जड़ों का भी विकास होता है। इसके प्रयोग से 10–30 कि.ग्रा. रासायनिक नत्रजन की बचत होती है।

एजोटोबैक्टर : यह जीवाणु खाद गैर दलहन फसलों में उपयोग की जाती है। यह बैक्टीरिया जमीन में स्वतंत्र रूप से रहकर हवा की नाइट्रोजन को ग्रहण कर पौधों को उपलब्ध कराता है। मिट्टी में इनकी संख्या में बढ़ोतरी मिट्टी में पाये जाने वाले कार्बनिक कार्बन पर निर्भर करती है। यह फसल की उत्पादकता बढ़ाते हैं। ये सूक्ष्म आवश्यक पोषक तत्वों जैसे जिंक, तांबा, सल्फर, लौहा, बोरोन, कोबाल्ट व मोलिब्डेनम इत्यादि पौधों को प्रदान करते हैं। मृदा में पनप रहे रोगजनक फफूंद नष्ट करते हैं। एजोटोबैक्टर सभी गैर दलहनी फसलों में प्रयोग किया जा सकता है।

फॉस्फेट घोलक जीवाणु (पी.एस.बी.) : फसलों को फॉस्फोरस की उपलब्धता बढ़ाने के लिए डी.ए.पी. एवं सिंगल सुपर फॉस्फेट का प्रयोग किया जाता है, जिनका एक बहुत बड़ा भाग जमीन में अघुलनशील रह जाता है जिसे पौधे आसानी से ग्रहण नहीं कर पाते। पी.एस.बी., अघुलनशील फॉस्फोरस को घुलनशील बनाकर पौधों को उपलब्ध कराता है। इसके उपचार से लगभग 25 से 30 किलोग्राम प्रति हैक्टर फॉस्फोरस युक्त रासायनिक उर्वरक की बचत होती है तथा विभिन्न फसलों के उत्पादन में 15 से 30 प्रतिशत तक अतिरिक्त वृद्धि होती है। भूमि में कई प्रकार के सूक्ष्मजीव पाये जाते हैं, जिसमें स्यूडोमोनास, बैसिलस बैक्टीरिया समूह में आते हैं तथा पेनीसिलीयम, ट्रायकोडर्मा और एस्परजिलस, कवक श्रेणी में आते हैं। इन दोनों समूहों के सूक्ष्मजीव अनुपलब्ध व अघुलनशील फॉस्फेट को घुलनशील फॉस्फेट में बदलकर पौधों को उपलब्ध कराने की क्षमता रखते हैं। भूमि में ये जीवाणु साधारणतया उचित वातावरण मिलने पर सेंद्रीय पदार्थ (कार्बनिक) के अपचयन क्रिया के फलस्वरूप कार्बनिक अम्ल जैसे आक्जेलिक, लेक्टीक, मेलिक, साइट्रिक, टारटेरिक आदि प्रकार के अम्ल स्रावित करते हैं। सूक्ष्मजीवाणुओं का यही गुण अघुलनशील और अनुपलब्ध फॉस्फेट तत्व को घुलनशील तत्व में बदलकर पौधों को उपलब्ध कराने में मदद करता है। स्फूर घोलक ये जीवाणु रॉक फॉस्फेट व ट्राइकैल्शियम फॉस्फेट जैसे अघुलनशील स्फूरधारित उर्वरक के कणों को सूक्ष्म आकार में बदलकर घुलनशील बना पौधों को पोषक तत्व के रूप में उपलब्ध करा देता है।

एजोस्पीरिलम : एजोस्पीरिलम मिट्टी में पौधों के जड़क्षेत्र में स्वतंत्र रूप से रहने वाला सूक्ष्मजीव है जो वायुमंडल की नाइट्रोजन का स्थिरीकरण कर पौधों को उपलब्ध कराते हैं। यह जीवाणु खाद, धान, मोटे अनाज तथा गन्ने की फसल के लिए लाभकारी है तथा गेहूँ व जौ के लिए भी उपयोगी है। इसके उपयोग से फसल के उत्पादन में 10–12 प्रतिशत बढ़ोत्तरी होती है तथा 15 से 20 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर नाइट्रोजन की बचत होती है।

नील हरित शैवाल : ये शैवाल मिट्टी में सूखी पपड़ी के टुकड़ों के रूप में दिखते है, यह वायुमंडलीय नाइट्रोजन यौगिकीकरण कर, धान की फसल को आंशिक मात्रा में नाइट्रोजन पूर्ति करता है अतः पानी से भरे हुए धान के खेत के लिए विशिष्ट लाभकारी होते हैं। ये 20–30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हैक्टर उपलब्ध कराते हैं तथा फसल की 10–15 प्रतिशत उपज में बढ़ोतरी करते हैं।

ट्राइकोडर्मा : ट्राइकोडर्मा एक प्रकार का फफूंद है जो रोगजनक फफूंद से होने वाली मृदाजनित बीमारियों का नियंत्रण करता है, इसके साथ ही जड़ों में नुकसान पहुँचाने वाले सूत्रकृमि को भी

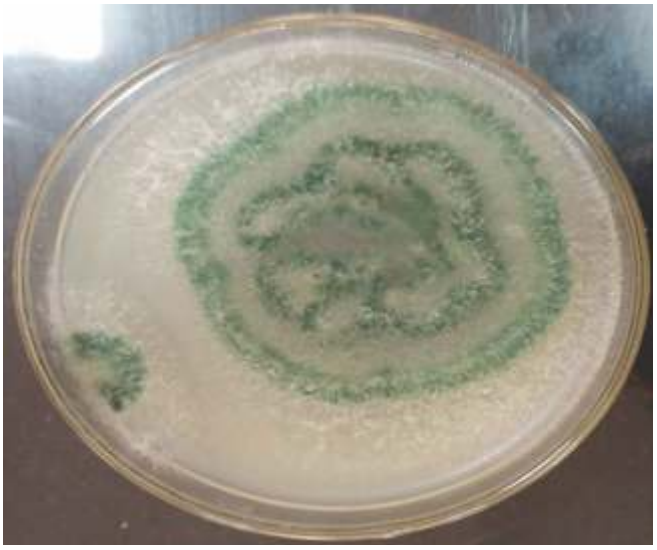

ट्राइकोडर्मा की कॉलोनी

नष्ट करता है। ट्राइकोडर्मा की विभिन्न प्रजातियों जैसे ट्राइकोडर्मा हरजीनियम एवं विरिडी रोगों का नियंत्रण प्रभावशाली रूप से करती है। ये विभिन्न बीमारियों जैसे बीज सड़न, आर्द्रगलन, मूल विगलन, अंगमारी एवं म्लानि रोग का नियंत्रण करती है। रोग नियंत्रण के साथ ही ये फसल की रोग प्रतिरोधी क्षमता को बढ़ाता है तथा जड़ों के विकास में मदद करता है। साथ ही कार्बनिक पदार्थों को कम्पोस्ट में बदलने में भी सहयोग करता है।

स्यूडोमोनास फ्लुरोसेन्स : यह एक रॉड के आकार का बैक्टीरिया है जो स्वतंत्र रूप से मृदा में पाया जाता है। यह पौधों को विभिन्न प्रकार की बीमारियों से बचाता है तथा पौधों में ऐसे रासानायिक तथा भौतिक परिवर्तन लाता है जिसके परिणामस्वरुप पौधे अजैविक तनावों से प्रतिरक्षित हो जाते हैं। यह फॉस्फोरस को घुलनशील बना कर पौधों को उपलब्ध कराता है।

माइकोराइजा : माइकोराइजा, कवक तथा वाहक पादपों की जड़ों के बीच परस्पर सहजीवी सम्बन्ध को कहते हैं। इस प्रकार के सहजीवी सम्बन्ध में कवक, पौधे की जड़ों पर आश्रित होते हैं तथा ये पौधों के लिए फॉस्फेट को घुलनशील बना कर उसकी आपूर्ति करते हैं। ये पौधों की जड़ों की गहराई तक प्रवेश कर लेते हैं तथा उसकी सतह पर भी रहते हैं और मृदाजनित बीमारियों से रक्षा करते है। सूखा, नमक और भारी धातुओं के लिए पौधों को अधिक सहिष्णु बनाते हैं।

जीवाणु खाद की उपचार विधि

जीवाणु खाद को चार विभिन्न तरीकों से खेती में प्रयोग किया जाता है

बीज उपचार विधि – यह जीवाणु खाद को प्रयोग करने की सर्वोत्तम विधि है। 1 लीटर पानी में लगभग 50 ग्राम गुड़ या गोंद के साथ 250 ग्राम जीवाणु खाद अच्छी तरह मिलाकर घोल बना लेते हैं। इस घोल को 10 कि.ग्रा. बीज पर छिड़क कर अच्छी तरह मिला लेते हैं जिससे प्रत्येक बीज पर इसकी परत चढ़ जाए। इसके बाद बीजों को छाया में सुखा लेते हैं। उपचारित बीजों को सूखने के तुरन्त बाद बुवाई कर देनी चाहिए।

पौध जड़ उपचार विधि – धान तथा सब्जी वाली फसलें जिनके पौधों की रोपाई की जाती है, उनकी जड़ों को जीवाणु खाद द्वारा उपचारित किया जाता है। इसके लिए किसी चौड़े व छिछले बर्तन में 250 ग्राम गुड़ तथा 5–7 लीटर गर्म पानी को मिलाकर घोल बना लेते हैं, उसमें एक कि.ग्रा. एजोटोबैक्टर व एक कि.ग्रा. पीएसबी मिला लेते हैं। इसके उपरांत नर्सरी से पौधों को उखाड़कर जड़ों की मिट्टी साफ करने के बाद 50–100 पौधों को बंडल में बांधकर जीवाणु खाद के घोल में 10 मिनट तक डुबो देते हैं, इसके तुरंत बाद रोपाई कर देते हैं।

कन्द उपचार – गन्ना, आलू, अदरक आदि फसलों में जैव उर्वरकों के प्रयोग हेतु कन्दों को उपचारित किया जाता है। एक कि.ग्रा. एजोटोबैक्टर व एक कि.ग्रा. पीएसबी जीवाणु खाद को 20–30 लीटर पानी में मिला लेते हैं। इसके उपरान्त कन्दों को 10 मिनट तक डुबो देते हैं, इसके तुरंत बाद रोपाई कर देते हैं।

मिट्टी उपचार विधि – 5–10 कि.ग्रा. जीवाणु खाद (एजोटोबैक्टर व पीएसबी आधा–आधा) 70–100 कि.ग्रा. मिट्टी या कम्पोस्ट को मिलाकर रात भर छोड़ दें और अंतिम जुताई पर खेत में मिला देते हैं।

जीवाणु खाद के उपयोग से लाभ

- जीवाणु फसलों की पोषक तत्वों की जरूरत को पूरी कर उत्पादन व उत्पादकता बढ़ाते हैं।
- सूक्ष्म जीवाणु मिट्टी में मौजूद फॉस्फोरस को घुलनशील बनाकर पौधों के लिए इसकी उपलब्धता बढ़ाते हैं।
- सूक्ष्म जीवाणु कुछ मात्रा में सूक्ष्म आवश्यक पोषक तत्वों जैसे जिंक, तांबा, सल्फर, लौहा, बोरोन, कोबाल्ट व मोलिब्डेनम इत्यादि पौधों को प्रदान करते हैं।
- सूक्ष्म जीवाणु खेती में बचे हुए कार्बनिक अपशिष्टों को सड़ाकर मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ की उचित मात्रा बनाये रखते हैं।
- सूक्ष्म जीवाणु पादप वृद्धि करने वाले हारमोन, प्रोटीन, विटामिन एवं अमीनो एसिड़ का उत्पादन करते हैं।
- सूक्ष्म जीवाणु मिट्टी में पनप रही रोगजनक फफूंद नष्ट कर लाभकारी जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि करते हैं।
- जीवाणुओं के प्रयोग से लगभग 15–30 प्रतिशत

फसलोत्पादन बढ़ता है और उत्पाद की गुणवत्ता बहुत अच्छी रहती है।

- सूक्ष्म जीवाणुओं के प्रयोग से मिट्टी की जलधारण शक्ति व उर्वराशक्ति बढ़ती है जिससे फसलोत्पादन बढ़ता है।
- इनके प्रयोग से उपज में लगभग 10–15 प्रतिशत की वृद्धि होती है।
- इनके प्रयोग से अंकुरण शीघ्र होता है तथा कल्लों की संख्या में वृद्धि होती है।
- इनके प्रयोग से मिट्टी के भौतिक एवं रासायनिक गुणों में सुधार होता है।
- इनके प्रयोग से अच्छी उपज के अतिरिक्त गन्ने में शर्करा की, मक्का व आलू में स्टार्च तथा तिलहनों में तेल की मात्रा में वृद्धि होती है।

जलवायु परिवर्तन के विपरीत प्रभावों से भारतीय कृषि को समगतिशील बनाने के लिए हमें अपने संसाधनों का न्यायसंगत उपयोग करना होगा तथा खेती में ऐसे पर्यावरण मित्र तरीकों जैसे जैविक खाद को अहमियत देनी होगी, जिनसे मृदा की उत्पादकता को बरकरार रखा जा सके व प्राकृतिक संसाधनों को बचाया जा सके।

समाप्त

यदि आप इस बात की चिंता न करें कि आपके काम का श्रेय किसे मिलने वाला है तो आप आश्चर्यजनक कार्य कर सकते हैं।

नगरपालिका ठोस अपशिष्ट प्रबंधन : एक चुनौती

पारुल सुन्धा, निर्मलेन्दू बसक, प्रियंका चन्द्रा, गजेन्द्र, रमा पाल[1] एवं अरविन्द कुमार राय

भाकृअनुप–केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा)
[1]भाकृअनुप–भारतीय मृदा एवं जल संरक्षण संस्थान, अनुसंधान केन्द्र, आगरा (उत्तर प्रदेश)
E-mail: parul.sundha@icar.gov.in

नगरपालिका ठोस अपशिष्ट, जिसे शहरी ठोस अपशिष्ट भी कहा जाता है, इसमें मुख्य रूप से घर का कचरा (घरेलू अपशिष्ट) एवं अन्य अनुपयोगी वस्तुएं शामिल होती है। इसे एकत्रित करने का कार्य मुख्य रूप से नगरपालिका द्वारा किया जाता है। परन्तु शहरीकरण की बढती गति के साथ आज कचरा प्रबंधन शहरी जीवन के लिए एक बहुत बड़ी और विकराल चुनौती बन चुका है। कचरे के ढेर इकट्ठा करके सार्वजनिक स्थानों पर डाल दिये जाते हैं और उनको उठाने की कोई व्यवस्था नहीं होती है। अतः नगर प्रबंधन के जिन उद्देश्यों को प्राप्त करना अत्यंत ही जरूरी है, उनमें से एक है – 'कचरा प्रबंधन'। बिना जन सहयोग, जन प्रशिक्षण और सरकारी सक्रियता के कचरा प्रबंधन संभव नहीं है। जिन स्थानों पर आपसी समन्वय हुआ है, वहाँ स्थितियां बदली है और जिंदगी में सुधार हुआ है। यह अति आवश्यक है कि प्रत्येक व्यक्ति को स्वच्छ, स्वास्थ्यपूर्ण सुविधायुक्त अच्छा वातावरण मिले। इसके लिए हमें रास्ते भी खोजने होंगे। कचरे का आयतन कम करने के लिए विभिन्न तरीकों का इस्तेमाल किया जाता है, इसी प्रक्रिया में कचरा खाली स्थान पर फेंकना, जलाना आदि सम्मिलित है, जोकि पर्यावरण और स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से स्वीकार्य नहीं है। कचरा डालने के लिए स्थल का अभाव विश्व के अनेक नगरों और कस्बों में गंभीर समस्या बन चुका है। इसलिए यह आवश्यक है कि इस साझे उद्देश्य की पूर्ति के लिए संग्रह, शोध, संसाधनों का पुनर्चालन और अंतिम निबटारे की विधियों में समन्वय हो। जरूरत है राजनीतिक और प्रशासनिक प्रतिबद्धता की, समस्याओं को समझने की और निर्णयों को साकार करने की।

अपशिष्ट उत्पादन

अपशिष्ट उत्पादन में शामिल गतिविधियों में घरों का कचरा तथा मूल्यहीन सामग्रियों को या तो बाहर फेंक दिया जाता है या निपटान के लिए एकत्रित किया जाता है। वर्तमान में उपलब्ध जानकारी के अनुसार देशभर में प्रतिवर्ष 62 मिलियन टन कचरा उत्पन्न होता है, जिसमें से 5.6 मिलियन टन प्लास्टिक कचरा, 0.17 मिलियन टन जैव चिकित्सा अपशिष्ट, 7.90 मिलियन टन खतरनाक अपशिष्ट और 15 लाख टन ई–कचरा है। भारतीय शहरों में प्रति व्यक्ति लगभग 200 ग्राम से लेकर 600 ग्राम तक कचरा प्रति दिन उत्पन्न होता है। शोध से यह तथ्य रेखांकित किये गए हैं कि प्रति वर्ष 43 मिलियन टन कचरा एकत्र किया जाता है, जिसमें से मात्र 11.9 मिलियन टन संशोधित किया जाता है और 31 मिलियन टन कचरे को भराव क्षेत्रों (लैंडफिल साइट) में फेंक दिया जाता है। इसका मतलब यही है कि नगर निगम अपशिष्ट का केवल 75–80 प्रतिशत ही एकत्र किया जाता है और इस कचरे का केवल 22–28 प्रतिशत संसाधित किया जाता है। भविष्य में उत्पन्न होने वाले कचरे की मात्रा मौजूदा 62 लाख टन से बढ़कर वर्ष 2030 में लगभग 165 मिलियन टन के स्तर पर पहुंच जाएगी।

ठोस अपशिष्ट (कचरा) अनेक प्रकार का होता है। ठोस अपशिष्टों के प्रबंध की चुनौतियों को कारगर ढंग से हल करने के लिए कचरे का वर्गीकरण आवश्यक है।

– खाद्य अपशिष्ट (नम कचरा) : भोजन और रसोई का कचरा, हरित कचरा आदि जिसे पुनःनवीनीकरण नहीं किया जा सकता है।

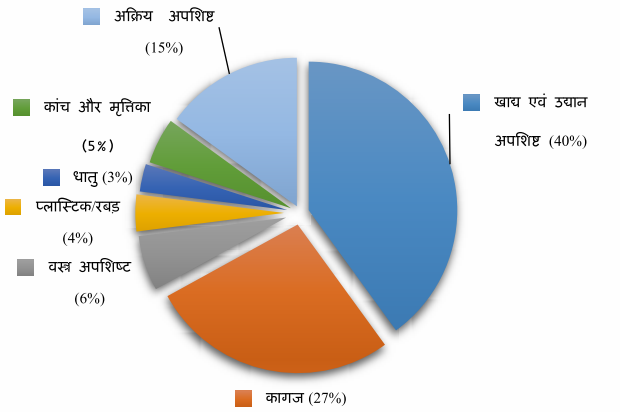

- पुनःनवीनीकरण योग्य सामग्रीः कागज, कांच, बोतल, डिब्बे, धातु, प्लास्टिक आदि।
- अक्रिय कचराः निर्माण और विध्वंस कचरा, पत्थर, मलबा।
- मिश्रित अपशिष्ट, बेकार कपड़े, टेट्रा पैक, बेकार प्लास्टिक जैसे खिलौने।
- घरेलू खतरनाक अपशिष्ट और विषाक्त अपशिष्ट : दवाएं, ई–कचरा, पेंट, रसायन, प्रकाश बल्ब, फ्लोरोसेंट ट्यूब, स्प्रे कैन, उर्वरक और कीटनाशक कंटेनर, बैटरी, जूता पॉलिश आदि।

अपशिष्ट प्रबंधन के प्रमुख घटक

1) स्रोत पर कमीः अपशिष्ट में कमी लाने के लिए कम सामग्री का उपयोग, यथास्थल उत्पादों का पुनरुपयोग, मात्रा घटाने के लिए उत्पादों या पैकेज की रूपरेखा में तब्दीली इसके ढंग हैं। व्यक्तिगत स्तर पर हम खरीददारी में अनावश्यक वस्तुओं का उपयोग घटा सकते हैं, कम से कम पैकेजिंग में वस्तुओं की खरीदारी कर सकते हैं और प्लास्टिक के थैलों के प्रयोग में कमी ला सकते हैं ।

2) अपशिष्ट एकत्रीकरण और पृथक्करणः कचरा एकत्रीकरण और पृथक्करण अत्यधिक महत्वपूर्ण गतिविधियां हैं, जिसमें स्थानीय नागरिक अपना योगदान दे सकते हैं। स्रोत पर ठोस कचरे के निपटान और भंडारण में अपशिष्ट घटकों का पृथक्करण एक महत्वपूर्ण कदम है। एकत्रीकरण के कार्यात्मक तत्व में न केवल ठोस अपशिष्ट और पुनःनवीनीकरण योग्य सामग्री का एकत्र करना शामिल है, बल्कि एकत्रित करने के बाद इन सामग्रियों का उस स्थान तक परिवहन भी शामिल है जहाँ वाहन को खाली कर दिया जाता है। आज अपशिष्ट एकत्रीकरण और पृथक्करण में पूंजी का बड़ा हिस्सा निवेश किया जाता है। अगर पृथक्करण प्रक्रिया को स्रोत स्थल पर ही पूर्ण किया जाए तो अपशिष्ट प्रबंधन सरल हो सकता है।

3) पुनर्चालन एवं प्रसंस्करणः कचरे के उन अंशों का पुनः उपयोग जिनका कुछ आर्थिक मूल्य हो। पुनर्चालन के स्पष्ट लाभ होते हैं, जैसे संसाधनों का संरक्षण, उत्पादन में ऊर्जा के उपयोग में कमी और प्रदूषण के स्तर में कमी। एल्युमिनियम और इस्पात, धातु, कागज, काँच और प्लास्टिक जैसी वस्तुओं का अनेक बार पुनर्चालन संभव है।

चित्रः अपशिष्ट प्रबंधन के आयाम

4) अपशिष्ट स्थानांतरण एवं रूपांतरणः इस प्रक्रिया में दो चरण शामिल है, छोटे संग्रह वाहनों से घर–घर से कचरा एकत्र करके बड़े परिवहन उपकरण में स्थानांतरण कर खाद इकाई तक ले जाया जाता है तथा विभिन्न उपकरणों की सहायता से अपशिष्ट का रूपांतरण कर खाद बनाई जाती है। आज देश के बहुत से शहरों में खाद इकाई स्थापित की गयी है ताकि कृषि में इसका जैविक खाद के रूप में इस्तेमाल हो सके।

5) निबटानः अपशिष्ट का निबटान अधिकांशतः सफाईयुक्त भूभराव या दहन के द्वारा किया जाता है। अनेक बार अपशिष्ट को बंजर जमीन पर भी डाल दिया जाता है जोकि सार्वजनिक स्वास्थ्य या सुरक्षा को खतरा उत्पन्न कर सकता है। जैसे कि कीड़े के प्रजनन और भूजल का संदूषण आदि। पृथक्करण के उपरान्त भूमि में गड्ढा खोदकर उसमें कचरा दबा देना पर्यावरण की दृष्टि से स्वीकार्य है।

6) ऊर्जा उत्पादनः नगरपालिका ठोस अपशिष्ट का इस्तेमाल ऊर्जा उत्पन्न करने के लिए भी किया जा सकता है। आधुनिक युग में कई ऐसी तकनीकों का विकास किया गया है जो पहले से अधिक स्वच्छ और अधिक किफायती ऊर्जा उत्पादन के लिए अपशिष्ट का प्रसंस्करण करते हैं, जिसमें शामिल हैं, लैंड फिल, गैस अवशोषण, दहन, पाइरोलिसिस, गैसीकरण और प्लाज्मा चाप गैसीकरण आदि। सरकार की भी इस तरफ विशेष रूचि है और इसके प्रोत्साहन के लिए परियोजनाएं भी प्रारंभ की गयी है।

अपशिष्ट नियंत्रण में चुनौतियां एवं बाधाएं

अपशिष्ट के बढ़ते उत्पादन के कारण नगरपालिकायें इसके

प्रबंधन की समस्या से प्रतिदिन जूझती है, अतः इसका निपटारा व्यवस्थित तरीके से नहीं हो पाता है। ठोस अपशिष्ट में कुछ विषैले पदार्थ भी पाए जाते हैं जो बहुत कम या सूक्ष्म मात्रा में भी तीव्र या तत्काल प्रभाव डालते है, तथा मृत्यु या भयानक रोगों का कारण बन सकते हैं। कुछ विषैले अपशिष्ट कैंसर जनक एवं विकार जनक होते हैं। अधिकांश घातक अपशिष्टों का भूमि पर या भूमिगत निबटारा किया जाता है जिससे भूमिगत जल का प्रदूषण गंभीर समस्या बन रहा है। कृषि में कीटनाशकों के अत्यधिक उपयोग से अवशिष्ट कीटनाशक मिट्टी में बचे रहते हैं और कुछ बहकर नालों में, या झीलों और नदियों की तलहटी में एकत्र हो जाते हैं और इनसे संपर्क से तीव्र या दीर्घकालिक विषाक्तता पैदा होती है। सीसा, पारा, आर्सेनिक, क्रोमियम और कैडमियम घातक पदार्थ हैं जिन्हें भारी धातु कहा जाता है। यह मनुष्य के शरीर में संकेंद्रित होकर इंसानों में बहरापन, दृष्टि संबंधी समस्याएँ, रक्तप्रवाह संबंधी दोष और हड्डियों में विकृतियाँ पैदा करते हैं।

अपशिष्ट प्रबंधन प्रणालियाँः सरकार के प्रयास

स्वच्छ भारत अभियान

यह भारत सरकार द्वारा आरम्भ किया गया राष्ट्रीय स्तर का अभियान है, जिसका उद्देश्य गलियों, सड़कों तथा अधोसंरचना को साफ–सुथरा रखना है। स्वच्छ भारत अभियान को स्वच्छ भारत मिशन और स्वच्छता अभियान भी कहा जाता है। इस अभियान में शौचालयों का निर्माण, ग्रामीण क्षेत्रों में स्वच्छता कार्यक्रमों को बढ़ावा देना, गलियों व सड़कों की सफाई, देश के बुनियादी ढांचे को बदलना आदि शामिल है। यह अभियान 2014 में महात्मा गाँधी के जन्मदिवस 02 अक्टूबर पर आरम्भ किया गया। इस अभियान को सफल बनाने के लिए विश्व स्तर पर लोगों ने पहल की है। शिक्षक और स्कूल के छात्र इसमें पूर्ण उत्साह और उल्लास के साथ शामिल हो रहे हैं और स्वच्छ भारत अभियान को सफल बनाने का प्रयास कर रहे हैं।

कचरा प्रबंधनः वेब आधारित एप्लीकेशन

सरकार ने कचरा प्रबंधन के महत्व को समझते हुए कचरा प्रबंधन प्रणाली (आईडब्ल्यूएमएस) पर एक वेब आधारित एप्लीकेशन www.iwms.nic.in को लॉन्च किया है। पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय के नियमों के अनुसार हानिकारक कचरे से वास्ता रखने वाले सभी उद्योगों को ऑनलाइन आवेदन करने का अवसर प्रदान करेगा ताकि इससे हानिकारक कचरे की आवाजाही पर नजर रखी जा सके जिससे प्रबंधन में भी मदद मिलेगी।

ठोस कचरा प्रबंधन के नियम (संशोधित) 2016

पर्यावरण मंत्रालय ने 16 साल बाद ठोस कचरा प्रबंधन के नियमों को संशोधित किया है। संशोधित नियम नगर निगम के क्षेत्रों के साथ–साथ, जनगणना वाले कस्बों, अधिसूचित औद्योगिक टाउनशिप, भारतीय रेल के नियंत्रण वाले क्षेत्रों, हवाई अड्डों, एयर बेस, बंदरगाह, रक्षा प्रतिष्ठानों, विशेष आर्थिक क्षेत्र, केंद्र एवं राज्य सरकारों के संगठनों, तीर्थ स्थलों और धार्मिक एवं ऐतिहासिक महत्व के स्थानों पर भी लागू किये गये हैं। सरकार ने इन नियमों के समग्र कार्यान्वयन की निगरानी करने के लिए पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय की मदद से केन्द्रीय निगरानी समिति का गठन भी किया है।

नगरीय और औद्योगिक अपशिष्ट के नियंत्रण के उपाय

- प्रबंधन के नियमों का पालन हर व्यक्ति अपने स्तर पर लागू करे । निजी स्तर पर कचरे को सावधानी से तैयार किए गए एक गड्ढे में खाद बना सकते हैं।
- अपशिष्ट का एकत्रीकरण और पृथक्करण सुनियोजित ढंग से हो ताकि इसके निस्तारण में बाधाएं न आयें। इसके लिए भिन्न–भिन्न रंग संकेत के कूड़ादान का प्रयोग कर सकते हैं।
- कोई भी व्यक्ति अपने द्वारा उत्पन्न ठोस कचरे को अपने परिसर के बाहर सड़कों, खुले सार्वजनिक स्थलों पर, या नाली में, या जलीय क्षेत्रों में न तो फेंके न जलाएं।
- ठोस कचरा उत्पन्न करने वालों को 'उपयोगकर्ता शुल्क' अदा करने का नियम बनाया जाए, जो कचरा एकत्र करने वालों को प्राप्त हो।
- निर्माण और तोड़–फोड़ से उत्पन्न होने वाले ठोस कचरे को भी यथा स्थान पर संग्रहित करने के बाद अलग से निपटाया जाना चाहिए।

नगरपालिका ठोस अपशिष्ट का मृदा उर्वरक के रूप में प्रयोग : कृषि अनुसंधान केन्द्रों की भूमिका

ठोस अपशिष्ट का मृदा में उपयोग सतत् कृषि के संदर्भ में एक बेहतर विकल्प है। इसमें करीब 0.64 प्रतिशत नत्रजन, 0.67 प्रतिशत फॉस्फोरस, 0.68 प्रतिशत पोटेशियम एवं 26 प्रतिशत

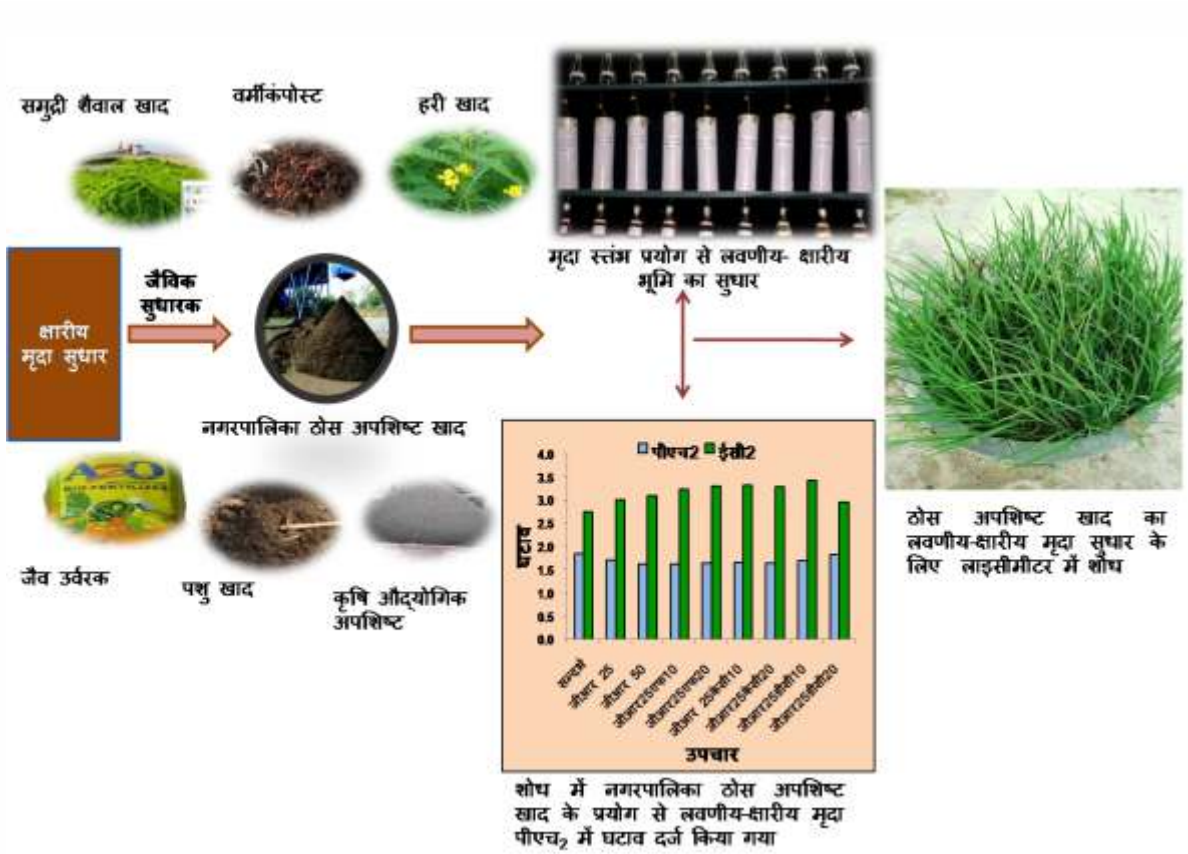

ठोस अपशिष्ट खाद का लवणीय-क्षारीय मृदा सुधार के लिए लाइसीमीटर में शोध

शोध में नगरपालिका ठोस अपशिष्ट खाद के प्रयोग से लवणीय-क्षारीय मृदा पीएच$_2$ में घटाव दर्ज किया गया

कार्बन:नत्रजन अनुपात पाया जाता है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के विभिन्न केन्द्रों पर अपशिष्ट प्रबंधन पर शोध कार्य चल रहे हैं। इसी श्रृंखला में केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल में भी नगरपालिका ठोस अपशिष्ट खाद के प्रयोग से लवणीय–क्षारीय भूमि के सुधार पर अनुसंधान चल रहा है। इस प्रकार की मृदा के सुधार के लिए जिप्सम, पशु खाद, हरी खाद, आदि का प्रयोग किया जाता है। जैव अपक्षीणन योग्य नगरपालिका ठोस अपशिष्ट अन्य विकल्प है। वर्तमान में देश में लगभग 62 मिलियन टन अपशिष्ट प्रतिवर्ष उत्पन्न होता है। इसलिए, आज यह जरूरी है कि हम लवण प्रभावित मिट्टी के सुधार के लिए एमएसडब्ल्यू खाद की संभावनाओं पर अनुसंधान करें, जिससे अपशिष्ट के प्रबंधन में भी सहायता मिलेगी। क्षारीय मृदा के सुधार में पानी की गुणवत्ता का भी महत्वपूर्ण योगदान है। अतः यह जरूरी है कि लवणीय क्षारीय भूमि की सिंचाई के समय पानी के सोडियम अधिशोषण अनुपात (एसएआर) को ध्यान में रखा जाए। उपलब्ध जानकारी के अनुसार लवण प्रभावित मिट्टी एवं खराब गुणवत्ता के पानी में भी जैविक उर्वरक अहम् भूमिका निभाते हैं। अध्ययन में पाया गया कि एमएसडब्ल्यू खाद के प्रयोग से क्षारीय मृदा के पीएच$_2$ और ईसी$_2$ दोनों में कमी दर्ज की गयी एवं यह परिणाम पानी की गुणवत्ता एसएआर 15 की तुलना में एसएआर 5 में अधिक पाया गया। संस्थान में फसलों और मृदा पर इसके प्रभाव पर शोध का कार्य अग्रसर है।

निष्कर्ष

पर्यावरण की रक्षा करना हमारा सबसे बड़ा उत्तरदायित्व है। इस दिशा में आगे बढ़ने के लिए कचरा प्रबंधन, समय की समुचित मांग है, इससे ना केवल हम अपने पर्यावरण को साफ सुथरा, बल्कि खुद को भी स्वस्थ्य रख सकते हैं। गत वर्षों में जनता में काफी जागरूकता आई है। मीडिया, समाचार पत्रों, सरकारी संस्थानों द्वारा अभियान आदि ऐसे बहुत से प्रयास किये जा रहे हैं। अपशिष्ट का रूपांतरण के लिए देश के विभिन्न क्षेत्रों में खाद इकाई स्थापित कर रोजगार का माध्यम भी विकसित किया जा सकता है। आज देश के बहुत से शहरों में जलवायु परिवर्तन में ठोस अपशिष्ट, मृदा में जैविक खाद का एक टिकाऊ और सस्ता विकल्प है। उचित पृथक्करण और वैज्ञानिक कम्पोस्टिंग तकनीक अपनाकर इसका अधिकतम लाभ ले सकते हैं।

समाप्त

जल संकट समस्या का समाधान

कवि अवध बिहारी

ग्राम–चकचपकी, डाकघर–चपकी, विकासखंड–बचनी, तहसील–दुद्धी,
जिला–सोनभद्र (उत्तर प्रदेश) मोबाईल : 9794201708
E-mail : parveencssri@gmail.com

जल ही जीवन धरा पर, है जीवों का प्राण।

कहै कवि अवधबिहारी, बिन जल नहीं कल्याण।।

सचमुच ही इस सलोनी वसुंधरा पर जल ही जीवन है, जल ही जीवधारियों के प्राणों का प्रमुख आधार है। यदि इस शस्य श्यामला धरती पर जल नहीं होता, तो जीवधारियों की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। जब से मानव प्राकृतिक स्रोतों का अंधाधुंध दोहन करता चला आ रहा है, तब से जल संकट की समस्या भयंकर विभीषिका का रूप धारण करती चली जा रही है।

कहते हैं कि अगला विश्व युद्ध पानी के लिए होगा। सुनने में यह बात बड़ी विचित्र व हास्यास्पद लगती थी, इस बात पर विश्वास ही नहीं होता था कि आखिर किस प्रकार पानी पर विश्व युद्ध संभव है। यदि यह बात तेल, भूमि, धर्म अथवा आधिपत्य जमाने की अभिलाषा पर होना संभावित होता, तो समझ में आती, परन्तु इधर अनेक वर्षों से पूरा विश्व प्रदूषित एवं समाप्त प्रायः होते जल के कारण गंभीर संकट से जूझ रहा है, तो अब यह बात अतिश्योक्ति नहीं लगती।

शुद्ध पेय जल की अल्प उपलब्धता के कारण निःशुल्क मिलने वाला जल निंरतर वृद्धि होते, मूल्यों पर उपलब्ध हो पा रहा है। अब ऐसा प्रतीत होता है कि जल आधारित यह तृतीय विश्व युद्ध आसन है। इसके प्रभाव से अपने प्रिय देश भारत को बचाने के लिए हम सबको अभी से कमर कसकर तैयार रहना पड़ेगा।

भौगोलिक दशाओं के आधार पर भारत की भूमि को निम्न प्रमुख भागों में बांटा जा सकता है–

1. पर्वतीय भूमि
2. पठारी भूमि
3. मैदानी भूमि
4. रेगिस्तानी भूमि
5. बंजर भूमि
6. ज्वारीय भूमि

जल संकट से जूझ रहे भारत के विभिन्न भू–भागों में समस्याओं के समाधान हेतु निम्न सुझाव सादर समर्पित है :

पर्वतीय भूमिः पर्वतीय भूमि सीढ़ीनुमा खेत बनाकर, हर सीढ़ीनुमा स्तर पर अधिक से अधिक पेड़ पौधे लगाने चाहिए, जिससे भूमि जलस्तर तो बढ़ेगा ही, साथ ही साथ भू–क्षरण भी रूकेगा, पर्यावरण–प्रदूषण से मुक्ति भी मिलेगी, स्वच्छ वायुमंडल का निर्माण होगा तथा अनेकानेक लाभों के साथ ही धरती हरियाली से सज उठेगी। चारों ओर का वातावरण सुखद, मनोरम और आनंदमय हो जायेगा।

पर्वतीय क्षेत्रों में पुरातन काल में तथा यदा–कदा कहीं–कहीं आज झर–झर झरते झरनों का निर्मल नीर न केवल प्राकृतिक सौन्दर्य बढ़ाते हैं, बल्कि धरा के जीवों की प्यास बुझाकर, उन्हें परम तृप्ति प्रदान करते हैं। इन झर–झर झरते झरनों के निर्मल नीर के अजस्र स्रोत है–सघन वन, हरे–हरे लहलहाते पेड़–पौधे। तो आइये हम सब यह शुभ संकल्प लेते हैं कि अधिक से अधिक पेड़–पौधे लगाकर, जल संकट के इस भीषण कहर से मानव सहित समस्त जीव–जंतुओं के जीवन को बचायें। धरती को हरा–भरा बनायें।

पठारी भूमि–अधिकांश पठारी भूमि समतल नहीं होती है अर्थात ऊंची–नीची और उबड़–खाबड़ होती है। जिसके कारण भूमि का कटाव तो होता ही है, साथ ही समतल न होने के कारण जल का जमाव नहीं होने से भूमि में निरंतर जलस्तर नीचे गिरता जा रहा है। पठारी भूमि में नीचे गिरते जलस्तर के कारण सभी जीवधारियों के जीवन को खतरा उत्पन्न हो गया है। पठारी भूमि में नीचे गिरते जलस्तर को ऊंचा उठाने के लिए खेतों में समतलीकरण की नितांत आवश्यकता है, साथ ही साथ हर खेत में मेडबंदी भी करनी चाहिए। जिससे वर्षा का जल संचय होकर, जल स्तर में बढोत्तरी कर सके।

पठारी भूमि में जगह–जगह छोटे–छोटे तालाब बनाने की भी जरूरत है। तालाबों के मेड़ों पर सघन वृक्षारोपण करना चाहिए जिससे जल संकट के साथ–साथ अन्य समस्याओं का भी समुचित समाधान हो सके।

मैदानी भूमि–सामान्य रूप से मैदानी भूमि में जल स्तर ऊंचा ही रहता है, किन्तु जल के अंधाधुध दोहन और वृक्षों की कटाई से मैदानी भूमि में भी जल स्तर निरंतर घटता जा रहा है इसका एक प्रमुख कारण बढ़ती हुई जनसंख्या भी है। बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण वनों का धरती से सफाया होता जा रहा है तथा प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन के कारण भूमिगत जल स्तर नीचे चला जा रहा है।

अतः मैदानी भूमि में गिरते जल स्तर को बचाने और ऊंचा उठाने के लिए वृक्षों के अंधाधुंध कटान को रोकना होगा, अधिक से अधिक हरे–भरे पेड़–पौधों को लगाकर धरती का श्रृंगार करना होगा, निरंतर बढ़ती हुई जनसंख्या पर नियंत्रण करना होगा तथा प्राकृतिक संसाधनों के दोहन को रोककर, उनका संरक्षण और संवर्धन करना होगा।

रेगिस्तानी भूमि (मरूभूमि)–मरूभूमि तो जल अल्पता की घोतक ही है। मरूस्थलों में वर्षा नगण्य होने के कारण जल संकट की विकराल स्थिति उत्पन्न हो गई है। मरूस्थलीय लोगों का जीवन जल की अल्पता के कारण अधूरा जान पड़ता है।

मरूस्थल में जल की एक–एक बूंद अमृत के समान परम उपयोगी और संग्रहणीय होती है इसलिए मरूभूमि में हुई वर्षा की प्रत्येक बूंद को संग्रह करने की नितांत आवश्यकता है, जिससे मरूभूमि के जीवों की प्यास बुझाई जा सके। इस हेतु मरूभूमि में जगह–जगह तालाबों के निर्माण की आवश्यकता है, जिससे जल संग्रह किया जा सके तथा जहाँ–जहाँ तालाबों का निर्माण हो, वहाँ–वहाँ सघन वृक्षारोपण की भी नितांत आवश्यकता है, क्योंकि पेड़–पौधे वर्षा के जल को आकर्षित कर, अधिक से अधिक वर्षा कराने में सहायक होते हैं और वृक्षों की जड़ों द्वारा जल स्तर ऊपर आता है।

बंजर भूमि–इस संसार का नियम अक्षरशः सत्य है कि जिस चीज का उपयोग नहीं होता धीरे–धीरे वह बेकार हो जाती है, ऐसी ही बंजर भूमि होती है। बंजर भूमि खाली पड़ी रहती है, जिससे दिन–प्रतिदिन ऐसी भूमि की भौतिक और रासायनिक दशा बिगड़ती जाती है और अंत में यह भूमि बिल्कुल बेकार हो जाती है। पेड़–पौधे लगाना और फसलें उगाना मुश्किल हो जाता है। इस प्रकार परती पड़ी यह खाली बंजर भूमि भी जल संकट का एक बड़ा कारण है।

आज आवश्यकता है बंजर पड़ी परती भूमि को विभिन्न तरीकों द्वारा सुधार कर, उपजाऊ बनाने की, जिससे खाली पड़ी भूमि का सदुपयोग हो सके और पर्यावरण में संतुलन स्थापित कर, जल संकट के कहर से जीवों को बचाया जा सके। सुधरी बंजर भूमि में अधिक से अधिक पेड़–पौधे लगाकर और फसलों को उगाकर, हम पर्यावरण को बचा सकते हैं और बंजर भूमि के जल स्तर को बढ़ा सकते हैं तथा अतिरिक्त आय भी अर्जित कर सकते हैं।

ज्वारीय भूमि–समुद्र तटीय भागों में जहाँ ज्वार–भाटे आते रहते हैं, उसे ज्वारीय भूमि कहते हैं। ऐसे ज्वारीय भूमि का अपक्षय निरंतर होता रहता है। अधिकांश अपक्षय ज्वार–भाटे के निरंतर प्रवाह के कारण होता है, जो एक प्राकृतिक कारण है, फिर भी हम चाहे, तो ज्वारीय भूमि के अपक्षय को किसी सीमा तक रोककर, ज्वारीय भूमि को बचाया जा सकता है। ज्वारीय भूमि में उगे प्राकृतिक वनस्पतियों के संरक्षण और संवर्धन द्वारा जल संकट से बचा जा सकता है। इस प्रकार देखा जाय, तो जल संकट के जितने भी कारण उभर कर, सामने आ रहे हों, उन कारणों में अधिकांश के लिए मानव स्वयं ही उत्तरदायी है। अतः आज आवश्यकता है जल संकट की विनाशलीला से बचने के लिए मानव को अपने द्वारा किये जा रहे प्राकृतिक कुठाराघातों पर अंकुश लगाने की, नियंत्रित रखने की, जिससे जल संकट की विभीषिका से मानव स्वयं बच सके और इस सलोनी वसुंधरा के जीवों की प्राण रक्षा हो सके।

आओ हम सभी मिलकर, करें यही सुविचार।
जल संकट से मुक्ति मिले, सुखमय हो संसार।।

समाप्त

किसानों के विकास हेतु एक अनूठी पहलः मेरा गाँव मेरा गौरव

चन्द्रशेखर सिंह, विनय कुमार मिश्र, छेदी लाल वर्मा, सुनील कुमार झा एवं टी दामोदरन

भाकृअनुप–केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, लखनऊ (उत्तर प्रदेश)
E-mail: cssingh65@rediffmail.com

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के 87वें स्थापना दिवस के अवसर पर आदरणीय प्रधानमंत्री द्वारा पटना में 25 जुलाई 2015 को किसानों के चहुँमुखी विकास के लिए तथा प्रयोगशाला से खेत' प्रक्रिया में तेजी लाने एवं किसानों के साथ वैज्ञानिक संपर्क को बढ़ाने एवं सीधी पहुँच सुनिश्चित करने के लिए 'मेरा गाँव मेरा गौरव' नामक योजना का शुभारम्भ किया गया। इस योजना का उद्देश्य प्रत्येक वैज्ञानिक अपनी सुविधानुसार एक गाँव का चुनाव कर किसानों को नियमित रूप से विकसित तकनीकी सूचना, ज्ञान एवं परामर्शी सुविधा प्रदान कर प्रोत्साहित करना है।

भारतीय कृषि में सीमान्त व छोटे कृषकों की सहभागिता कुल कृषि जोत संख्या व क्षेत्रफल के दृष्टिकोण से अति महत्वपूर्ण है। ऐसे किसानों को कृषि निवेश, ऋण व बुनियादी सुविधाओं तक पहुँच, बाजार व मूल्यों की जानकारी, प्रसार सेवाओं व अन्य प्रदाताओं द्वारा दी जाने वाली सुविधाओं की जानकारी, अनुसंधान प्रणाली द्वारा विकसित नवीन तकनीकों की जानकारी अति महत्वपूर्ण है। वर्तमान में भारतीय कृषि परिदृश्य में अनुसंधान केन्द्रों, कृषि विज्ञान केन्द्रों, कृषि विश्वविद्यालयों, निजी कम्पनियों तथा अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों द्वारा विकसित एवं परिष्कृत प्रौद्योगिकियां किसान समुदाय के बीच भिन्न रूप में स्वीकृत व अंगीकृत की जाती है। किसानों के बीच संस्थाओं द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवाओं के बारे में जागरूकता बढ़ाए जाने की जरूरत है, ताकि देश के किसान अपनी जरूरतों के अनुसार परामर्श एवं समाधान प्राप्त कर सके। ग्रामवासियों को स्वच्छ भारत अभियान से संबंधित जानकारी, टीकाकरण एवं पशुओं के स्वास्थ्य संबंधी जानकारी प्रदान करना है।

'मेरा गाँव, मेरा गौरव' योजना अन्तर्गत वैज्ञानिकों द्वारा किये जाने वाले मुख्य कार्य

- गाँव का चुनाव कर किसानों से संवाद स्थापित करना।
- स्थानीय स्तर पर किसानों के लिए कार्यरत संगठनों एवं संस्थाओं जैसे स्वयंसेवी संस्थाओं, कृषक संगठनों, आत्मा, अन्य सरकारी विभागों व उनके कार्यक्रमों के बारे में कृषकों को अवगत कराना।
- चयनित गाँव का भ्रमण कर किसानों की बैठक आयोजित करना एवं विशेषज्ञों की भागीदारी सुनिश्चित करना।
- कृषि वैज्ञानिकों द्वारा समाचार पत्रों, सामुदायिक रेडियो आदि के माध्यम से भी क्षेत्र विशेष में किसानों को जागरूक करना।
- सामयिक रूप से फोन एवं मोबाइल संदेश द्वारा कृषि क्रियाओं की जानकारी पहुंचाना।
- गाँव की परिस्थितियों के अनुसार संभावित कृषि प्रणाली पर मौसम के अनुसार कृषि साहित्य उपलब्ध कराना।
- कृषि निवेश, ऋण, बीज, उर्वरक, रसायन, कृषि यंत्र, कृषि जलवायु, बाजार आदि से संबंधित जानकारियां उपलब्ध कराना।
- वैज्ञानिकों द्वारा ग्रामीण स्तर पर तकनीकी समस्याओं की पहचान कर आगामी अनुसंधान कार्यक्रमों में उपयोग।
- राष्ट्रीय महत्व की योजनाओं जैसे स्वच्छ भारत अभियान, जलवायु परिवर्तन, जल संरक्षण, मृदा उर्वरता आदि विषयों पर भी किसानों को समय–समय पर जागरूक करना।

मेरा गाँव, मेरा गौरव योजना के अंतर्गत गाँवों का चयन

केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, लखनऊ द्वारा गाँव पटवाखेड़ा, ललाईखेड़ा (समेसी), खण्ड मोहनलाल गंज, जिला लखनऊ। गाँव मार्क्स नगर मकूर, खण्ड नवाबगंज, गाँव सिरसाहखेड़ा, खण्ड असोहा, जिला उन्नाव। गाँव तजवापुर एवं अलमापुर खण्ड त्रिवेदी गंज, का चयन किया गया। चयनित गाँवों का सर्वे कर मिट्टी के नमूने लिये गये। मृदा नमूनों का प्रयोगशाला में परीक्षण कर परिणामों के आधार पर उर्वरकों की अनुशंसा की गयी।

संस्थान द्वारा विकसित जैविक खाद

विश्व मृदा दिवस पर किसान जागरूकता अभियान का आयोजन

परिणाम

मेरा गाँव मेरा गौरव कार्यक्रम के अंतर्गत गाँव के चयनित किसानों को संस्थान द्वारा धान की विकसित लवणरोधी प्रजाति सी.एस.आर. 36 का वितरण किया गया। जिसके साथ ही संस्थान द्वारा विकसित फसल उत्पादन तकनीकी फोल्डर, पम्पलेट व किताबों के माध्यम से अवगत कराया गया। संस्थान द्वारा विकसित जैविक खादों का प्रयोग जैसे सीएसआर–बायो का तरल एवं पाउडर रूप में, **हेलो–ऐजो, हेलो–पीएसबी** का प्रयोग किया गया, जिससे रासायनिक उर्वरकों की मात्रा में कमी आई। किसानों के प्रक्षेत्र पर प्रदर्शन के माध्यम से संस्थान द्वारा विकसित तकनीकी एवं प्रजाति के अनुसार फसल उगाई गयी। किसानों द्वारा अपनायी जाने वाली फसल उत्पादन विधि के साथ तुलनात्मक अध्ययन तालिका 1 में दिखाया गया है। विकसित प्रजाति व तकनीकी द्वारा धान उत्पादन में 8.14 प्रतिशत से 32.1 प्रतिशत तक वृद्धि दर्ज की गयी जो बहुत ही महत्वपूर्ण है। यदि चयनित गाँवों के बीच तुलनात्मक परिणाम देखा जाये तो उत्पादन में सबसे अधिक वृद्धि गाँव मार्क्स नगर मकूर जिला

तालिका 1: खरीफ के दौरान किसानों के प्रक्षेत्र पर आयोजित प्रदर्शन की पैदावार का तुलनात्मक अध्ययन

किसानों का पता	किसानों की संख्या	पीएच मान	गतिविधियाँ / क्रियाएँ	धान की औसत उपज (किग्रा./है.)		पैदावार में बढ़ोत्तरी (प्रतिशत)
				वैज्ञानिक तकनीक द्वारा खेती	परंपरागत खेती	
पटवाखेड़ा, लखनऊ	5	8.86 से 9.94	लवण सहिष्णु धान की किस्म – सीएसआर 36, जैवउर्वरक :सीएसआर–बायो, हेलो–ऐजो, हेलो–पीएसबी जिंक सल्फेट, तथा कीटनाशक आवश्यकतानुसार	4136	3529	17.2
ललाईखेड़ा लखनऊ	3	8.76 से 9.82	लवण सहिष्णु धान की किस्म – सीएसआर 36, जैवउर्वरक :सीएसआर–बायो, हेलो–ऐजो, हेलो–पीएसबी जिंक सल्फेट, तथा कीटनाशक आवश्यकतानुसार	3903	3391	15.1
मार्क्स नगर मकूर उन्नाव	4	8.46 से 9.64	लवण सहिष्णु धान की किस्म – सीएसआर 36, जैवउर्वरक :सीएसआर–बायो, हेलो–ऐजो, हेलो–पीएसबी जिंक सल्फेट, तथा कीटनाशक आवश्यकतानुसार	4286	3234	32.5
सिरसाहखेड़ा, असोहा, उन्नाव	4	8.36 से 9.14	लवण सहिष्णु धान की किस्म – सीएसआर 36, जैवउर्वरक :सीएसआर–बायो, जिंक सल्फेट, तथा कीटनाशक आवश्यकतानुसार	4993	4617	8.14

लवणरोधी प्रजाति का वितरण समारोह

उन्नाव में 32.5 प्रतिशत की बढ़ोत्तरी पाई गयी जबकि सबसे कम बढ़ोत्तरी 8.14 प्रतिशत उन्नाव जिले के गाँव सिरसाहखेड़ा असोहा में किसान द्वारा समय पर सिंचाई नहीं करने के कारण दर्ज की गयी।

किसानों की अपेक्षाएं

''मेरा गाँव मेरा गौरव'' के अन्तर्गत विभिन्न बैठकों में गाँवों के किसानों एवं युवाओं से विचार–विमर्श किया गया। गाँव के युवाओं ने ग्राम स्तर पर कृषि उत्पादन की तकनीकी, उत्पादन का बाजार एवं योजनाओं की जानकारी में अपनी रूचि दिखाई। शहरीय आधारित गाँवों के किसानों ने फूल की खेती, पौध तैयार करने की तकनीकी तथा उत्पादन की अच्छी कीमत हेतु पैकिंग की जानकारियों पर बल दिया। गाँव के पंचायत सदस्यों ने वैज्ञानिकों से गाँव की योजना तैयार करने में सहभागिता पर बल दिया। किसानों ने अच्छे बीज विशेषकर सब्जियों एवं फूलों की कमी तथा रोग व्याधियों के लिए उचित दवाईयों की उपलब्धता हेतु विशेष कृषि रासायन, फल एवं बीज की दुकानों की कमी से होने वाली परेशानियों का उल्लेख किया। गाँव की महिलाएं स्वच्छता एवं शौचालय जैसी योजनाओं से काफी प्रभावित हुई है। गाँवों की कुछ महिला संगठनों ने सामुहिक रूप से घर–घर में प्रयोग करने को प्रेरित कर रही है। गाँवों में बार–बार बैठकों का आयोजन होने तथा विचार विमर्श से धीरे–धीरे किसान एवं ग्रामीण यूवा आगे आकर कृषि से संबंधित जानकारी प्राप्त करने लगे हैं। इस प्रकार वैज्ञानिकों को इस योजना द्वारा किसानों से कृषि संबंधित जानकारी साझा करने में मदद मिल रही है तथा आशा की जा रही है कि समस्याओं के अनुसार शोध करके उपज की गुणवत्ता एवं उत्पादकता में सुधार द्वारा किसानों की आय दोगुनी करने में मदद मिलेगी।

उत्तर प्रदेश कृषि अनुसंधान परिषद के अधिकारियों द्वारा किसान के खेत का निरीक्षण

समाप्त

राजभाषा हिन्दी–व्यापक प्रयोग, प्रोत्साहन व प्रसार के मूल मुद्दे

मीना लूथरा

भाकृअनुप–केन्द्रीय मुदा लवणता अनुसंधान संस्थान करनाल (हरियाणा)
E-mail : meena.luthra@icar.gov.in

हमारी राजभाषा हिन्दी भारतीय भाषाओं के बीच एक सेतु का काम करती है। इस तरह उत्तर से दक्षिण, पूर्व से पश्चिम तक हिन्दी संपर्क भाषा माध्यम के रूप में देश में उत्तरोतर विकास कर रही है। इस हिन्दी को स्वतंत्र भारत में राजकाज या सरकारी काम काज की भाषा बनाने के प्रयास लगातार किये जा रहे हैं। भाशा सांस्कृतिक समृद्धि का प्रतीक एवं राष्ट्रीय भावना का मूल है। किसी भी राष्ट्र का साहित्य उसकी अपनी भाषा में समाज का सही चित्रण प्रस्तुत करता है, शिक्षा एवं ज्ञान विज्ञान के क्षेत्र में उन्नति के चरम लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए यदि उस देश की प्रचलित एवं सहज अनुकरणीय भाषा को आधार बनाया जायेगा तो वास्तविक उपलब्धि निश्चित है।

मूल रूप से कार्य करने की योजना

भाषा को बढ़ावा देने के लिये इसकी जड़ को सिंचित करना होगा। इसको अपने घर तथा बच्चों के विद्यालय से ही सिंचित करना होगा। एक बार एक विद्यालय में बच्चों से पूछा गया कि उनके लिए कौन सा विषय रूचिकर है और कौन सा अरूचिकर। रूचिकर विषयों में तो विभिन्नता पाई गई लेकिन लगभग 90 प्रतिशत बच्चों ने अरूचिकर विषय के रूप में हिन्दी को ही बताया। कई कारण पता चले कि जैसे विदेशों का अंधानुकरण करने के कारण अंग्रेजी की ओर अधिक रूझान, अंग्रेजी को प्रतिष्ठा का प्रतीक मानना आदि। इस प्रकार राजभाषा को बढ़ावा देने का हमारा प्रयास सकारात्मक परिणामों से दूर होता जा रहा है। सारांश में हम हिन्दी को प्रोत्साहित करने का कोई भी कार्यक्रम देर से प्रारंभ कर रहे हैं। जब दिशा व दशा खराब हो तो मंजिल पाना टेढ़ी खीर है। प्रथम बार में ही ठीक गतिविधि करना हमारा लक्ष्य होना चाहिए। शुरू में ही बच्चों में हिन्दी बोलने, लिखने व समझने की आदत डालनी चाहिए नहीं तो जब बोए बीज बबूल के तो आम कहाँ से खाये।

प्रगति के लिए भाषा की आवश्यकता

ज्ञान विज्ञान के क्षेत्र में प्रगति समन्वित एवं सुनिश्चित विकास के द्वारा ही संभव है। उपलब्ध ज्ञान को विभिन्न विषयों पर पुस्तकों के रूप में संयोजित करने से एक आधार प्राप्त होता है। अतः हमें स्तरीय पाठ्यपुस्तकों तथा संदर्भ ग्रंथों के संकलन के कार्य पर विशेष ध्यान देने की जरूरत है। नवीनतम जानकारी से युक्त विभिन्न विषयों पर श्रेष्ठ सामग्री को समाहित करते हुए नियमित रूप से प्रकाशित होने वाली पत्रिकाओं की सस्ते दर पर उपलब्धता होने से सामान्य पाठक का रूझान भी इस ओर बढ़ेगा।

मानसिक दासता से मुक्त होने तथा जन सामान्य को विकास का हिस्सा बनाने की जरूरत

मानसिक दासता जो कि जनमानस के मन में पैठ कर गई है इस विषाक्तता से अभय पाना होगा। अपना मन–अपने जन–अपनी भाषा–अपना देश इस भावना को परिष्कृत एवं पल्लवित करना होगा तभी हमारा आधार मजबूत होगा।

जन–जन तक प्रगति का लाभ पहुंचे, जिम्मेदारी का भाव बढ़े। अतः इस राष्ट्र के निवासियों को उनकी अपनी सरल भाषा में वास्तविक स्थिति की जानकारी प्रस्तुत करने का उत्तरदायित्व समाज एवं सरकार के प्रबुद्ध वर्ग का है। उदाहरण के लिए औद्योगिकी प्रगति की रफ्तार को गति देने के लिए कुछ हद तक प्राकृतिक संसाधनों का दोहन समझदारीपूर्वक करने की आवश्यकता है। इस प्रयास में आम जनता को यदि एक जिम्मेदार, भागीदार प्रणधारक न बनाया जायेगा तो अनेक प्रकार के भ्रम पैदा होते है। यह कार्य जनमानस को उसकी अपनी भाषा के माध्यम से किया जाए तभी परिणाम सार्थक होंगे।

समान अवसरों की उपलब्धता तथा भाषा विकास का कार्य जिम्मेदार हाथों में सौंपना

जब तक विभिन्न स्तरों पर भाषा के चुनाव की स्वतंत्रता व्यक्ति को नहीं दी जाएगी तथा रोजगार के क्षेत्रों में समान अवसर नहीं दिये जायेंगे, राजभाषा का विकास खासकर राजकीय कार्यों में तो कल्पना मात्र ही रहेगा। हिन्दी एक स्वपोषित होने वाली भाषा है, इसका क्षेत्र विशाल एवं व्यापक है, हिन्दी के चाहने वालों की कमी नहीं है। गलत योजना लेकर एवं गलत हाथों में राजभाषा

के उन्नयन का कार्य सौंपकर भाषा का उन्नयन तो दूर, उसका नामलेवा भी रह जाये तो उसे चमत्कार ही कहेंगे। जब तक कमान योग्य समर्पित पुरोधाओं को नहीं सौंपी जाएगी, सब खिलवाड़ चलता रहेगा। सब पैसे का खेल है, हिन्दी प्रचार–प्रसार के नाम पर कितना धन व्यर्थ मदों में व्यय कर दिया गया है? इसका हिसाब लेने वाला कोई नहीं है। क्या केवल पोस्टर लगाने, नाम पट्टियां लगाने, उद्घाटन भाषण करने, आंकड़े दिखाने भर से काम हो जाएगा? यदि ऐसा है तो एक कारखाने में पोस्टर निर्माण के कार्य को बड़े स्तर पर बढ़ावा देना चाहिए, प्रगति अपने आप लक्षित हो जाएगी।

हिन्दी के लिए हिन्दी में कार्य करने की जरूरत है

हिन्दी शोर मचाने या थौंपने या इसका विज्ञापन करने से बढ़ने वाली नहीं है। शिक्षा क्षेत्र में आमूल–चूल परिवर्तन करने के साथ ही प्रतियोगी परीक्षाओं में, साक्षात्कारों में, सरकारी कार्यालयों में हिन्दी को प्रयोग में लाना होगा। पराधीनता की मानसिकता को बदलें व निष्पक्ष व स्वतंत्र हिन्दी का दामन थामिए। फिर देखें आपकी मौलिकता क्या रंग लाती है? उधार की भाषा का आसरा छोड़कर अपना पथ स्वयं चुनिए जन समूह आपके पीछे चलने लगेगा। भारत संघ की राजभाषा के रूप में इसका प्रचार–प्रसार एवं प्रयोग जनता की जरूरतों तथा सरकार की नीतियों के आलोक में करने से हिन्दी भाषा का भविष्य निश्चय ही उज्जवल रहेगा। लेकिन आज सरकारी तंत्र को दुरूस्त करने की जरूरत है। ठीक ही कहा गया है 'निजभाषा उन्नति अहै, सब उन्नति का मूल'।

निज भाषा उन्नति के लिए जो कुछ भी हम करेंगे उससे हमारी भी उन्नति होगी। हिन्दी दुनिया की एक बड़ी एवं विकसित भाषा है, इसकी उन्नति के साथ ही हमारी प्रगति जुड़ी है। आइए हम सब मिलकर हिन्दी के विकास के लिए कार्य करें।

अच्छा हो भाषा ज्ञान

आज के युवा वर्ग से जब हिन्दी में कोई प्रार्थना पत्र या अन्य कोई पत्र लिखने को कहा जाता है तो पहले उनका उत्तर होता है कि उन्हें हिन्दी में लिखना नहीं आता। उनसे यह पूछने पर कि उन्हें फिर कौन सी भारतीय भाषा आती है। उनका भाव ग्लानि में बदल जाता है। त्रुटि उनकी भी नहीं है, हमारी सोच ही ऐसी हो गई है। हमें लगता है कि केवल अंग्रेजी ही विकास की एकमात्र सीढ़ी है। इस चक्कर में हम थोड़ी बहुत अंग्रेजी सीख लेते हैं लेकिन हिन्दी पर भी अच्छी पकड़ न होने के कारण कोई भाषा ठीक से नहीं बोल पाते हैं। उनकी बोलचाल की भाषा ठीक नहीं होती है।

अंग्रेजी स्कूल भारी फीस लेने के बावजूद सब विषयों में बराबर ध्यान नहीं देते। विडंबना यह है कि इतने तिरस्कार विरोध और अपमान के बावजूद हिन्दी एकमात्र ऐसी भाषा है जिससे पूरे देश में कहीं भी उपयोगी संवाद हो सकता है, भले ही विरोध करने के लिए कोई कुछ भी कह ले। यह हमेशा हमारे दिमाग में रहना चाहिए कि हर देश के झंडे के अतिरिक्त उसकी भाषा भी अलग पहचान होती है। जर्मनी के एकीकरण के समय एक संदेश था, एक जाति–जर्मन, एक राष्ट्र–जर्मनी और एक भाषा–जर्मन। चीन, जापान, रूस आदि की असाधारण प्रगति के पीछे यही भाव है। अतएव लोग हिन्दी को यदि आगे नहीं बढ़ा सकते तो कम से कम उसे एवं उसके बोलने वालों को हेय तो न समझे। सबसे अच्छी स्थिति तो यह होगी कि जितना अच्छा अंग्रेजी भाषा का ज्ञान हो उतना ही अच्छा हिन्दी भाशा का भी हो।

तत्काल प्रभावी उपाय

राजभाषा को सबल बनाने के लिए कुछ कदम तत्काल प्रभाव से उठाए जा सकते हैं, उनका संक्षिप्त वर्णन नीचे दिया गया है:

- कार्यालय में होने वाली बैठकें हिन्दी भाषा में आयोजित की जाएं व उससे संबंधित सभी कार्य जैसे कार्यसूची, कार्यवृत्त, सूचना पत्र, अन्य पत्राचार आदि भी हिन्दी में ही किये जाएं।
- जितने भी परिपत्र विभाग से संबंधित जारी किये जाते है उन्हें भी हिन्दी भाषा में ही जारी किया जाना चाहिए।
- कम्प्यूटर में यूनिकोड आधारित द्विभाषी साफ्टवेयर की उपलब्धता होनी चाहिए।
- कम्प्यूटर से जो भी विभागीय कार्य किये जाते हैं उन्हें यथासंभव हिन्दी भाषा में करने की कोशिश करनी चाहिए जिससे इस कार्य में धीरे–धीरे गति आ सकती है।
- कर्मचारियों को चाहिए कि उन्हें अपने व्यक्तिगत पत्र जैसे अवकाश, यात्रा कार्यक्रम, आने–जाने के साधन के उपयोग का पत्र इत्यादि भी हिन्दी भाषा में लिखना चाहिए।
- समय–समय पर हिन्दी को प्रोत्साहन देने हेतु

प्रतियोगिताओं का आयोजन किया जाना चाहिए।

- जितना संभव हो सके हिन्दी भाषा में ही वार्तालाप करना चाहिए। यदि असुविधा हो रही है तो पहले कुछ शब्दों का उपयोग करना चाहिए फिर धीरे–धीरे वाक्य बनाने चाहिए।
- युवा वर्ग को प्रोत्साहित करने की जरूरत है। उन्हें हिन्दी संबंधित कार्यों में भाग लेना चाहिए और हिन्दी भाषा के महत्व को बढ़ाना चाहिए।
- विभागीय पत्र जो अंग्रेजी भाषा में होते हैं, उनका मानक हिन्दी भाषा में भी अनुवाद करवाना चाहिए और विभागीय कार्य में उसका उपयोग करना चाहिए।
- हिन्दी भाषा पत्रिका नियमित रूप से प्रकाशित करवानी चाहिए और ज्यादा से ज्यादा कर्मचारियों से यथासंभव अपने लेख, कविताएं छपवाने चाहिए जिनसे उनका नाम भी आए और इस प्रकार हिन्दी भाषा को प्रोत्साहन मिल सके।

अंत में मैं यही कहना चाहूंगी कि समय के साथ चलिए। समय की मांग देखिए। बड़ी–बड़ी सूचना प्रौद्योगिकी कंपनियों ने भारत की नब्ज पहचान कर अपनी सेवाएं हिन्दी में देना प्रारंभ कर दिया है जैसे कि गूगल, माइक्रोसाफ्ट आदि ने फिर हम भारतीय व भारत सरकार जिनको कि अपनी सभ्यता व संस्कृति पर गर्व है अपना राजकीय कार्य हिन्दी में करने में हिचक क्यों है? अतः कुछ मजबूरियों को छोड़कर आज ही से अपना ज्यादा से ज्यादा कार्य हिन्दी में शुरू करें। एक कदम तो उठाऐं, सौ कदम आपके साथ चलेंगे।

समाप्त

अधिकतर बाधाएं पिघल जाएंगी अगर उनसे डरने के बजाय निडरतापूर्वक निपटने का मन बना लें।

योग एवं स्वास्थ्य

अक्षय कुमार

भाकृअनुप–केन्द्रीय मुदा लवणता अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, भरुच (गुजरात)
E-mail : er.akshaykumar.to@gmail.com

योग प्रश्नोत्तरी

1. योग को किससे परिभाषित किया जा सकता है?
   (क) जीवात्मा का परमात्मा से मिलन (ख) जहाँ पर आधुनिक चिकित्सा की सीमा समाप्त होती है वहाँ से योग की सीमा शुरू होती है
   (ग) योग सब बीमारियों को दूर करता है (घ) उपरोक्त सब से
2. अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस कब मनाया जाता है?
   (क) 20 जून (ख) 21 जून
   (ग) 21 जुलाई (घ) कभी भी
3. 2017 में कौन सा अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस मनाया गया?
   (क) पहला (ख) दूसरा
   (ग) तीसरा (घ) चौथा
4. सर्वप्रथम योग विद्या को सुव्यवस्थित रूप किसने दिया?
   (क) महर्षि पतंजलि के गुरू व्याकरणाचार्य पाणिनी (ख) शैषनाग का अवतार माने जाने वाले महर्षि पतंजलि
   (ग) पतंजलि आयुर्वेद के प्रबंध निदेशक आचार्य बालकृष्ण (घ) पतंजलि योगपीठ के संस्थापक बाबा रामदेव
5. हमें सुबह कब जाग जाना चाहिए?
   (क) सूर्योदय के बाद (ख) सूर्योदय से पहले
   (ग) काम के अनुसार (घ) जब कोई जगाये
6. प्राण वायु का संचार कब होता है?
   (क) सूर्योदय के बाद (ख) सूर्योदय से पहले
   (ग) हमेशा (घ) कभी नहीं
7. रोगों से बचने के लिए योग कब करना चाहिए?
   (क) जब जरूरत हो (ख) जब बीमार हो
   (ग) नियमित रूप से (घ) कभी नहीं
8. योग किसे करना चाहिए?
   (क) 10 वर्ष से बड़े बच्चों को (ख) युवाओं को
   (ग) महिलाओं को (घ) सभी को
9. योग करने के लिए शरीर एवं फर्श के बीच बैठने के लिए जो प्रयोग किया जाता है वह कैसा होना चाहिए?
   (क) सुचालक (ख) कुचालक
   (ग) कैसा भी (घ) कैसा भी नहीं
10. योग किस किस मुद्रा में करना चाहिए?
    (क) खड़े होकर (ख) बैठकर
    (ग) लेटकर (घ) सभी मुद्रा में
11. सूर्य नमस्कार में कितने स्टेप होते हैं?
    (क) आठ (ख) दस
    (ग) बारह (घ) कुछ भी

12. सूर्य नमस्कार में किस आसन का प्रयोग होता है?
(क) पादहस्तासन (ख) साष्टांगासन
(ग) भुजंगासन (घ) उपरोक्त सभी का

13. दोनों हाथ, दोनों पैर, दोनों घुटना, छाती एवं माथे को जमीन से किस आसन में स्पर्श किया जाता है?
(क) शषकासन (ख) साष्टांगासन
(ग) त्रिकोणासन (घ) उपरोक्त सभी

14. संपूर्ण व्यायाम किसे कह सकते हैं?
(क) सूर्य नमस्कार (ख) सूक्ष्म व्यायाम
(ग) सर्वांगासन (घ) सिद्धासन

15. हमें श्वास कैसे लेना चाहिए?
(क) मुँह से (ख) नासिका से
(ग) कंठ से (घ) कैसे भी

16. प्राणायाम में श्वास को कहाँ भरते हैं?
(क) पेट में (ख) छाती में
(ग) कहीं भी (घ) कहीं नहीं

17. निम्न में से उपयुक्त पर सही का निशान करें।
(क) श्वास अंदर भरने को पूरक कहते हैं (ख) श्वास बाहर निकालने को रेचक कहते हैं
(ग) श्वास को अन्दर रोककर रखने को कुम्भक कहते हैं (घ) उपरोक्त सब सही है

18. किस प्राणायाम को करने से सभी रोगों से छुटकारा पाया जा सकता है?
(क) भस्त्रिका (ख) बाह्य प्राणायाम
(ग) अनुलोम विलोम (घ) कपालभाति

19. खर्राटे (घोंघट) तथा थॉयरायड के लिए उत्तम प्राणायाम कौन सा है?
(क) शीतली (ख) सीतकारी
(ग) चन्द्रभेदी (घ) उज्जाई

20. हमारे शरीर में कितने नाड़ी होते हैं?
(क) 7 लााख से अधिक (ख) 72 लाख से अधिक
(ग) 72 करोड़ से अधिक (घ) अनगिनत

21. पिंगला नाड़ी किसे कहते हैं?
(क) बायां स्वर (ख) दायां स्वर
(ग) दोनों स्वर (घ) इड़ा नाड़ी

22. चंद्र स्वर किसे कहते हैं?
(क) बायां स्वर (ख) इड़ा स्वर
(ग) दोनों (घ) किसी को नहीं

23. मंडूकासन से सबसे ज्यादा लाभ किस रोग में होता है?
(क) सिरदर्द (ख) मधुमेह
(ग) अस्थमा (घ) जोड़ों का दर्द

24. मकरासन से सबसे अधिक लाभ किस अंग को होता है?
(क) पेट (ख) घुटना
(ग) माथा (घ)उपरोक्त सभी का

25. मर्कटासन से सबसे अधिक लाभ किस अंग को होता है?
(क) कमर (ख) आँख
(ग) हाथ (घ) किसी का नहीं

26. मर्कटासन कैसे किया जाता है?
(क) खड़े होकर (ख) बैठकर
(ग) लेटकर (घ) कैसे भी

27. गैस की बीमारी को किससे दूर किया जा सकता है?
(क) बद्ध–पद्मासन (ख) पवन मुक्तासन
(ग) ताड़ासन (घ) चायकॉफी पीकर

28. साइकिल जैसा पैर को किस आसन में घुमाया जाता है?
(क) द्विचक्रीआसन (ख) पादवृत्तासन
(ग) उत्तानपादासन (घ) द्विपादग्रीवासन

29. निम्न में से उपयुक्त पर सही का निशान करें।
(क) कमर दर्द में आगे नहीं झुकना चाहिए (ख) हर्निया में पीछे नहीं झुकना चाहिए
(ग) दोनों सही है (घ) दोनों गलत है

30. पतंजलि योगपीठ का मुख्यालय किस राज्य में स्थित है?
(क) हरियाणा (ख) उत्तर प्रदेश
(ग) उत्तराखंड (घ) गुजरात

31. स्वामी रामदेव का सबसे ज्यादा कार्यक्रम किस टीवी चैनल में प्रसारित किया जाता है?
(क) संस्कार (ख) दूरदर्शन
(ग) आस्था (घ) आज तक

32. पतंजलि द्वारा किस प्रकार का दवा बनाया जाता है?
(क) एलोपैथी (ख) आयुर्वेदिक
(ग) होमियोपैथिक (घ) उपरोक्त सभी प्रकार का

33. हमें कितने घंटे में एक बार पसीने से नहाना चाहिए?
(क) 24 घंटे (ख) 8 घंटे
(ग) 12 घंटे (घ) सिर्फ छुट्टी के दिन

34. हमारे देह में कितने कोश होते हैं?
(क) एक (ख) तीन
(ग) पाँच (घ) सात

35. हमारे शरीर में कितने चक्र होते हैं?
(क) दो (ख) चार
(ग) छः (घ) आठ

36. मानव शरीर में कितने द्वार होते हैं?
(क) तीन (ख) छः
(ग) नौं (घ) बारह

37. हमारी श्वास की संख्या प्रति मिनट कितनी होती है?
(क) पाँच (ख) पंद्रह
(ग) तीस (घ) कितना भी

38. विश्राम के लिए क्या करना चाहिए?
(क) शवासन (ख) मकरासन
(ग) बालासन (घ) उपरोक्त सभी

39. शवासन का दूसरा नाम क्या है?
(क) योग निद्रा (ख) शलभासन
(ग) योग मुद्रा (घ) अर्द्धचन्द्रासन

40. हमारे शरीर की पांचों अंगुली पांच तत्वों का प्रतिनिधित्व करती है। निम्न में से कौन सही है?
(क) अंगुठा – अग्नि, तर्जनी – वायु (ख) मध्यमा – आकाश, अनामिका – पृथ्वी
(ग) कनिष्ठा – जल (घ) उपरोक्त सब सही है

41. अंगुठा एवं तर्जनी के अग्रभाग को परस्पर मिलाने से कौन सा मुद्रा बनता है?
(क) ज्ञान मुद्रा (ख) वायु मुद्रा
(ग) शुन्य मुद्रा (घ) पृथ्वी मुद्रा

42. एक्युप्रेशर चिकित्सा द्वारा शरीर के किस भाग पर दबाव देकर रोग ठीक किया जाता है?
(क) हाथ (ख) पैर
(ग) चेहरा (घ) उपरोक्त सभी

43. हथेली में तर्जनी और मध्यमा के बीच में दबाव देने से किस अंग को लाभ होता है?
(क) कान (ख) हृदय
(ग) आँख (घ) माथा

44. क्या करने से शरीर के अधिकांश बिन्दु दबते हैं (एक्युप्रेशर)?
(क) जोर–जोर से बात करने से (ख) जोर–जोर से ताली बजाने से
(ग) प्राणायाम करने से (घ) मुँह फुलाने से

45. निम्न में से कौन सही है।
(क) योग करने से मोटापा कम होता है (ख) योग करने से दुर्बलता दूर होती है
(ग) दोनों सही है (घ) दोनों गलत है

46. नेति किसे कहते हैं?
(क) नाक द्वारा अलग–अलग पदार्थ ग्रहण करने को (ख) मुँह द्वारा अलग–अलग पदार्थ ग्रहण करने को
(ग) कान द्वारा अलग–अलग पदार्थ ग्रहण करने को (घ) आँख द्वारा अलग–अलग पदार्थों को ग्रहण करने को

47. कार्यालय में लगातार कितने देर तक सीट पर बैठने के बाद थोड़ा उठकर स्थिति बदलने चाहिए?
(क) 20 मिनट (ख) 40 मिनट
(ग) 60 मिनट (घ) सुबह एक बार बैठने के बाद लंच के समय ही उठना चाहिए

48. कार्यालय से शाम को घर पहुँचते ही क्या करना चाहिए?
(क) चाय पीना (ख) शवासन
(ग) कपाल भाति प्राणायाम (घ) ऊर्ध्व ताड़ासन

49. भोजन के बाद कौन सा आसन करना चाहिए?
(क) गोरक्षासन (ख) वज्रासन
(ग) सुखासन (घ) नौकासन

50. योग के अंत में कौन सा आसन उपयोगी है?
(क) वृक्षासन (ख) कोणासन
(ग) आनन्दासन (घ) अर्द्ध हलासन

उत्तर :

1	घ	11	ग	21	ख	31	ग	41	क
2	ख	12	घ	22	ग	32	ख	42	घ
3	ग	13	ख	23	ख	33	क	43	ग
4	ख	14	क	24	ख	34	ग	44	ख
5	ख	15	ख	25	क	35	घ	45	ग
6	ख	16	ख	26	ग	36	ग	46	क
7	ग	17	घ	27	ख	37	ख	47	क
8	घ	18	ग	28	क	38	घ	48	ख
9	ख	19	घ	29	ग	39	क	49	ख
10	घ	20	ग	30	ग	40	घ	50	ग

समाप्त

हमारी खुशी का स्त्रोत हमारे ही भीतर है,
यह स्त्रोत दूसरों के प्रति संवेदना से पनपता है।

कविताएँ

ISO 9001:2008

संकल्प हठ

यशपाल सिंह
भाकृअनुप–केन्द्रीय मुदा लवणता अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, लखनऊ (उत्तर प्रदेश)
E-mail : ypsingh_5@yahoo.co.in

अब मैं ऐसा गीत लिखूँगा
जो पानी, में भी ज्वार उठा दे
सागर की गहराई में भी
गंगा की शीतल लहरों में
कालिंदी की कल कल ध्वनि में
पैदा कर दे चिंगारी
या बिजली की तड़क जगा दे
अब मैं ऐसा गीत लिखूँगा, अब मैं ऐसा गीत लिखूँगा ।

पतझड़ में खुशहाली ला दे
''शिवरी'' को आबाद बना दे
ऊसर में हरियाली लाकर
खारे पानी से भी भर दे खेत और खलिहान
अब मैं ऐसा गीत लिखूँगा, अब मैं ऐसा गीत लिखूँगा ।

कम जिप्सम से फसल उगाकर
ऊसर में भी फूल खिला दे
नहरी पानी का संचय कर
ऊसर में भी मत्स्य उगा दे
ऊसर के प्रति मोह जगाकर
युवा पलायन को रूकवा दे
अब मैं ऐसा गीत लिखूँगा, अब मैं ऐसा गीत लिखूँगा ।

जल प्रबंध तकनीक सिखाकर
भूजल को पुनिपूर्ण करा दे
नहर किनारे वृक्ष लगाकर
जल स्तर को निम्न करा दे
जल निकास आसान कराकर
दुनियाँ के नक्शे पर सीएसएसआरआई की पहचान करा दे
अब मैं ऐसा गीत लिखूँगा, अब मैं ऐसा गीत लिखूँगा ।

कचरे से भी खाद बनाकर
दाग मिटा दे इस धरती के
ऊसर में जीवाणु बसाकर
कम लागत में पैदा कर दे
ऊसर में भी गेहूँ एवं धान
अब मैं ऐसा गीत लिखूँगा, अब मैं ऐसा गीत लिखूँगा ।

समाप्त

स्वच्छता स्वार्थसिद्धि योग

छेदी लाल वर्मा
भाकृअनुप–केन्द्रीय मुदा लवणता अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, लखनऊ (उत्तर प्रदेश)
E-mail: lalc_verma@yahoo.com

स्वच्छ ग्राम गृह नगर पुनीता।
पंचभूत सुचि दिसि सुपुनीता।। १
स्वच्छ घर, गांव एवं नगर को पवित्रता प्रदान कर पञ्चभूत (मृदा, जल, वायु, अग्नि एवं आकाश) और दिशाओं को शुचिता एवं पवित्रता प्रदान करती है।
रस पोषण तोषण भुवि भावा।
सत सिव सुन्दर सुजन सुभावा।। २
स्वच्छता पृथ्वी के रस, पुष्टि एवं तुष्टि के भाव में वृद्धि एवं ज्ञानी जनों के सुभावों को सत्य, शिव और सुन्दर (पूर्ण) करती है।
सुभ सुचि स्वच्छ बुद्धि मन बानी।
स्वस्थ निरुज घनि आनंद खानी।।३
स्वछता मन, बुद्धि और वाणी को शुभ, शुचि, निर्मल, निरोग एवं स्वस्थ और घनीभूत आनंद का स्रोत बनाती है।
सम्पति सुमति सुतंत्र सनेहा।
सुर संतति संभवहिं सदेहा।। ४
स्वच्छता धन, सुमति एवं स्नेह की अभिवृद्धि और देहयुक्त देव संतति को उत्पन्न करती है।
श्रुति पुराण बिज्ञान प्रबीना।
स्वच्छ स्वस्थ भुवि प्रकटि नवीना।। ५
स्वच्छता वेद, पुराण एवं विज्ञानं विज्ञों को जन्म देती है और पृथ्वी पर नव स्वस्थ को प्रकट कराती है ।
असुचि असौच असुभ अघ मूला।
दारिद रोग कुमति भव सूला।। ६
अस्वच्छता अपवित्रता, अशुभ और पाप का मूल तथा दरिद्रता, रोग दुर्बुद्धि एवं विषम भवशूल है।
मुद मंगल आनंद बड़वाग्नी।
अस अस्वच्छ जिमि परतियगामिनी।।७
अस्वछता मोद, मंगल और आनंद को भस्म कर देने के लिए बड़वाग्नि स्वरुप है। अस्वछता परस्त्री गमन की तरह महादुखकारी है।
कृपणि प्रमाद अस्वच्छ तजि ताते।
स्वच्छ बेगि मिलि देस सुनाते।। ८
अतः कृपणता, आलस्य और अस्वछता का त्याग कर देश से सुन्दर संबंध होने के कारण (हम भारतीय है) स्वच्छता से शीघ्रतापूर्वक मिलिए।
लेहु सत्य संकल्प सब स्वच्छ समाजु सुदेस।
सब कर मंगल हेतु हिय सुचियुग सबहिं संदेस।।
सब मिलकर सत्य संकल्प लीजिये कि हमारा समाज स्वच्छ और देश सुंदर बने।
हृदय में सबके मंगल की कामना हो, यही इस स्वच्छ शुचिमय युग का सबको सन्देश है।

समाप्त

राजभाषा कार्यक्रम

ISO 9001:2008

संस्थान के कृषि अनुसंधान एवं अन्य क्रियाकलापों में राजभाषा हिन्दी

अनिता मान, प्रवेन्द्र श्योरान, राकेश बनियाल एवं अश्वनी कुमार

भाकृअनुप–केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा)
E-mail: anitadgr13@gmail.com

राजभाषा हिन्दी को बढावा देने एवं कृषि अनुसंधान में वैज्ञानिकों, कर्मचारियों को प्रोत्साहित करने के लिए प्रत्येक वर्ष हिन्दी में अनेक गतिविधियाँ केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान में आयोजित की जाती है। वर्ष 2016–17 के दौरान आयोजित कुछ विशिष्ट कार्यक्रमों का कृषि किरण के अंक 9 में प्रकाशन किया जा रहा है।

हिन्दी पखवाडे का आयोजन

विगत वर्षों की भांति इस वर्ष भी संस्थान में 14 से 29 सितम्बर 2016 तक हिन्दी पखवाड़े का आयोजन किया गया। पखवाड़े का शुभारम्भ मुख्य अतिथि डा॰ अनिल कुमार श्रीवास्तव, निदेशक, भाकृअनुप–राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल ने दीप प्रज्जवलित करके किया। हिन्दी पखवाड़ा आयोजन समिति की अध्यक्ष डा॰ अनिता मान ने हिन्दी के महत्व को बताते हुए राजभाषा के नियमों व अधिनियमों की विस्तृत जानकारी दी तथा हिन्दी पखवाड़े के दौरान आयोजित किए जाने वाले कार्यक्रमों व प्रतियोगिताओं का विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया। मुख्य अतिथि डा॰ अनिल कुमार श्रीवास्तव ने इस संस्थान में हिन्दी में किये जा रहे विभिन्न कार्यों की सराहना की और कहा कि हिन्दी पखवाड़े के दौरान हिन्दी भाषा में अधिक से अधिक संचार होता है। उन्होंने कहा कि भारत विविधताओं से भरा भिन्न भाषाओं, संस्कृति वाला एक महान देश है व विविधता में एकता ही इसकी विशेषता है और भाषा सारी विविधताओं को जोड़ने के लिए कडी का काम करती है। उन्होंने कहा कि हिन्दी भाषा एक सरल, सशक्त एवं वैज्ञानिक भाषा है इसको सुदृढ करने के लिए हमें अधिक से अधिक हिन्दी में काम करना होगा। हिन्दी राष्ट्रीय एकता व राष्ट्रीय स्वाभिमान की भाषा है इसके प्रयोग से हमें गौरवान्वित महसूस करना चाहिये।

संस्थान के निदेशक डा॰ प्रबोध चन्द्र शर्मा ने मुख्य अतिथि का स्वागत किया और बताया कि यह दिवस हमें अपने संवैधानिक उत्तरदायित्व के प्रति सचेत करता है। उन्होंने कहा कि राजभाषा के प्रति प्रेम और समर्पण से ही स्वदेश प्रेम की भावना जागृत होती है जिसके लिये केन्द्र सरकार का राजभाषा विभाग व सभी संस्थायें हर संभव कोशिश कर रहे हैं ताकि कार्यालयों में हिन्दी का अधिकाधिक प्रयोग हो। उन्होंने कहा कि हिन्दी एक वैज्ञानिक भाषा है। संस्थान में किसानों को संस्थान की तकनीकों की विस्तृत रूप से जानकारी देने के लिए किसान मेले एवं किसान गोष्ठियों का आयोजन किया जाता है ताकि देश का किसान विकसित तकनीकों से लाभांवित हो सके। उन्होंने कहा कि आजादी के लगभग 70 वर्ष बाद भी देश में राजभाषा के प्रति निष्ठा और प्रेम में कमी के कारण ही यह स्थिति बनी हुई है कि आज भी सरकारी स्तर पर राजभाषा को बढ़ाने के लिये प्रयास किये जा रहे हैं। यदि इन प्रयासों को देश के सभी नागरिक गंभीरता से लें तो निश्चित ही राजभाषा को

डा. अनिल कुमार श्रीवास्तव, निदेशक एन.डी.आर.आई., करनाल, हिन्दी पखवाड़ा के उद्घाटन पर सम्बोधित करते हुए

हिन्दी पखवाड़ा 2016 के अंतर्गत आयोजित प्रतियोगिताओं के परिणाम

क्र. सं.	प्रतियोगिता के नाम	विजेताओं के नाम			
		प्रथम	द्वितीय	तृतीय	प्रोत्साहन
1.	कविता पाठ	डा. सुनिल कुमार त्यागी	श्री रणधीर सिंह	डा. रामेश्वर लाल मीणा	श्रीमती जसबीर कौर श्रीमती रीटा आहूजा श्रीमती मीना लूथरा
2.	निबंध लेखन	श्री अनिल शर्मा	डा. राजकुमार एवं डा. भूमिजा	श्रीमती अनीता रानी	–
3.	प्रश्नोत्तरी	श्रीमती दिनेश गुगनानी, कु. मार्टिना एवं श्रीमती रजनी	श्री राहुल तोलिया श्री विनोद कुमार एवं श्री देसराज	डा. आर. राजू श्री देवेन्द्र कुमार एवं श्री राजपाल तथा श्री सूबेदार पटेल, श्री राजपाल एवं श्रीमती ममता रानी	–
4.	हिन्दी टंकण	श्रीमती दिनेश गुगनानी	श्रीमती रीटा आहूजा	श्री करम सिंह	–
5.	टिप्पणी एवं मसौदा लेखन (नगर स्तरीय)	श्री अनिल कुमार	श्री पंकज सिंह	मुकेश तोमर	श्रीमती सन्तरा देवी, श्रीमती सुषमा देवी, श्रीमती वीरा रानी, श्री जीवन कुमार, श्री चन्द्रभानु सिंह, श्री सतीश कुमार श्रीवास्तव, श्रीमती ऊषा कत्याल
6.	आवेदन पत्र लेखन (चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों हेतु)	श्री फतेह सिंह	श्री सुभाष चन्द	श्री निरंजन	–
7.	पोस्टर प्रदर्शनी	डा. प्रवेन्द्र श्योरान एवं सहयोगी	डा. अश्वनी कुमार एवं सहयोगी	डा॰ रामेश्वर लाल मीणा एवं सहयोगी	कु. मार्टिना एवं सहयोगी
8.	तत्काल भाषण	श्रीमती अनीता रानी	डा. पारूल सुन्धा	डा. एम॰जे॰ कलेढोणकर	श्रीमती सुनीता मल्होत्रा

सम्मान मिलेगा। उन्होंने सभी कर्मियों से हिन्दी में कार्य करने की अपील की।

हिन्दी पखवाड़े का समापन समारोह दिनांक 29 सितम्बर 2016 को आयोजित किया गया। समापन समारोह के मुख्य अतिथि श्री राजबीर देसवाल, अतिरिक्त महानिदेशक पुलिस, हरियाणा रहे। सर्वप्रथम संस्थान के निदेशक डा. प्रबोध चन्द्र शर्मा ने मुख्य अतिथि का स्वागत किया और संस्थान की गतिविधियों के बारे में विस्तार से बताया। तत्पश्चात् हिन्दी पखवाड़ा समापन समारोह के मुख्य अतिथि श्री राजबीर देसवाल ने समापन भाषण में कहा कि हिन्दी बोलने वालों को गौरव होना चाहिए क्योंकि हिन्दी बोलने वालों का आज के युग में सम्मान बढ़ता जा रहा है। उन्होंने यह भी कहा कि हिन्दी हमारे देश के विकास में बहुत मददगार सिद्ध हुई है। उन्होंने सभी से अपील की कि वे अपना सरकारी कामकाज हिन्दी में ही करने का प्रयास करें। उन्होंने कहा कि हिन्दी काव्य की कई विद्याएं मर रही है जैसे कि मुरकियां आदि। इन विद्याओं को पुनर्जीवित करने की

नकद पुरस्कार योजना के अन्तर्गत पुरस्कृत कर्मचारियों की सूची

क्र.सं.	नाम	परिणाम	नकद राशि
1	श्रीमति सुषमा गर्ग	प्रथम	1600
2	श्री बलवान सिंह	प्रथम	1600
3	श्रीमति जसबीर कौर	द्वितीय	800
4	श्री गुरचरण सिंह	तृतीय	600
5	श्री जसबीर सिंह	तृतीय	600

आवश्यकता है। इस मौके पर उन्होंने स्वरचित कविताएं, शेर व गजलें सुनाकर दर्शकों का मन मोह लिया।

समापन समारोह के अवसर पर तत्काल भाषण प्रतियोगिता भी आयोजित की गई। इस अवसर पर मुख्य अतिथि श्री राजबीर देसवाल तथा डा. प्रबोध चन्द्र शर्मा ने हिन्दी योजना के अंतर्गत वर्ष भर हिन्दी में अधिकाधिक व उत्कृष्ट कार्य करने वाले अधिकारियों, कर्मचारियों एवं हिन्दी पखवाड़े के दौरान हुई प्रतियोगिताओं के विजेताओं को पुरस्कार व प्रमाण पत्र वितरित किये। निदेशक महोदय ने पखवाड़े के दौरान आयोजित की गई 8 प्रतियोगिताओं में भाग लेने वाले सभी प्रतिभागियों की सराहना की तथा विजेताओं को हार्दिक बधाई दी।

पखवाड़े के अंतर्गत 8 प्रतियोगिताएं आयोजित की गई। इन सभी प्रतियोगिताओं में संस्थान के अधिकारियों व कर्मचारियों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया।

केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान में 29 सितम्बर 2016 को तकनीकी पोस्टर प्रदर्शनी एवं तत्काल भाषण प्रतियोगिता आयोजित की गई व इसी दिन हिन्दी पखवाड़े के समापन के अवसर पर इन पोस्टरों का मूल्यांकन भी किया गया।

प्रतियोगिता में निम्नलिखित कृषि तकनीकों पर वैज्ञानिकों द्वारा पोस्टर प्रदर्शित किए गए।

- **फव्वारा सिंचाई विधि से अभिष्टतम गेहूँ उत्पादन के साथ जल एवं नाइट्रोजन की बचत**

  मार्टिना रानी, रणबीर सिंह, सूबेदार पटेल एवं रेनू कुमारी

- **पॉलीहाउस में लवणीय जल सिंचाई द्वारा व्यवसायिक सब्जियों का उत्पादन**

  रामेश्वर लाल मीणा, बाबू लाल मीणा एवं मल्हारीमार्तण्ड जगन्निवास कलेढोणेकर

- **गेहूँ की अभिष्टतम उत्पादकता शुन्य जुताई में धान अवशेषों के साथ**

  रेनू कुमारी, रणबीर सिंह, प्रवेन्द्र श्योरान, मार्टिना एंव सूबेदार पटेल

- **नगर पालिका ठोस अपशिष्ट खाद के प्रयोग से लवण–क्षारीय भूमि का सुधार**

  पारूल सुन्धा, निर्मलेन्दु बसक एवं ए॰के॰ राय

- **स्पोरोबोल्स मारजीनेटस की लवण सहिष्णुता का मूल्यांकन पादप कार्यिकी एवं जैव रासायनिक परिप्रेक्ष्य**

  अश्वनी कुमार, चारूलता, अरविंद कुमार एवं अनिता मान

- **मेरा गांव, मेरा गौरव परियोजना के अंतर्गत अंगीकृत, लवणग्रस्त कृषक प्रक्षेत्र पर गेहूँ का अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन**

  प्रवेन्द्र श्योरान, अश्वनी कुमार, निर्मलेन्दु बसक, रंजय कुमार एवं रणधीर सिंह

- **क्षारीय वातावरण में धान की उत्तम उत्पादन विधियों का तुलनात्मक अध्ययन**

  सूबेदार पटेल, रणबीर सिंह, ए॰के॰ राय, रेनू, स्वाति राणा एवं मार्टिना रानी

पोस्टर प्रदर्शनी प्रतियोगिता के निर्णायक मण्डल के मूल्यांकन के आधार पर मेरा गांव, मेरा गौरव परियोजना के अंतर्गत अंगीकृत, लवणग्रस्त कृषक प्रक्षेत्र पर गेहूँ का अग्रिम पंक्ति प्रदर्शन को प्रथम, स्पोरोबोल्स मारजीनेटस की लवण सहिष्णुता का मूल्यांकन पादप कार्यिकी एवं जैव रासायनिक परिप्रेक्ष्य को द्वितीय तथा पॉलीहाउस में लवणीय जल सिंचाई द्वारा व्यावसायिक सब्जियों का उत्पादन तथा फव्वारा सिंचाई विधि से अभिष्टतम गेहूँ उत्पादन के साथ जल एवं नाइट्रोजन की बचत को संयुक्त रूप से तृतीय पुरस्कार प्राप्त हुआ। संस्थान के निदेशक डा॰ प्रबोध चन्द्र शर्मा ने पोस्टर द्वारा तकनीकी प्रदर्शन को एक महत्वपूर्ण तकनीकी हस्तांतरण का माध्यम बताते हुये इस प्रतियोगिता में भाग लेने वाले वैज्ञानिकों की प्रशंसा की तथा इस पोस्टर प्रदर्शनी के आयोजन के प्रयासों की सराहना की।

संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति की त्रैमासिक बैठकें

वर्ष 2016–17 में अप्रैल से मार्च के दौरान संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति की चार बैठकें आयोजित की गई ।

- दिनांक 15 अप्रैल 2016 को संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति की प्रथम बैठक आयोजित की गई जिसमें पिछली बैठक की कार्यवाही की पुष्टि एवं अनुवर्ती कार्रवाई की समीक्षा, परिषद से प्राप्त पत्रों पर विचार व कार्यशाला के आयोजन के संबंध में चर्चा की गई।
- दिनांक 3 अगस्त 2016 को संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति की दूसरी बैठक आयोजित की गई जिसमें परिषद से प्राप्त पत्रों एवं राजभाषा हिन्दी के प्रगामी प्रयोग से संबंधित तिमाही प्रगति रिपोर्ट की समीक्षा, पिछली तिमाही में हुए राजभाषा कार्यों की समीक्षा व राजभाषा संबंधी वर्ष 2016–17 के वार्षिक कार्यक्रम के बारे में व संस्थान में सितम्बर माह में हिन्दी पखवाड़े के आयोजन पर चर्चा की गई।
- दिनांक 3 दिसम्बर 2016 को संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति की तीसरी बैठक आयोजित की गई जिसमें पिछली बैठक की कार्यवाही की पुष्टि तथा अनुवर्ती कार्रवाई की समीक्षा, परिषद से प्राप्त राजभाषा समिति की बैठक के कार्यवृत्त की समीक्षा व हिन्दी पखवाड़े की रिपोर्ट पर चर्चा की गई।
- दिनांक 20 मार्च 2017 को संस्थान राजभाषा कार्यान्वयन समिति की चतुर्थ बैठक आयोजित की गई जिसमें पिछली बैठक की कार्यवाही की पुष्टि तथा अनुवर्ती कार्रवाई की समीक्षा, परिषद से प्राप्त राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक के कार्यवृत्त की समीक्षा एवं तिमाही प्रगति रिपोर्ट की समीक्षा व हिन्दी के प्रगामी प्रयोग संबंधी आवश्यक बिन्दुओं पर चर्चा कर लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु प्रयास करने के निर्देश दिये गये।

भाकृअनुप–केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, भरूच (गुजरात) पर वर्ष 2016–17 में आयोजित विभिन्न गतिविधियों का विवरण

अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस का आयोजन

केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, भरुच में दिनांक 21 जून 2016 को 'अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस' का आयोजन किया गया। वैज्ञानिक श्रीमती मोनिका शुक्ला ने 'दैनिक जीवन में योग' विषय को गहराई से समझाने का प्रयास किया। उन्होंने योग करने के लिए सही समय तथा तरीकों के बारे में जानकारी दी। इस केन्द्र के तकनीकी अधिकारी श्री अक्षय कुमार ने उपस्थित लागों को विभिन्न तरह के आसन तथा प्राणायाम सिखाया। उन्होंने बैठने एवं सोने के उचित तरीके, शरीर के विभिन्न हिस्सों में होने वाली तकलीफ तथा बीमारी न होने देने के लिए भी योग सिखाया।

आज ही 'विश्व संगीत दिवस' भी है। इस अवसर पर सबने एक भजन तालियों के साथ गाया। ताली बजाने से हथेली के सारे बिंदु दबते हैं जो एक्यूप्रेसर का कार्य करते हैं जिससे अनजाने में शरीर के कई अंग स्वस्थ हो जाते हैं। अतः जब भी मौका मिले ताली जरूर बजाना चाहिए। इस आयोजन में केन्द्र के अधिकांश अधिकारी एवं कर्मचारियों (पुरूष एवं महिला वर्ग) ने भाग लिया। कार्यक्रम का समापन शान्ति पाठ एवं आनन्दासन के साथ किया गया।

हिन्दी सप्ताह का आयोजन

केन्द्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, भरुच में दिनांक 14 से 20 सितम्बर 2016 तक हिन्दी सप्ताह का आयोजन किया। दिनांक 14 सितम्बर 2016 को शुभारम्भ के अवसर पर हिन्दी समिति के सचिव डा. इन्दीवर प्रसाद, ने करते हुए हिन्दी भाषा का महत्त्व समझाया और हिन्दी सप्ताह के दौरान आयोजित किए जानेवाले कार्यक्रमों व प्रतियोगिताओं का विवरण दिया। इस दौरान पत्र लेखन, निबंध लेखन, टिप्पण लेखन, प्रश्नोत्तरी तथा तत्काल भाशण की प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। जिसमें कार्यालय के सभी कर्मचारियों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। हिन्दी सप्ताह का समापन समारोह दिनांक 20 सितम्बर 2016 को केन्द्र अध्यक्ष डा. अनिल आर चिंचमलातपुरे की अध्यक्षता में मुख्य अतिथि श्री एस.एल. मीणा ;भारतीय दूर संचार सेवा महाप्रबंधक, भारत संचार निगम लिमिटेड, भरुच की उपस्थिति में किया गया। कार्यक्रम का प्रारंभ दीप प्रज्वलन एवं परिषद गीत के साथ किया गया।

मुख्य अतिथि का स्वागत करने के बाद केन्द्र अध्यक्ष ने बताया कि हिन्दी को संविधान द्वारा 14 सितम्बर 1949 को राजभाषा के रूप में घोषित किया गया। हिन्दी भाषा की जानकारी दी एवं हिन्दी भाषा को आगे बढाने की बात कही एवं कार्यालय में किये जाने वाले कार्यों को हिन्दी में करके हिन्दी भाषा को बढावा देने पर जोर दिया। उन्होंने शोध पत्रों को हिन्दी भाषा में प्रकाशित करने पर जोर दिया ताकि महत्तम किसानों को नवीनतम तकनीकों की जानकारी आसानी से प्राप्त हो सके। इस अवसर पर सचिव द्वारा वैज्ञानिक कार्य एवं शोधपत्रों को हिन्दी में प्रकाशित करने पर जोर दिया एवं उनके द्वारा अनुरोध किया गया कि हिन्दी का प्रचार एवं प्रसार करें ताकि आनेवाले समय में हिन्दी पूरे विश्व में प्रथम स्थान पर पहुंच जाए। साथ ही में उन्होंने बताया कि हिन्दी के माध्यम से हमें ज्ञान को फैलाना चाहिए तथा हिन्दी भाषा का सम्मान करना चाहिए। समापन समारोह में हिन्दी का महत्त्व समझाया और बताया कि गांधीजी ने भी कहा है कि "हिन्दी जन मानस की भाषा है"।

मुख्य अतिथि श्री एस.एल. मीणा ने बताया कि हिन्दी हमारी राजभाषा है और इसका प्रयोग अधिक से अधिक करना चाहिए और हिन्दी भाषा बोलने पर हमें गर्व होना चाहिए। उन्होंने हमें आगे बढने के लिए मार्गदर्शन भी दिया और बताया कि किसी कार्य को करने से पहले लक्ष्य निर्धारित कर लेना चाहिए।

प्रतियोगिता	विजेताओं के नाम		
	प्रथम	द्वितीय	तृतीय
प्रश्नोत्तरी	अक्षय कुमार	अशोककुमार चौधरी	राम वैभव
पत्र लेखन	दक्षा वाघेला	प्रभुदास	प्रज्ञना के॰ पारेख
निबंध लेखन	बी॰जी॰ डामोर	बाबुभाई वाघेला	मुर्तुजाखान पठान
टिप्पण लेखन	रामाभाई वालंद	एफ॰ बी॰ मिर्जा	कनुभाई वाघेला
तत्काल भाषण	सी॰आर॰ ताविायाड	पंकज पाटिल	दिलीप वाघेला

इस अवसर पर भरुच के जाने माने पत्रकार एवं मिडिया, भरुच स्थित विभिन्न कार्यालयों जैसे जी.एन.एफ.सी., एन.सी.पी.एल., कृषि महाविद्यालयए बी.एस.एन.एल, केन्द्रीय जल आयोग, डी. जी.वी.सी.एल., एस.एस.एन.एन.एल आदि से भी अतिथि उपस्थित थे। उपस्थित आगंतुकों द्वारा भी हिन्दी के महत्त्व एवं उसकी उपयोगिता पर प्रकाश डालते हुए हिन्दी भाषा का उपयोग अधिक से अधिक करने पर जोर दिया।

किसान दिवस का आयोजन

क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, भरुच द्वारा दिनांक 26 अक्टूबर 2016 को केन्द्र के अनुसंधान फार्म समनी पर किसान दिवस मनाया गया। इस अवसर पर भरुच जिले के विभिन्न तालुका से लगभग 100 से अधिक किसान उपस्थित रहे। केन्द्र के वैज्ञानिकों द्वारा केन्द्र की गतिविधियों के बारे में विस्तृत जानकारी प्रदान की गई। केन्द्र अध्यक्ष डा॰ अनिल चिंचमलातपुरे ने किसान भाईयों को क्षारीय जमीन के व्यवस्थापन की विविध तकनीक के बारे में बताया व आग्रह किया कि किसान इन तकनिकों का अमल करके अधिक लाभ ले सकते हैं। इस अवसर पर उन्होंने जमीन चकासणी का महत्त्व समझाया व वर्ष में 3 बार जमीन चकासणी करवाने पर जोर दिया। क्षेत्रीय कपास अनुसंधान केन्द्र, भरुच के डा. राकेश पटेल ने गेहूँ व कपास की फसल में कीट नियंत्रण व उपाय के बारे में जानकारी दी। राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक के श्री संजीव अग्रवाल ने किसान सहायक समुह के अंतर्गत सरकारी लाभ के बारे में बताया। जिला कृषि अधिकारी श्री हरेश लालवाणी ने केन्द्र व राज्य सरकार द्वारा किसानों के लिये चलाई जा रही योजनाओं के बारे में बताया। आत्मा के निदेशक श्री बी॰एस॰ पंचाल ने कृषि संबंधित विविध सबसिडी के बारे में विस्तृत जानकारी प्रदान की। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि डा. महेन्द्र एम. पटेल, कार्यक्रम समन्वयक, कृषि विकास केन्द्र, चासवड ने मुख्य अतिथि के वक्तव्य में केन्द्र द्वारा चलायी जा रही विभिन्न तकनीकी प्रणाली की प्रशंसा की व आज के स्पर्धात्मक युग में किसान को परंपरागत खेत पद्धति के साथ–साथ आधुनिक वैज्ञानिक खेत पद्धति को अपनाने पर जोर दिया व मृदा स्वास्थ्य कार्ड, जैविक खेती व किसानों के प्रशिक्षण पर भी जोर दिया। कार्यक्रम में उपस्थित किसान भाईयों ने अपने अनुभव के बारे में बताया व समस्याओं का मंच पर उपस्थित विशय विशेषज्ञों द्वारा समाधान बताया गया। इस कार्यक्रम में 40 किसानों को संस्थान द्वारा विकसित गेहूँ की केआरएल 19, 210 व 213 के बीज का वितरण किया गया व मेरा गांव मेरा गौरव कार्यक्रम के अंतर्गत किसानों को बीज वितरित किया गया।

स्वच्छता पखवाड़ा

माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी के नेत्त्व में पूरे भारत वर्ष में 2 अक्टुबर 2014 से स्वच्छ भारत अभियान चलाया जा रहा है। जिसने एक क्रांति का रूप ले लिया है। इसी प्रयास को आगे बढ़ाते हुए परिषद के आदेशानुसार भरुच कार्यालय में दिनांक 16 से 31 सितम्बर 2016 तक स्वच्छता पखवाड़े का आयोजन किया गया। इस आयोजन का शुभारंभ दिनांक 17 सितम्बर 2016 को शपथ ग्रहण से हुआ जिसमें कार्यालय के सभी वैज्ञानिकों एवं कर्मचारियों ने स्वच्छता की शपथ ली। सभी ने सप्ताह में 2 घंटे सफाई के कार्य करने तथा कार्यालय एवं आस–पास के वातावरण को स्वच्छ रखने में अपना योगदान देने का प्रण लिया। सबने यह भी प्रण लिया कि मैं न गंदगी करूंगा न किसी को करने दूंगा। इस अवसर पर केन्द्र के अध्यक्ष डा. अनिल आर. चिन्चमलातपुरे ने स्वच्छता के महत्त्व पर प्रकाश डाला तथा पखवाड़े में होने वाले कार्यों के बारे में विस्तार से बताया। दिनांक 18.09.2016 को कार्यालय के सभी कर्मचारियों ने पुरे कार्यालय एवं आवासीय परिसर के चारों तरफ सफाई अभियान चलाया। साथ ही समनी फार्म के प्रभारी श्री चंपक तावियाड के नेतृत्व में समनी फार्म के कर्मचारियों द्वारा भी स्वच्छता अभियान चलाया गया। स्वच्छता पखवाड़े में विभिन्न कार्यक्रमों का आयोजन किया गया जिससे लोगों में सफाई के प्रति जागरूकता बढ़े।

समाप्त

रबी किसान मेला
किसान गोष्ठी
रबी
किसान मेला

विश्व मृदा दिवस

स्वच्छ भारत
एक कदम स्वच्छता की ओर

भाकृअनुप
ICAR

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

Agrisearch with a human touch